गांधी मार्ग

एक चिकित्सक के प्रयोग

डॉ. वीरेन्द्र सिंह

डॉ वीरेन्द्र सिंह जी ने **'गांधी मार्ग : एक चिकित्सक के प्रयोग'** के माध्यम से समय और समाज को ऐसा दस्तावेज सौंपा है जो लोगो को राहे इंसानियत पर चलने की प्रेरणा देता है। यह पुस्तक ऐसे समय सामने आई है जब चिकित्सा क्षेत्र में कार्यरत लोगों की कार्यशैली और पेशेवराना भूमिका को लेकर नकारात्मक बहस छिड़ी हुई है। इस किताब से डॉक्टर्स और नर्सिंग स्टाफ के प्रति सम्मान बढ़ेगा। यह पुस्तक उनके लिए एक सार्थक आह्वान है कि आओ, उन मूल्यों की ओर लौट चलें जिनके लिए मानवता उनका सम्मान करती है।

सूबे का सबसे बड़ा अस्पताल इसका केंद्र बिंदु है, जहाँ लोग बीमार होने के बाद इलाज के लिये आते हैं। लेखक ने एक डॉक्टर, गांधीवादी और प्रशासक के रूप में न केवल रोगी के इलाज बल्कि इसके साथ सामाजिक रुग्णता का भी उपचार करने का अनूठा कार्य किया है। किताब में दर्ज घटनायें गवाही देती हैं कि कैसे एक चिकित्सक गांधी के बताये मार्ग पर चलकर खिदमत का जज्बा पैदा कर सकता है। उनके अल्फाज में साफगोई ,सरलता और विनम्रता के दर्शन होते हैं। हर शब्द हर्फ़ेदुआ की तरह नमूदार हुआ है। इससे न केवल उनके प्रति, वरन उनकी इस प्रयोग यात्रा में हमराह सहयोगियों के प्रति भी मन श्रद्धा से भर जाता है।

यह किताब भारत के चिकित्सा केन्द्रों,डॉक्टर्स,नर्सिंग स्टाफ और समाज के लिए मीनार ए रोशनी है।

प्रोफेसर नारायण बारेठ
विभागाध्यक्ष, मीडिया स्टडीज
हरिदेव जोशी पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय, जयपुर

गांधी मार्ग

एक चिकित्सक के प्रयोग

डॉ. वीरेन्द्र सिंह

BHRPSS
पुस्तक सब के लिए

बाबा हिरदाराम पुस्तक सेवा समिति, जयपुर

गाँधी मार्ग–एक चिकित्सक के प्रयोग

अपने किस्म की एक अनूठी किताब

© **डॉ. वीरेन्द्र सिंह**

वेब संस्करण : 2015

मुद्रित संस्करण प्रकाशक :

बाबा हिरदाराम पुस्तक सेवा समिति

चौड़ा रास्ता, जयपुर

ई–मेल : bhrpss@gmail.com

वेब संस्करण प्रकाशक :

Flying Pen Publications

Vidhyadhar Nagar, Jaipur

Email: flyingpenpublications@gmail.com

ISBN - 978-81-929590-4-7

पुस्तक का कंपोजिंग कार्य कंप्यूटर द्वारा करवाया गया है। पुस्तक के लेखन वा प्रकाशन कार्य में लेखक, प्रकाशक, मुद्रक, ऑपरेटर तथा प्रूफ–रीडर द्वारा पूर्ण सावधानी बरती गयी है, फिर भी भूलवश ग़लती रहना, कमी रहना संभव है। इसके लिए लेखक, प्रकाशक, मुद्रक, ऑपरेटर तथा प्रूफ–रीडर उत्तरदायी नहीं होगा।

मूल्य : 50/– मात्र

समर्पित

श्रद्धेय माताजी श्रीमती पतासी देवी

एवं

श्रद्धेय पिताजी श्री रामेश्वर सिंह चौधरी

से.नि. आईएएस

आमुख

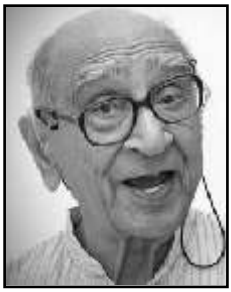

गांधी के चरित्र में पारस का गुण था। जिसे स्पर्श करें उसके अंतर में अवश्य ही कुछ प्रभाव पड़ता। डॉ. वीरेन्द्र सिंह की 'गांधी मार्ग: एक चिकित्सक के प्रयोग' इसी का एक अनूठा उदाहरण है। जयपुर की गांधी कथा के श्रवण ने उनके जीवन को एक रचनात्मक मोड़ दे दिया। जो भूमि पहले ही से उर्वरा थी उसे अमूल्य जल मिल गया।

गांधी का व्यक्तित्व बहुआयामी था। अनेकों को अलग–अलग प्रकार की प्रेरणा उससे मिल सकती थी। डॉ. वीरेन्द्र जी के जीवन पर गांधी के आंतरिक विकास के तीन सोपानों – आत्मनिरीक्षण, आत्मपरीक्षण एवं आत्मशोधन का विशेष प्रभाव पड़ा है – उसमें भी दोष शोधन के लिए प्रायश्चित्त का प्रभाव। उसका लाभ स्वयं उन्होंने उठाया और उनके सम्पर्क में आने वाले मित्रों, साथियों, कर्मचारियों, मरीज़ों के साथ मिलकर बाँटा। फलतः यह पुस्तक।

पुस्तक पर गांधी की सरल भाषा तथा शैली का भी असर पड़ा साफ़ नज़र आता है। उसे पढ़ने से लेखक के अपने सीधे सादे–चरित्र का प्रतिबिम्ब भी मिलता है। यद्यपि किसी कुशल संपादक के हाथ से यह ग्रंथ गुज़रता तो गांधी का एक और गुण पुनरावृत्ति भी इस किताब में दिखाई पड़ता है। हालांकि लेखक कई पुनरावृत्तियाँ टाल सकते थे। किन्तु शिक्षा शास्त्र में दोहराने को भी गुण माना गया है और धर्मशास्त्र में तो इस की महिमा भी मापी गई है।

आज–कल की दुनिया में दो प्रकार के मरीज़ पाये जाते हैं –एक तो अस्पताल तक पहुँच जाते हैं और दूसरे हैं जो अपने को स्वस्थ समझ कर भी भीतर से पीड़ित होते हैं। मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक के पाठ से दोनों प्रकार के पाठकों को लाभ होगा। बधाई।

नारायण देसाई

1.2015

सम्पूर्ण क्रांति विद्यालय, वेदछी, सूरत

लेखक परिचय

डॉ. वीरेन्द्र सिंह का जन्म सन् 1954 में झुंझुनू ज़िले के भोजासर गाँव में हुआ था। उनके पिताजी प्रशासनिक अधिकारी एवं माताजी गृहिणी थीं। नैतिक शिक्षा बचपन में माताजी से मिली। अपनी प्रारंभिक शिक्षा राजस्थान के विभिन्न स्थानों पर अधिकांशतः सरकारी स्कूलों में प्राप्त की। तत्पश्चात् 1971 में सवाई मानसिंह मेडिकल कॉलेज में एम.बी.बी.एस. में दाखिला लिया और चिकित्सक बने। अस्थमा एवं श्वास रोग में उन्होंने इंग्लैंड से प्रशिक्षण प्राप्त किया।

अस्थमा के क्षेत्र में डॉ. वीरेन्द्र सिंह के द्वारा किये गये अनुसंधान और आविष्कार देश में ही नहीं, विदेशों में भी काफ़ी चर्चित रहे। 'पिंक सिटी फ़्लोमीटर' बनाने के लिये 1988 में उन्हें देश में आविष्कार के क्षेत्र में नेशनल रिसर्च डवलपमेंट कॉरपोरेशन की ओर से 50,000/– रुपये का सर्वोच्च पुरस्कार दिया गया। इसके अलावा उन्हें चिकित्सा के क्षेत्र में बी.सी. रॉय जैसे राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिल चुके हैं।

अस्थमा और श्वास रोग के इलाज के लिये राजस्थान ही नहीं देश के विभिन्न स्थानों से लोग डॉ. वीरेन्द्र सिंह के पास आते हैं। स्वस्थापित चेरिटेबल सोसायटी 'इंडियन अस्थमा केयर सोसायटी' के माध्यम से उन्होंने तम्बाकू के विरुद्ध अभियान शुरू किया। सुप्रीम कोर्ट में सोसायटी की याचिका की परिणति गुटके पर प्रतिबन्ध के रूप में हुई। अस्थमा रोगियों को रोग के बारे में प्रशिक्षित करने के लिये उन्होंने विभिन्न कार्यक्रमों के अतिरिक्त, 'अस्थमा संजीवनी' पत्रिका का प्रकाशन किया। वर्तमान में वे श्वास रोगों की देश की अग्रणी पत्रिका 'लंग इंडिया' के प्रधान संपादक हैं।

2006 में नारायण भाई देसाई द्वारा गांधी कथा सुनने के बाद वे महात्मा गांधी के विचारों से बड़े प्रभावित हुए और उनके सिद्धान्तों को जीवन में परखने का निश्चय किया। छोटे–छोटे प्रयोगों के बाद बड़ा मौका तब मिला जब वे प्रदेश के सबसे बड़े अस्पताल सवाई मानसिंह चिकित्सालय के अधीक्षक बने। इस चिकित्सालय में लगभग 25 लाख रोगी एक वर्ष में आते हैं जो कि देश के किसी भी चिकित्सालय में आने वाले रोगियों की संख्या से अधिक हैं। इस चिकित्सालय के काम–काज को गांधी मार्ग के अनुसार चलाने की उन्होंने सार्थक कोशिश की।

बात से पहले की बात

दैनिक समस्याओं के समाधान के बहुत से तरीके होते हैं, गांधी मार्ग भी उनमें से एक तरीका हो सकता है। गांधी मार्ग का आधार है, सत्य। अब सवाल उठता है कि सत्य या सच्चाई क्या है? विचार, वाणी और व्यवहार की एकरूपता ही सत्य है। इन तीनों में जितनी भिन्नता आएगी, उतना ही सत्य से हम दूर हो जाएंगे। मूलतः मानव प्रवृत्ति सच्चाई को पसंद करती है। झूठे–से–झूठा व्यक्ति भी अपने को सच्चा इन्सान कहलाना पसंद करता है। मन से हर व्यक्ति सच्चा होता है। खोने का भय और कुछ पाने की लालसा व्यक्ति के विचार, कथन और व्यवहार में अन्तर पैदा कर देते हैं। इससे वह व्यक्ति सत्य से दूर चला जाता है।

बचपन से ही गांधीजी के बारे में सुना था कि वे एक महान् व्यक्ति थे, जिनकी भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में अहम भूमिका थी। लेकिन यह भी सुना था कि देश के बँटवारे का कारण भी उनकी सहमति थी। यह सदा एक अफ़वाह रही है। इसे तूल दिया गया है। बाद में समझ में आया कि गांधीजी ने हमेशा देश के बँटवारे का विरोध किया था। गांधीजी के बारे में मेरी समझ गांधी कथा के बाद ज़्यादा विकसित हुई।

महात्मा गांधी के सचिव महादेव देसाई के पुत्र नारायण भाई देसाई गांधी कथा में प्रवचन देने के लिए जून 2006 में जयपुर आये थे। सप्ताह भर चलने वाली इस कथा का आयोजन रामलीला मैदान में किया गया था। मैं अपने मित्र एवं भाई श्री धर्मवीर कटेवा के निजी आग्रह पर अपनी पत्नी सरिता के साथ वहाँ गया। प्रारंभ में हमने सोचा कि कुछ समय पश्चात् लौट आएँगे। लेकिन ज्यों ही उनका उद्‌बोधन शुरू हुआ तो इतना अच्छा लगा कि न केवल उस दिन बल्कि रोज़ाना शाम 3 घंटे क्लिनिक की छुट्‌टी कर इस कथा को हमने सुना। इस कथा के बाद मेरी गांधीजी के प्रति श्रद्धा और अधिक प्रबल हो गई तथा ज्ञात हुआ कि गांधीजी न केवल राजनीतिज्ञ थे अपितु समाज सुधारक के साथ साथ आध्यात्मिक एवं सात्विक वृत्तियों के पोषक थे। हज़ारों लोगों ने उनके मार्ग को सफलता से अपनाया।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जिस तरह से देश की आज़ादी के आंदोलन में गांधीजी का नेतृत्व मिला उसी तरह उनका नेतृत्व आज़ादी के बाद भी मिलता तो देश के नवनिर्माण की तस्वीर कुछ और ही होती लेकिन भगवान को शायद यह मंज़ूर नहीं था।

आधुनिक युग में गांधी मार्ग को कुछ लोग अति आदर्शवादी मानते हैं और वे

वास्तविक जीवन में इसकी उपयोगिता से इंकार करते हैं। अपने अनुभव से मैं यह कहना चाहूँगा कि गांधीजी के बताये मार्ग पर चलने से सरल कुछ भी नहीं है। सत्य पर चलने का मार्ग गांधीजी का मार्ग है और स्वभाव से मनुष्य सच्चा है। कठिन तो असत्य के मार्ग पर चलना है क्योंकि वह मानव स्वभाव के विपरीत है।

बचपन से मैं आदर्शवाद की ओर आकर्षित होता रहा हूँ लेकिन मेरी प्रवृत्ति गांधी मार्ग के अनुरूप है, यह ज्ञान मुझे गांधी कथा में जाकर ही हुआ। इसलिए गांधी कथा के बाद मैंने गांधी मार्ग को अपने आचरण में उतारने का फ़ैसला लिया।

इस कथा से मुझे अपने पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा मिली। इस युग में अधिकांश लोगों की दिनचर्या प्यार, पैसा और प्रतिष्ठा के इर्द– गिर्द घूमती है और इनको पाने के लिए लोग अपने बुद्धि, बल और साधनों का सहारा लेते हैं।

एस.एम.एस. मेडिकल कॉलेज, जयपुर में विभिन्न पदों पर कार्य करते हुए पिछले कुछ वर्षों में किये गये प्रयोगों के बाद, आज मेरा दृढ़ विश्वास है कि चिन्तामुक्त जीवन एवं परिवार में अनुशासन लाने के लिए गांधी मार्ग एक अच्छा उपाय है। मैंने इसी के कुछ प्रयोग अपनी दिनचर्या में किए जिन्हें इस पुस्तक के माध्यम से आप तक पहुँचा रहा हूँ। इस पुस्तक में दिए गये दृष्टांत सत्य हैं। लेकिन कहीं–कहीं पात्रों के नाम ज़रूर बदले हुए हैं।

गांधी मार्ग के दैनिक जीवन में किये गये प्रयोगों से मिली सफलता से एक अनूठा संतोष प्राप्त हुआ। इसके परिणाम स्वरूप स्वयं मुझ में तथा दूसरों में आए बदलावों ने मेरे विश्वास को निरंतर बल प्रदान किया है।

जब इस प्रकार गांधी मार्ग के प्रयोगों में सफलता मिली तब एक दिन मन में विचार आया, 'अरे, मैं भी गांधी जैसा बन रहा हूँ!' लेकिन थोड़ा सा चिंतन किया तो पाया कि यह विचार अहंकार मात्र था। गांधीजी ने काम, क्रोध, मोह, अहंकार और लोभ जैसे शत्रुओं को वश में कर रखा था, जबकि मैं अब भी उनमें लिप्त हूँ।

श्री भगवान अटलानी ने विचार को पुस्तक में परिवर्तित करने में अमूल्य सहयोग दिया। मेरी धर्मपत्नी सरिता का हर कदम पर नैतिक सहयोग रहा, जिससे यह कार्य संपन्न हो पाया।

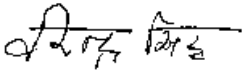

– डॉ. वीरेन्द्र सिंह

अनुक्रमणिका

1	गांधी कथा – एक नया मोड़ धन के प्रयोग में पाई सीख	13
2	ग़लती सुधारने का अचूक उपाय प्रायश्चित्त	15
	(1) मेरा प्रायश्चित	16
	(2) चिकित्सक को हुआ भूल का अहसा	17
	(3) रक्तदान के साथ जागी संवेदना, बही अश्रू धारा	18
	(4) दस्तावेजो के पेंच में उलझे रोगी	18
	(5) प्रायश्चित से दोहरा लाभ	20
	(6) प्रायश्चित भी और सेवा भी	20
	(7) मित्र के पुत्र ने किया प्रायश्चित	21
	(8) लापरवाह ट्रॉली चालक की ग्लानि	21
	(9) क्लर्क को भाया प्रायश्चित	22
	(10) छोटे काम में झिझक	22
	(11) रोगी के लिये चिकित्सक का रक्तदान	23
	(12) मेरा सच, तेरा सच	23
	(13) प्रायश्चित से निकला कठिनाई का हल	25
	(14) गार्ड और रजिडेन्ट डॉक्टर के बीच कहा सुनी	25
	(15) मेडिकेयर रिलीफ सोसाइटी स्टाफ की लेट	25
3	लावारिस रोगी : कैसे हो इलाज?	27
	(1) लावारिस में देखी मां की तस्वीर	28
	(2) सेवा का अविस्मरणीय अनुभव	29
	(3) प्रायश्चित के बतौर 'सेवा' में ड्यूटी सजा बनी इनाम	29
	(4) सेवा के नोडल अधिकारी ने छोड़ी सिगरेट?	30
4	हिंसक घटनाएँ : अहिंसक समाधान	33
	(1) छूटा अहम, निकला रक्तदान का डर	33
	(2) कैसे टला वर्ग संघर्ष	35
	(3) विफलता में छिपी सफलता	36
	(4) हड़ताल टली, शराब छूटी	38
	(5) लड़ाकू नेता: अहिंसा से हारी हिंसा	39
	(6) परिजनो से नोक झोंक: रोगी संवाद से समाधान	39
	(7) हिंसक परिजनों ने दी सेवा में ड्यूटी	40
5	लेने से ज़्यादा देने की खुशी	43
	(1) प्रलोभन देने का रास्ता त्याग मदद में जुटा अधिकारी	43
	(2) सेवा अपनों की या लाचार की, ज्यादा खुशी किसमें?	44

(3) दूसरों की मदद करके किया अपना इलाज 45
(4) प्रायश्चित में सीखा पैसे से खुशी खरीदना 45
(5) परोपकार कल नहीं, आज ही 47
(6) कमीशन लेता कम्पाउण्डर 47
6 शराब जनित घटनाएँ : समाधान 49
(1) माफी ने बदला इन्सान 49
(2) प्रायश्चित ने किया, झगड़े का इलाज 50
(3) आत्मदाह की धमकी देने वाला बना नेक चिकित्सक 52
(4) शराब छोड़ने से बदली छवि 53
7 हड़ताल का इलाज सत्याग्रह 55
(1) ठेका कर्मचारियों की हड़ताल का जनता ने किया इलाज 55
(2) वेदना से उपजी संवेदना 58
(3) अनुभव एक स्वयंसेवक का 59
8 समय की पाबंदी :एक सीख जहर से जहर का इलाज 61
9 आलोचक को मित्र बनाना 63
(1) आलोचक वकील ने देखा डॉक्टर में भगवान 63
(2) कैसे जानी पीर पराई? 64
(3) नये मंत्री, नई शैली मगर अस्पताल हित सर्वोपरि 65
(4) चिकित्सक ने पढ़ा इलाज का पाठ 67
(5) अपनी गलती बड़ी, दूसरे की गलती छोटी 67
10 क़ीमत एक बोतल खून की 69
11 निडरता : डर के आगे जीत है 71
(1) अनजान की जान के लिए लगाया 1.5 लाख रुपये का दांव 71
(2) सत्य की राह पर निड़रता 72
(3) शराब बंदी को पूर्ण समर्थन 73
12 अस्पताल हित सर्वोपरि 75
(1) उपेक्षा से उपजी कुण्ठा का निदान 75
(2) राजनीति का शिकार मेहनती बाबू 76
(3) चिकित्सकों का तबादला: अस्पताल हित और आार या पार 77
(4) अस्पताल हित सर्वोपरि तो मदद मिली भरपूर 78
13 क्रियाशील ईमानदारी 81
(1) जो सुख देने में है, वह लेने में नहीं 81
(2) जरूरतमंद रोगियों की मदद (निर्धन की क्या पहचान?) 82
(3) एक तराजू में मित्र दूसरे में मरीज 82

(4) अस्थमा रोगी: इलाज का प्रशिक्षण 83
14 समस्या का समाधानः गांधी मार्ग 85
लाइलाज समस्याओं का समाधान 86
(1) कैसे छूटी काम न करने की आदत 86
(2) अस्पताल कर्मी और नि:शुल्क जाँच 86
(3) मेडिकेयर रिलीफ सोसाइटी में बकाया पैसे के लिए भटकते रोगी 87
(4) लैब की रिपोर्ट ऑनलाइन 87
(5) रक्त की कमी बदली बहुतायत में 88
(6) नई टेक्नोलोजी ओर पुराने कर्मचारी 88
(7) आपात्कालीन इलाज में सुधार 89
(8) मूलभूत सुविधाओं के लिए जुझता अस्पताल 90
(9) बिना यूनिफॉर्म टैक्नीशियल 91
(10) लापरवाह से बना जिम्मेदार 91
(11) गम्भीर रोगियों की तुरन्त जाँच व्यवस्था 91
(12) अस्पताल में भूल–भूलैया 92
(13) कबाड से भरा अस्पताल 92
(14) अनारकली का मकबरा 92
(15) रोगी इलाज एवं परामर्श: कम्प्यूटर टेक्नोलोजी से बढ़ी कार्यमक्षता 93
(16) तम्बाकू पीक से रंगी दीवारें 95
(17) अस्पताल में रात्रि सेवा की मॉनीटरिंग 95
(18) यदि अनुशासन चाहिये तो शुरूआत स्वयं से करें 96
(19) अच्छे काम के लिए शाबासी 96
(20) बड़ाई तुम रखो, बुराई हमें दो 97
(21) खत्म हुआ शिलान्यास का इन्तजार 97
(22) उद्घाटन पट्टिका 98
(23) मेडिकल कॉलेज में रिसर्च का स्तर 98
(24) छोटा–बड़ा नहीं, सभी काम बराबर 99
(25) काम टालने की लत कैसे छूटी 100
15 राजनीति एवं देशभक्ति 103
(अ) चुनाव क्यों लड़ा 103
(ब) चुनाव के समय की कुछ घटनायें 104
(1) चुनाव रैली 104
(2) अवसर बनाम सिद्धान्त 104

(3) चुनाव प्रचार और वोटों की खरीद फरोख्त 104
(4) किराये पर कार्यकता 105
(5) प्रचार के दौरान तम्बाकू और शराब मुक्त रहने की प्रतिज्ञा 105
(6) हार के बाद 106
16 इंसान या शैतानः सिक्के के दो पहलू 107
(1) बुरी आदत में फंसा मेधावी छात्र 107
(2) नाकारे से सेवा का पर्याय बना बलदेव 108
(3) तथाकथित 'निकम्मा' बना,कर्मठ कर्मचारी 109
17 परिवार और मित्रों की घटनाएँ 111
(1) क्रोध नहीं करने की सीख 111
(2) मित्र की नाराजगी कैसे करूं दूर 111
(3) जो सोचते है वह बनते है 112
(4) कैसे भरे मन के घाव? 112
(5) आदर्शवाद से समझौता 113
(6) पैतृक सम्पत्ति में हिस्सा नहीं 113
(7) दो बेटियां 114
(8) यन्त्रों का आविष्कार एवं साथियों की प्रतिक्रियाएं 115
(9) किसी की भूल से मिला रुपया: मेरा नहीं 116
18 निराशा में आशा 117
(1) हताश स्थिति में सफलता 117
(2) विपरीत स्थिति को अपने अनुकूल ढालना 118
(3) तम्बाकू के विरूद्ध हमारा नमक आंदोलन 119
19 अस्थमा भवन में गांधी मार्ग 121
20 गांधी मार्ग के अपवाद 123
(1) लापरवाह कैसे 123
(2) दवा की दुकान के लपके 124
(3) साथी का सिगरेट प्रेम 125
(4) वादे के अनुसार प्रायश्चित नहीं करना 125
(5) चोरी की घटना 125
21 यह समापन नहीं है 127
22 आपका भी आभार 129

1

गांधी कथा–एक नया मोड़

नारायण भाई देसाई द्वारा सुनाई गई गांधी कथा को सुन कर मुझे ऐसा लगा कि इसका उपयोग समाज सुधार के लिए हो सकता है। गांधी कथा की वीडियो रिकॉर्डिंग धर्मवीर कटेवा ने करवाई थी। इसी के आधार पर मैंने एक स्लाईड शो तैयार किया। निश्चय किया कि महीने में एक बार स्कूल के बच्चों को यह कार्यक्रम दिखा कर उनमें अच्छा इन्सान बनने की प्रेरणा भरी जाए। अस्थमा भवन योग केंद्र से जुड़े श्री प्रदीप शर्मा ने इसके संयोजन का काम संभाला और कार्यक्रम का नाम रखा 'सात्विकताः एक पहल'। महीने में एक बार यह कार्यक्रम अस्थमा भवन में वर्षों से आयोजित होता आ रहा है। इस कार्यक्रम में शुरूआत की स्लाईड में एक लड़के की कहानी बताई जाती है। वह लड़का छठी कक्षा में 48 में से 47वें स्थान पर रहा, बोर्ड की परीक्षा में फ़ेल हो गया और तो और वह पिता के पैसे चुरा कर बीड़ी भी पीता था। अगली स्लाईड में श्रोताओं के लिए प्रश्न होता है, 'क्या आप अपने को इस छात्र से अच्छा समझते हैं या बुरा?' आगे मैं पूछता था कि जो छात्र अपने को अच्छा समझते हैं, हाथ खड़ा करें।

हर बार लगभग सभी छात्र हाथ खड़ा कर बताते हैं कि इस कहानी वाले लड़के से वे अच्छे हैं। तब अगली स्लाईड में उन्हें बताया जाता कि वह लड़का कोई और नहीं महात्मा गांधी थे। इसके बाद मैं छात्रों को बताता हूँ कि आप सभी बालक, गांधी से अच्छे हैं तो जब इतने बुरे से वह लड़का महात्मा गांधी बन सकता है तो आप सभी छात्र जीवन में गांधीजी से भी ज़्यादा अच्छे क्यों नहीं बन सकते हैं? आओ देखें, कैसे एक बुरा लड़का महात्मा गांधी बना और इन्हीं बातों को अपना कर आप गांधीजी से भी ज़्यादा सफल बन सकते हैं।

लक्ष्य निर्धारण, आत्मनिरीक्षण, गलती दोबारा नहीं होने देने का तरीका, अन्याय के प्रतिरोध का हथियार सत्याग्रह जैसी बातों पर छात्रों के साथ चिंतन किया जाता है।

करीब एक घंटे के कार्यक्रम उपरांत छात्रों को खुशी पाने में धन की उपयोगिता का मूल्यांकन करने हेतु एक प्रयोग दिया जाता है। प्रयोग में भाग लेने वाले छात्रों को सौ रुपए दिए जाते हैं, जिनमें से 50 रुपये स्वयं पर तथा 50 रुपये किसी अनजान ज़रूरतमंद व्यक्ति पर खर्च करने होते हैं। स्वयं पर या फिर किसी की मदद में ज़्यादा ख़ुशी किस में मिली–यह अनुभव छात्र पोस्टकार्ड में लिखकर भेजते हैं। छात्रों के बड़े अच्छे– अच्छे ख़त हमें मिले। इसी क्रम में मिले एक ख़त का दृष्टांत यहाँ दे रहा हूँ।

धन के प्रयोग से मिली सीख

मैं जीवन में 'काम अपना बनता, भाड़ में जाये जनता' के कथन पर ही चलता था। जब इस प्रोजेक्ट के लिए पैसे लिये तब भी मेरे दिमाग में यही था कि सौ रुपये मिल गए, मौज करूँगा। स्कूल से घर जाते समय रास्ते में एक गाय लंगड़ाते हुए चल रही थी। उसके एक पाँव से ख़ून बह रहा था। अचानक मुझे सूझा कि क्यों न प्रयोग किया जाये। गाय मेरे घर की गली में ही थी और पास ही एक दुकान थी। मैं दुकान पर गया और मरहम–पट्टी का सामान खरीदा। दुकानदार परिचित थे। उन्होंने पूछा, ''किसको चोट लगी?'' तब मैंने बताया कि गली में खड़ी एक घायल गाय की पट्टी करनी है। उन्होंने सामान दे दिया। जब मैंने पैसे पूछे तो कहा, ''ले जाओ, पैसे नहीं लूँगा।'' मैं विस्मित था और चकित भी। इससे पहले दर्जनों बार सामान खरीदते समय, जब भी मैं मोल–भाव करता तो 1–2 रुपये कम करवाने में भी बहुत ज़ोर आता था। ऐसे दुकानदार ने पैसे नहीं लेने की बात कही। मैंने ज़बरदस्ती उन्हें 20 रुपये दिये। इसके बाद जब गाय की पट्टी करने लगा तो क्या देखता हूँ कि रास्ते चलते 3–4 लोग मेरी मदद को आगे आ गए। मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ, क्योंकि मैं मानता था कि कोई किसी की मदद नहीं करता है। अब मैं मानता हूँ कि मदद करने में न केवल ज़्यादा खुशी मिलती है बल्कि लोग भी आपकी मदद करते हैं।

इस प्रयोग के प्रभाव

पिछले 6 वर्षों से महीने में एक बार स्कूल के बच्चों के लिये यह कार्यक्रम आयोजित किया जाता है। अधिकतर यह अस्थमा भवन या यदा–कदा स्कूलों में जाकर आयोजित होता है। आलोक शर्मा जैसे बहुत से बच्चों द्वारा किये गए प्रयोगों के परिणाम दर्शाने वाली चिट्ठियाँ आती हैं, जिनसे कार्यक्रम की उपयोगिता का आभास होता है। एक ग्राम अच्छी बात जीवन में अपनाना एक क्रिंटल उपदेश से ज़्यादा उपयोगी है। गांधीजी की इसी मान्यता के आधार पर छात्रों के लिए धन के सदुपयोग का पाठ जीवन में उतारने की दिशा में किया गया यह एक प्रयास है।

■ ■ ■

2

ग़लती सुधारने का अचूक उपाय प्रायश्चित्त

हर व्यक्ति कार्य के दौरान ग़लती करता है। कुछ ग़लतियाँ अनायास हो जाती हैं तो कुछ जानबूझ कर की जाती हैं। जानबूझ कर की गई ग़लतियों का कारण या तो कोई स्वार्थ होता है या किसी बात का भय। घर या कार्यालय में सफलता मिलना इस बात पर निर्भर करता है कि आप अपनी और अपने बच्चों एवं अधीन काम कर रहे सहकर्मियों की ग़लतियों को किस प्रकार से ठीक करते हैं। प्रमुख तौर पर एक आम व्यक्ति घर या कार्यालय में या तो ग़लती को नज़रअंदाज़ करता है या उसका दंड देता है। ग़लती नज़र अंदाज़ करने से घर और कार्यालय की शांति तो बनी रहती है, लेकिन अनुशासनहीनता बढ़ती है और कार्यक्षमता कम हो जाती है। ग़लती करने पर दंड एक प्रभावी उपाय है और निजी क्षेत्रों में इसका प्रयोग सही प्रकार से होता भी है।

कुछ वर्षों पहले तक घर में भी दंड एक प्रभावी तरीका था लेकिन अब इसका उपयोग बहुत कम हो गया है। सरकारी तंत्र में दंड का प्रभावी उपयोग नहीं हो पाता है। जहाँ बहुत से कार्य दबाव एवं स्वार्थ के साथ किए जाते हों, वहाँ एक ही प्रकार की ग़लती के लिए एक को सज़ा और दूसरे को माफ़ी मिलती है। ऐसे में सज़ा पाने वाले व्यक्ति के मन में सज़ा देने वाले अधिकारी के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार की स्थिति में घर और कार्यालय में मुखिया के दिमाग़ में एक ही प्रश्न कौंधता है, ग़लती से कैसे निपटें जिससे अनुशासन बना रहे और कार्यक्षमता में भी सुधार हो। ग़लती पकड़े जाने पर ग़लती करने वाले से चर्चा अवश्य करनी चाहिए। संभव है, चर्चा मात्र से ग़लती करने वाला परिष्कार कर ले। इस प्रश्न का समाधान गांधीजी की जीवनी में एक दृष्टांत से मिलता है।

गांधीजी जब 13 साल की उम्र के थे तो उन्होंने अपने दोस्तों को एक पार्टी दी, लेकिन एक को आमंत्रित करना भूल गए। अगले दिन आमंत्रण से छूट गये उनके दोस्त

ने यह शिकायत गांधीजी से की। गांधीजी ने अपनी इस भूल को एक बड़ी ग़लती माना और उनके मन में ग्लानि हुई। इस प्रकार की घटना की पुनरावृत्ति रोकने के लिए उन्होंने 3 महीनों के लिए अपना सबसे चहेता फल आम न खाने का संकल्प लेकर प्रायश्चित्त किया।

गांधीजी ने अपने जीवन में ग़लतियाँ तो कीं परन्तु उन्हें कभी दोहराया नहीं। एक ग़लती एक बार ही की। उस गलती को उन्होंने दुबारा नहीं किया। वे हर ग़लती पर चिंतन कर उसे दुबारा नहीं करने का तरीका अपनाते थे। इस तरीके का एक आयाम था – 'प्रायश्चित्त' ।

एस.एम.एस. अस्पताल में अधीक्षक पद पर रहते हुए मैंने गांधी मार्ग के प्रायश्चित्त का उपयोग अपनी एवं अपने सहकर्मियों की ग़लतियाँ सुधारने में किया। इसी के कुछ प्रयोग यहाँ दिये जा रहे हैं। प्रत्येक प्रयोग तीन चरणों में किया गया। **पहले चरण में ग़लती करने वाला स्वीकार करता था कि ग़लती हुई और ग़लती से हुई ग्लानि को महसूस करता था। दूसरे चरण में दुबारा ग़लती नहीं करने का संकल्प करता था और तीसरे चरण में प्रायश्चित्त करता था।** मेरे सहयोगी रहे डॉ. अजीत सिंह और डॉ. नरेन्द्र सिंह प्रायश्चित्त स्वरूप किए जाने वाले कामों की समीक्षा करते थे और कठिनाई आने पर ग़लती के लिए प्रायश्चित्त करने वाले व्यक्ति का मार्गदर्शन भी करते थे।

1. मेरा प्रायश्चित्त

लंबे समय से मैंने अपने आस–पास विभिन्न परिस्थितियों में प्रायश्चित्त प्रयोग करने की कोशिश जारी रखी है एवं इसी को अपने आप पर भी आज़माया है। मैं अपनी पत्नी के साथ एक बार अपने दोस्त डॉ. सन्दीप निझावन की बेटी की शादी में भाग लेने गया। बारात आने में देर हो गई थी इसलिए वरमाला में भी देरी हुई। मेरी पत्नी सरिता वरमाला तक रुकना चाहती थी। परतु क्योंकि रात्रि के 11:30 बज चुके थे और मेरे एक मित्र डॉ. निर्मल जैन भी हमारे साथ थे, इसलिए मैं जल्दी घर लौटना चाहता था। मेरा मन देखकर पत्नी मेरे साथ घर लौट आई। घर वापसी पर सरिता मुझे कुछ दु:खी दिखाई दी। वरमाला एक नये तरीके से आयोजित की गई थी और सरिता की हार्दिक इच्छा थी, उसको देखने की। मुझे अपनी ग़लती का एहसास हुआ और पत्नी के प्रति अपनी संवेदनहीनता पर आत्मग्लानि हुई। प्रायश्चित्त स्वरूप मैंने एक महीने के लिए अपनी पसंदीदा आइसक्रीम नहीं खाने का निर्णय लिया।

प्रयोग का प्रभाव

इस प्रायश्चित्त से मुझे अपनी पत्नी की इच्छाओं के प्रति अधिक संवेदनशील बनने की प्रेरणा मिली। इसके उपरांत किये गये परीक्षणों से मैंने प्रायश्चित्त को परिवार सहित जीवन के विभिन्न पहलुओं में उपयोगी पाया है। प्रायश्चित्त न केवल कार्यालय की ग़लतियों बल्कि व्यक्तिगत और परिवार की ग़लतियों से उबरने का भी एक कारगर तरीका है।

2. चिकित्सक को हुआ भूल का अहसास

अस्पताल में इमरजेंसी बहुत महत्वपूर्ण विभाग है। वहाँ रेज़िडेंट्स एवं मेडिकल आफ़िसर्स के अलावा सहायक प्रोफ़ेसर स्तर के सीनियर डॉक्टरों की ड्यूटी भी रहती है। अक्सर सीनियर डॉक्टर ड्यूटी पर नहीं रहते थे। अस्पताल के अधीक्षक के तौर पर मैंने इस व्यवस्था को पुख़्ता बनाने हेतु एक बिंदुवार ड्यूटी रिपोर्ट का फ़ॉर्म बनाया। समय-समय पर ड्यूटी की जाँच भी की जाने लगी।

रात्रि पारी में एक सहायक प्रोफ़ेसर ड्यूटी पर नहीं आए। वे नेत्र विभाग के थे। बुलाने पर उन्होंने बताया कि ऑपरेशन थियेटर में लेट हो गये। ''लेकिन इमरजेंसी ड्यूटी का अपना महत्व है,'' मैंने कहा। ''ग़लती हो गई सर, आगे ऐसा नहीं होगा,'' वे बोले।

मैंने पूछा, ''ग़लती का प्रायश्चित्त क्या करोगे?'' ''कैसा प्रायश्चित्त, मैं समझा नहीं, सर।'' तब गांधीजी के प्रायश्चित्त वाली बात उन्हें समझाई। दोस्त को भूलवश नहीं बुलाने पर तीन महीनों तक अपने सबसे प्रिय फल आम नहीं खाने की घटना जब मैं उन डॉ. साहब को बता रहा था तब उनके चेहरे पर ग्लानि के भाव प्रकट होने लगे।

मैंने उनसे पूछा, ''सबसे अच्छी चीज़ आपको क्या लगती है?''

''सर, शाम को दोस्तों के साथ ड्रिंक्स लेना।''

''ग़लती का प्रायश्चित्त करने के लिए क्या आप कुछ समय के लिये अपनी सबसे प्रिय ड्रिंक्स छोड़ सकते हो?''

''ज़रूर सर, मैं 3 महीनों के लिए छोड़ देता हूँ।''

वह दिन 30 सितम्बर 2013 था। उन्होंने मुझे एस.एम.एस. किया कि 30 दिसम्बर 13 तक वे ड्रिंक्स नहीं लेंगे।

करीब 15 दिन बाद यूरोलॉजी विभाग के सहायक प्रोफेसर भी इमरजेंसी ड्यूटी पर नहीं आए। उनका जवाब भी ऑपरेशन थियेटर से देर से फ्री होने का था। उन्होंने विश्वास दिलाया कि यह उनकी पहली और आख़िरी ग़लती है। वे ऐसी ग़लती फिर कभी नहीं करेंगे। प्रायश्चित्त स्वरूप उन्होंने 3 महीने अपनी सबसे प्रिय मिठाई गुलाबजामुन नहीं खाने का वादा किया।

कुछ दिनों बाद एक दिन अस्पताल के कॉरिडोर में मुझे देख वे लपक कर आए। बड़े जोश से कहा, ''सर, प्रायश्चित्त के वचन के अनुसार दो महीने हो गए, मैंने गुलाबजामुन नहीं खाया। अब मेरे प्रायश्चित्त में सिर्फ़ एक महीना बचा है, इसके बाद मैं गुलाबजामुन खा सकूँगा। अब मैं ड्यूटी पाबन्दी से करता हूँ।'' मैं उनके चेहरे की ओर एकदम विस्मित भाव से देखता रह गया। विचार कौंधा कि क्या दंड से कार्य के प्रति इतनी प्रतिबद्धता लाई जा सकती है?

इस प्रयोग के प्रभाव

ग़लती के समाधान का सरकारी तरीक़ा है, स्पष्टीकरण पत्र के माध्यम से चेतावनी देना। लेकिन इससे उपर्युक्त इमरजेंसी प्रकरणों में दोनों ही चिकित्सकों में

सुधार की थोड़ी बहुत ही गुंजाइश थी। गांधी मार्ग की चर्चा से एक ओर जहाँ उन्हें ग़लती करने की ग्लानि हुई, दूसरी ओर प्रायश्चित्त के द्वारा ड्यूटी की प्रतिबद्धता में सुधार हुआ। इसके साथ अपनी सबसे प्रिय वस्तु कुछ समय छोड़ने से उस ग़लती को नहीं करने की संकल्प शक्ति मज़बूत हुई। यह वास्तव में अभिनव प्रयोग था।

3. रक्तदान के साथ जागी संवेदना, बही अश्रुधारा

कार्डियो–न्यूरो इमरजेंसी के एक कंपाउंडर ड्यूटी पर नहीं आए। जब कारण पूछा तो, उन्होंने माफ़ी माँग कर ग़लती दोबारा नहीं दोहराने की बात कही। प्रायश्चित्त की बात पर उन्होंने रक्तदान की इच्छा प्रकट की। इस प्रकार का प्रायश्चित्त करवाने की ज़िम्मेदारी डॉ. अजीत सिंह की थी। डॉ. अजीत सिंह ने खोज की तो पता लगा कि 1 ए बी वॉर्ड के बेड नं. 8 पर एक बूढ़े बाबा हैं, जिनको रक्त की ज़रूरत थी लेकिन उनके परिवार में कोई रक्त दान करने वाला नहीं था।

डॉ. अजीत सिंह प्रायश्चित्त हेतु कंपाउंडर श्री दिनेश अग्रवाल को उस रोगी के पास ले कर गए। उन्होंने परिचय करवाते हुए रोगी से कहा कि यह कंपाउंडर अपना रक्त देकर आपकी मदद करना चाहते हैं।

बाबा बिस्तर में घुटनों के बल बैठ गए। दोनों हाथ जोड़, चेहरे पर कृतज्ञता के पूरे भाव लाकर कहा, ''बाऊजी आप भगवान हैं, मैं आपका अहसान कभी नहीं चुका पाऊँगा। ''फिर अपने कृशकाय हाथों से एक थैली जो पास के स्टूल पर पड़ी थी, उठाई और कहा,'' मैं आपको कुछ नहीं दे सकता लेकिन यह बर्फ़ी का टुकड़ा लीजिए।'' इस कृतज्ञता के दृश्य से हतप्रभ श्री दिनेश ने बाबा के काँपते हाथों से बर्फ़ी का टुकड़ा ले अपने मुँह में रख लिया। डॉ. अजीत सिंह ने देखा कि श्री दिनेश भावविह्वल हो उठे थे और उनकी आँखों से अश्रुधारा बहने लगी थी।

इस प्रयोग के प्रभाव

गांधीजी की प्रायश्चित्त वाली बात का अक्सर ग़लती करने वाले पर प्रभाव पड़ता था और उसे अपनी ग़लती की ग्लानि होने लगती थी। श्री दिनेश अग्रवाल को इतनी ग्लानि हुई कि उन्होंने प्रायश्चित्त में रक्तदान देने का निर्णय लिया। श्री दिनेश ने पहले भी अपनों के लिए रक्तदान किया था लेकिन अनजान व्यक्ति से मिलकर जब उन्होंने रक्तदान किया तो पाया कि इस बार उन्हें पहले से कई गुना अधिक ख़ुशी मिली। अनजान ज़रूरतमंद की मदद से मिली ख़ुशी ने उन्हें रोगियों एवं अपनी ड्यूटी के प्रति ज़्यादा संवेदनशील बना दिया।

4. दस्तावेज़ों के पेच में उलझे रोगी

एक बार एक व्यक्ति मेरे ऑफिस आया और बताया कि उसे बी.पी.एल. के दस्तावेज़ लाने के लिए दो बार गाँव जाना पड़ा। बी.पी.एल. सेक्शन के लोग उसे एक बार में सारे दस्तावेज़ मँगाने के बजाय हर बार एक नया दस्तावेज़ लाने के लिए कह देते थे। आज फिर एक नये दस्तावेज़ की माँग कर दी है। मैंने बी.पी.एल. सेक्शन के इंचार्ज

डंगायच जी को बुलाया और पूछा कि उन्होंने पहली बार में ही सारे दस्तावेज़ क्यों नहीं माँगे? चेहरे पर कठोरता और थोड़ी खीझ के अंदाज़ में वे बोले, ''सर बता दिए थे, वह रोगी भूल गया होगा।'' फिर बोले, ''सर, आजकल हमारे सेक्शन में काम का बोझ बहुत बढ़ गया है इसलिए सबको बता भी नहीं पाते।'' उनके लहजे से स्पष्ट था कि लापरवाही हुई है। मैंने कहा, ''यदि आप इसको दस्तावेज़ों की सूची लिखित में दे देते तो यह व्यक्ति 200 कि.मी. दूर गाँव दो बार जाने की तकलीफ़ से बच सकता था।''

''ग़लती हो गई सर,'' उस व्यक्ति को उनके व्यवहार से हुई तकलीफ़ महसूस करते हुये बोले डंगायच जी। मैंने कहा, ''ज़रूरी काग़ज़ों का विवरण टाइप करवा कर रख लीजिए। भविष्य में हर व्यक्ति को वह लिखित काग़ज़ दें। दूसरी बात, इस ग़लती का प्रायश्चित्त क्या करेंगे?'' वे बोले, ''जो भी आप कहें।''

उन दिनों हमने लावारिस रोगियों की मदद के लिए 'सेवा' कार्यक्रम की शुरूआत की थी। मैंने कहा, ''दो घंटे 'सेवा' में लावारिस रोगी का परिजन बन सेवा कर सकेंगे आप?'' ''अवश्य,'' डंगायच जी ने कहा।

'सेवा' के नोडल ऑफ़िसर डॉ. नरेन्द्र सिंह ने डंगायच जी को छुट्टी के दिन एक लावारिस रोगी की सेवा का काम दिया। डंगायच जी जब सेवा करने पहुँचे तो वह रोगी प्यासा था। उन्होंने उस रोगी को पानी पिलाया और बिस्किट भी खिलाए। सेवा करते समय डंगायच जी के चेहरे पर आत्मीय भाव था।

उस रोगी ने डंगायच जी को बताया, वह बहुत ही दुःखी इंसान है। शराब की लत लग जाने से पत्नी उसे छोड़ गई। माँ–बाप की मृत्यु के बाद वह नितांत अकेला है। डंगायच जी ने उसे ढाँढस बँधाया और आगे भी आकर मदद करने का भरोसा दिलाया।

'सेवा' के अपने अनुभव बताते हुये डंगायच जी ने बताया कि एक नई–सी ख़ुशी मिली। मैंने उन्हें बताया, ''ऐसी ख़ुशी आपको रोज़ाना मिल सकती है।'' ''कैसे सर?'' उन्होंने पूछा। यदि हर ग़रीब बी.पी.एल. रोगी जो आपके पास कोई काम लेकर आए उसका काम उसी भावना से करें, जिस भावना से आपने 'सेवा' में ड्यूटी करते समय उस लावारिस रोगी की मदद की थी।'' ''समझ गया सर,'' हँसते हुए वे बोले।

इस प्रयोग के प्रभाव

जब भी कोई ज़रूरतमंद व्यक्ति अपने काम के लिए हम जैसे किसी सरकारी या गैर सरकारी व्यक्ति के पास आता है तो उसके चेहरे पर अपेक्षा, मुस्कुराहट और आशंकापूर्ण विश्वास के भाव होते हैं। इसके विपरीत हम जैसे काम करने वाले व्यक्ति का चेहरा कठोरता, शक और अहंकार से भरा होता है। कुछ पाने की लालसा या बड़प्पन का अहंकार अक्सर इसके कारण होते हैं और कार्य संपन्न होने में बाधक बनते हैं। ऐसी स्थिति में ज़रूरतमंद की तकलीफ़ की ग्लानि को हम लोग अपने अहंकार के मद में भुला देते हैं। दोस्तों से बातचीत में भी ज़िक्र कर हम अपने अहंकार की तुष्टि का आनंद लेते हैं। अरे देखो, वह आया था तो बड़ा अकड़ कर खड़ा था। तीन चक्कर

लगवाए तो सारी अकड़ निकल गई।

ऑफ़िस में कार्यरत बाबू भी अपनी इसी प्रकार की मानसिकता के कारण ग्रंथियों से इतने घिरे रहते हैं कि उन्हें अपने पास काम के लिए आने वाले रोगियों के कष्ट का आभास ही नहीं होता। ऐसी स्थिति में लावारिस रोगी की प्रायश्चित्त ड्यूटी डंगायच जी के लिए प्रेरणादायक बनी। भविष्य में छोटी बातों के लिए लाचार रोगियों से चक्कर लगवाने की उनकी आदत भी छूट गई।

यदि काम करते समय हम अपने चेहरे पर कठोरता के स्थान पर कोमलता लाएँ तो ख़ुशी की अनुभूति होती है और काम होने के बाद जब रोगी धन्यवाद देकर जाता है तब हम आनंदित हो उठते हैं। जीवन में कभी-कभी मिलने वाली बड़ी ख़ुशी की बजाय दिनचर्या में मिलने वाली छोटी-छोटी ख़ुशियाँ ज़्यादा महत्वपूर्ण होती हैं। काम के बोझ के कारण दस्तावेज़ों के बारे में पूरा नहीं बताने की समस्या का समाधान निकला एक लिखित काग़ज़, जिसमें आवश्यक दस्तावेज़ों का पूरा उल्लेख रहता था। सहृदयता के साथ समस्या का समाधान ढूंढा जाये तो बहुत से तरीक़े उपलब्ध हो जाते हैं। ज़रूरत है सिर्फ़ उनको अपनाने की।

5. प्रायश्चित्त से दोहरा लाभ

अस्पताल की इमरजेंसी में कई बार ऐसे गंभीर रोगी आते हैं, जिन्हें तुरन्त एण्डोट्रेकीयल ट्यूब डालनी पड़ती है। इसके लिए ई.एन.टी. के मेडिकल ऑफ़िसर की ड्यूटी लगाई गई। एक दिन निरीक्षण के दौरान ई.एन.टी. के डॉक्टर ड्यूटी पर नहीं मिले। उनको जब बुलाया तो खेद प्रकट करते हुए दुबारा ऐसी ग़लती नहीं करने का वादा किया। प्रायश्चित्त के लिए पूछने पर उन्होंने कहा, ''जैसा आप कहें।'' मैंने उनको देखते हुए पूछा, ''क्या आप सिगरेट-शराब का सेवन करते हो?'' ''सिगरेट लेता हूँ सर,'' उन्होंने कहा। ''क्या आप बंद कर सकते हो?'' उन्होंने उसी वक्त सिगरेट के सेवन को बंद करने का वादा किया। बाद में पता लगा कि इस घटना के बाद उन्होंने कभी सिगरेट नहीं पी।

इस प्रयोग के प्रभाव

एक ओर चिकित्सक ने सिगरेट की बुरी लत से छुटकारा पाया, वहीं दूसरी ओर ड्यूटी की प्रतिबद्धता में सुधार आया।

6. प्रायश्चित्त भी और सेवा भी

सीटी स्कैन आउटसोर्स किया हुआ था और श्री देव आशिष घोषाल उसके प्रबंधक थे। सीटी स्कैन करवाने से पहले रिसेप्शन पर सीटी स्कैन स्लिप की फ़ोटोकॉपी रखने का नियम था। इससे रोगियों को भारी असुविधा एवं समय की हानि होती थी। रात में फ़ोटोकॉपी करवाना एक टेढ़ी खीर होती थी।

मैंने श्री घोषाल से बात कर फ़ोटोकॉपी जमा करवाने के नियम को रद्द कर दिया। कुछ दिनों बाद दोबारा निरीक्षण के दौरान पाया गया कि तब भी फ़ोटोकॉपी रोगियों से

मँगाई जा रही थी।

श्री घोषाल से बात करने पर उन्होंने ग़लती स्वीकार की एवं तुरंत फ़ोटोकॉपी नहीं लेने की व्यवस्था लागू करने की बात कही।

प्रायश्चित्त में उन्होंने 'सेवा' में एक ड्यूटी एवं 25 रोगियों को अक्षयपात्र में अपने व्यय से भोजन कराने की व्यवस्था की।

इस प्रयोग के प्रभाव

किसी भी नई व्यवस्था को लागू करने के लिए नियमित निगरानी आवश्यक है। ज़रूरतमंद रोगियों को भोजन करवाने एवं 'सेवा' में ड्यूटी करने से श्री घोषाल को मानवीय कष्ट समझने का मौका मिला और ऐसी कष्टप्रद स्थिति में जी रहे इंसान की मदद की ख़ुशी का अहसास हुआ। वे रोगियों के प्रति ज़्यादा संवेदनशील हो गए और ड्यूटी के प्रति ज़्यादा सजग हो गये।

7. मित्र के पुत्र ने किया प्रायश्चित्त

पॉलीट्रोमा ओ.टी. ड्यूटी से हड्डी रोग के सीनियर रेज़िडेंट डॉ. निशान्त शर्मा नदारद मिले। अगले दिन ग़लती मानकर भविष्य में दुबारा ऐसी ग़लती नहीं करने का उन्होंने वादा किया। बातचीत करने पर पता लगा कि वह मेरे खास दोस्त डॉ. युगल शर्मा के पुत्र हैं। मैंने कहा, ''अरे तुम तो मेरे बेटे के समान हो इसलिए ड्यूटी के प्रति तुम्हारी ज़िम्मेदारी और भी ज़्यादा बढ़ जाती है। ऐसे में प्रायश्चित्त क्या करोगे?'' ''सर, मैं दीपावली वाले दिन अतिरिक्त ड्यूटी दे दूँगा।'' दीपावली की ड्यूटी देने में सभी अनिच्छा ज़ाहिर करते हैं।

दीपावली की रात प्रायश्चित्त के रूप में वह ड्यूटी पर थे। इसके बाद उन्होंने ड्यूटी ज़िम्मेदारी के साथ दी।

इस प्रयोग के प्रभाव

यदि अपने कर्मचारियों में कार्य के प्रति निष्ठा लानी है तो भाई–भतीजावाद से ऊपर उठना आवश्यक होता है। यदि डॉ. निशान्त की ग़लती को मित्र पुत्र के स्नेह के कारण मैं नज़रअन्दाज़ कर देता तो अन्य चिकित्सकों की लापरवाही के प्रति भी उदासीन रहना पड़ता। प्रायश्चित्त में की गई दीपावली की ड्यूटी डॉ. निशान्त शर्मा को ड्यूटी के प्रति निष्ठा की याद दिलाती रहेगी। मित्र का पुत्र मानकर छोड़ने से उनमें ज़िम्मेदारी की गंभीरता का बोध नहीं होता, हालांकि हो सकता है कि मेरे प्रति स्नेह बढ़ जाता।

8. लापरवाह ट्रॉली चालक की ग्लानि

अस्पताल के बाँगड़ परिसर में एक ट्रॉली चालक ने एक रोगी को ले जाने से मना कर दिया। रोगी के परिजनों से जब शिकायत मिली तो ट्रॉली चालक को ड्यूटी से हटा दिया गया। ट्रॉली चालक ने ग़लती मानते हुए भविष्य में रोगियों के प्रति सहृदय रहने का विश्वास दिलाया। जिस रोगी को उसने मना किया था, वॉर्ड में उसकी गंभीर हालत

दिखाई तो उसका मन ग्लानि से भर उठा।

प्रायश्चित्त के बतौर उसने एक यूनिट ख़ून देने का वादा किया। एक रोगी जिसे ख़ून की उल्टियाँ हो रहीं थीं, उसे ट्रॉली चालक ने ख़ून दिया। रक्तदान के बाद ट्रॉली चालक को एक अनोखी संतुष्टि की अनुभूति हुई।

इस प्रयोग के प्रभाव

अस्पताल में कार्यरत लोगों में रोगियों के प्रति संवेदनशीलता बनी रहे, यह बहुत ही आवश्यक है। इसके लिए ज़रूरी है, समय-समय पर कर्मचारियों को ग़लती का अहसास दिलाकर उन्हें संवेदनशील बनाना। इस घटना एवं रक्तदान के बाद, ट्रॉली चालक की टालने की प्रवृत्ति में काफी सुधार आया और उसके व्यवहार में संवेदनशीलता आई। इस रक्तदान की घटना को चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी संघ के कुछ लोगों ने मुद्दा बनाने की कोशिश की। उन्होंने बात फैलाई कि अधीक्षक महोदय ने एक ग़रीब ट्रॉली चालक का ज़बरदस्ती ख़ून निकाल लिया। मैं चुप रहा लेकिन रक्तदान करने वाले ट्रॉली चालक ने ही उनके इस मुद्दे में भागीदार बनने से इंकार कर दिया।

9. क्लर्क को भाया प्रायश्चित्त

ऑर्थोपेडिक के क्लर्क श्री बालकिशन ने ड्यूटी लिस्ट विभाग के डॉक्टर्स को नहीं दी। अपनी शिथिलता की ग़लती, ग्लानि के साथ स्वीकार करते हुए भविष्य में इसकी पुनरावृत्ति न करने का भरोसा दिलाया। प्रायश्चित्त में उसने 'सेवा' में रविवार को अतिरिक्त समय में एक ड्यूटी दी। ग़लती सुधारने का यह तरीका उसे इतना अच्छा लगा कि उसने अपने परिवार में भी इसे लागू कर दिया।

इस प्रयोग के प्रभाव

ग़लती की ग्लानि महसूस कर प्रायश्चित्त की सीख से परिवार में भी ग़लती की समस्या को सुलझाया जा सकता है। किसी भी परिवारजन की निरंकुशता या ग़लती का समाधान 'प्रायश्चित्त' के तरीक़े से हो सकता है। श्री बालकिशन ने समझा और इसे अपनाया।

10. छोटे काम में झिझक

डॉ. अनिल दुबे और डॉ. रामावतार को रात्रिकालीन निरीक्षण के दौरान बेसमेंट में एक शराब की खाली बोतल मिली। ड्यूटी पर उपस्थित दो स्टाफ़ सदस्यों ने अनभिज्ञता ज़ाहिर की लेकिन ड्यूटी स्थल पर बोतल मिलने की ज़िम्मेदारी स्वीकार की। दोनों बिजली कर्मचारी थे इसलिए दोनों को प्रायश्चित्त स्वरूप पंखों को साफ़ करने का काम दिया गया। दोनों ने मिलकर 400 पंखे साफ़ किये।

इस प्रयोग के प्रभाव

पंखे साफ़ करना बिजली कर्मचारियों की ड्यूटी में आता था। लेकिन वे करते नहीं थे। धीरे-धीरे पंखे साफ़ करने की आदत ख़त्म हो गई और अब झिझक आने लग गई। इस घटना की ग़लती में जब उन्होंने पंखे साफ़ करने का प्रायश्चित्त किया तो

उनकी यह झिझक ख़त्म हुई कि कभी पंखे साफ़ नहीं किए, तो अब कैसे करें।

11. रोगी के लिये चिकित्सक का रक्तदान

मेरे वॉर्ड में भर्ती एक लावारिस रोगी के ठीक होने के बाद यह समस्या आई कि उसे भेजें कहाँ? मदर टेरेसा आश्रम में जगह उपलब्ध नहीं थी। उस रोगी का स्वयं का कोई ठिकाना नहीं था। शनिवार को वॉर्ड राउंड के समय मैंने कहा कि चलो कोई व्यवस्था करेंगे। सोमवार को जब मैं वॉर्ड में आया तो वह रोगी नहीं था। जब पूछा तो रेज़िडेंट डॉ. सुरेश ने कहा, ''पता नहीं सर, कहाँ गया!'' लेकिन उसका चेहरा उसके कथन का साथ नहीं दे रहा था। मैंने उसे चैंबर में मिलने को कहा। चैंबर में उसने स्वीकार किया कि उस लावारिस रोगी को मंदिर के पास शनिवार को ही छुड़वा दिया था।

तलाश करने पर वह रोगी मंदिर के पास नहीं मिला। डॉ. सुरेश ने ग़लती मान, भविष्य में इसे नहीं दोहराने का आश्वासन दिया। प्रायश्चित्त के तौर पर किसी ज़रूरतमंद को रक्तदान देने का वादा किया। इस घटना के क़रीब एक महीने बाद एक रोगी बुखार के साथ भर्ती हुआ। उसका हिमोग्लोबिन सिर्फ़ 4 ग्राम था। एक यूनिट ख़ून उसके बेटे ने दिया, लेकिन अगले ब्लड की यूनिट का इंतज़ाम वह नहीं कर पाया। डॉ. सुरेश ने उसे ख़ून देने का प्रस्ताव दिया तो वह रोगी विश्वास नहीं कर पाया और बोला, ''कितने पैसे लगेंगे?'' डॉ. सुरेश ने कहा, ''कोई पैसा नहीं, ख़ून मैं आपकी मदद के लिए दूंगा।'' ''बेटा, आप तो भगवान हो,'' कहा उस रोगी ने।

इस प्रयोग के प्रभाव

डॉ. सुरेश ने सीखा लापरवाही नहीं करने का पाठ और प्राप्त किया अनजान पीड़ित को रक्त देने से मिलने वाला आनन्द।

12. मेरा सच, तेरा सच

1ए बी वॉर्ड में भर्ती एक रोगी का परिजन मेरे पास आया। उसकी शिकायत थी कि दिन के 11 बज गए लेकिन तब तक भी रोगी को इंजेक्शन नहीं लगे। मैंने रेज़िडेंट डॉक्टर एवं कंपाउंडर को बुला भेजा। रेज़िडेंट डॉक्टर ने कहा, ''सर, रात को भर्ती का दिन था। पूरी रात ज़्यादा लोगों के भर्ती होने के कारण ऑर्डर रजिस्टर में लिखने का समय नहीं मिला। मैंने ज़बानी कह दिया था, कंपाउंडर को।'' कंपाउंडर बोला, ''सर, मैं भी पूरी रात भर जागकर इंजेक्शन लगा रहा था। सुबह 7 बजे घर से फ़ोन आया कि मेरे बच्चे की तबीयत खराब है, तो घबराहट में रोगी को बिना इंज़ेक्शन लगाये ही घर चला गया।'' मैंने पूछा, ''ग़लती किसकी है?''

पूरी रात जागकर रोगियों को संभालने वाले रेज़िडेंट डॉक्टर पर दया आती है। पूरी रात जागकर गंभीर रोगियों को इंजेक्शन लगाने वाले कंपाउंडर को जब बच्चे के बीमार होने का समाचार मिलता है तो उस पर भी दया आती है। तीसरी ओर रोगी को इंजेक्शन नहीं लगा तो उसकी पीड़ा पर दया आती है। वे तीनों एक स्वर में बोले, ''सर,

हम ग़लत थोड़े ही कह रहे हैं।'' लेकिन दया से काम तो नहीं होता। ड्यूटी तो ड्यूटी है आख़िर। मैंने यहाँ चित्र में दिया गया 6 का अंक लिखा और मेरे तीनों ओर खड़े लोगों से पूछा, ''क्या लिखा है?'' ''छः है सर,'' तीनों बोले। मैंने कहा, ''नहीं, यह सच नहीं है। 3 नम्बर पर बैठे मुझ जैसे व्यक्ति के लिए 6 है लेकिन 1 नम्बर पर खड़े रेज़िडेंट डॉक्टर के लिए 9 है, 2 नम्बर पर खड़े कंपाउंडर के लिए बड़े ऊ की मात्रा है जबकि 4 नम्बर पर खड़े परिजन के लिए यह छोटे उ की मात्रा है। आप सभी सच बोल रहे हो, परिस्थितिवश सभी दया के पात्र भी हो। लेकिन ड्यूटी–ड्यूटी है। उसमें हुई लापरवाही को, किसी मज़बूरी की दया से ढकने की कोशिश न करें।'' इस पर रेज़िडेंट और कंपाउंडर ने परिजन को सॉरी कहा तथा आगे अच्छे से ड्यूटी करने का भरोसा दिलाया। बतौर प्रायश्चित्त उन्हें यह कार्य दिया गया कि इस रोगी की इतनी सेवा करें कि जाने के बाद भी वह उन दोनों को हमेशा याद रखे।

इस प्रयोग के प्रभाव

वह रोगी 7 दिन बाद ठीक होकर चला गया। उसने जाते समय मुझे बताया कि उन रेज़िडेंट डॉक्टर और कंपाउंडर साहब की सेवा के कारण ही वह जल्दी ठीक हो

सका।

13. प्रायश्चित्त से निकला कठिनाई का हल

न्यूरोलॉजी के डॉक्टर जितेन्द्र सिंह एक बार इमरजेंसी में ड्यूटी पर नहीं मिले। इसका कारण अगले दिन उन्होंने वॉर्ड में सीरियस रोगी का कॉल आने की बात कही। ''लेकिन निश्चित जगह की ड्यूटी छोड़ना क्या उचित है?'' मैंने पूछा। इस पर उन्होंने अपनी ग़लती स्वीकार की। प्रायश्चित्त के बतौर न्यूरोसर्जरी में ऑनलाइन रेफ़रेंस को पुख़्ता लागू करने की ज़िम्मेदारी उन्हें दी गई।

इस प्रयोग के प्रभाव

एक महीने की भरसक कोशिश के बावजूद हम लोग न्यूरोसर्जरी में ऑनलाइन रेफ़रेंस व्यवस्था को लागू नहीं कर पा रहे थे। डॉ. जितेन्द्र सिंह के अपने विभाग में कोशिश से एक सप्ताह में यह व्यवस्था सुचारू रूप से चलने लग गई।

प्रायश्चित्त यदि कार्यस्थल की किसी कठिन योजना के क्रियान्वयन का हो तो उससे जुड़ा व्यक्ति वह काम ज़्यादा अच्छी तरह से कर सकता है। फिर यदि वह व्यक्ति क्रियान्वयन की ज़िम्मेदारी दिल से स्वीकार करता है तो वह व्यवस्था निश्चित रूप से सफल हो जाती है।

14. गार्ड और रज़िडेंट डॉक्टर के बीच कहा सुनी

एक बार एक वरिष्ठ रेज़िडेंट डॉक्टर ड्यूटी पर अस्पताल पहुँचे तो कार पार्किंग को लेकर गार्ड से कहा–सुनी हो गई। परिचय देने के बाद भी गार्ड का तेज़ आवाज़ में बोलना शोभनीय नहीं था। बात मुझ तक पहुँची। पूछा तो गार्ड ने अपनी ग़लती स्वीकार कर ली। प्रायश्चित्त के तौर पर उसने बीड़ी छोड़ने का वादा किया। मुझे पता लगा कि इस घटना के बाद गार्ड ने बीड़ी नहीं पी।

इस प्रयोग के प्रभाव

उस गार्ड ने फिर कभी बीड़ी नहीं पी।

15. मेडिकेयर रिलीफ़ सोसाइटी स्टाफ़ की लेट लतीफ़ी

मेडिकेयर रिलीफ़ सोसाइटी में एक बार निरीक्षण किया तो वहाँ कार्यरत दो लड़कियाँ अपनी सीट पर नहीं मिलीं। जब वे आईं तो उन्होंने लेट आने का कारण कोई ज़रूरी काम बताया। ''इस समय का पैसा जब आप अस्पताल से ले रही हो तो उस समय में घर का काम करना ग़लत है,'' मैंने कहा। दोनों ने ग़लती मान भविष्य में ऐसा नहीं करने का वादा किया। प्रायश्चित्त के तौर पर एक ने गोलगप्पे और दूसरी ने मिठाई 3 महीने नहीं खाने की प्रतिज्ञा ली।

इस प्रयोग के प्रभाव

तीन महीने गोलगप्पे और मिठाई का स्मरण उन्हें हमेशा समय पर आने की बात याद दिलाता रहा।

■ ■ ■

3

लावारिस रोगी : कैसे हो इलाज?

सवाई मानसिंह अस्पताल, जयपुर की कार्यप्रणाली के अनुसार चिकित्सक हर रोगी को देखकर उसका इलाज निश्चित करता है। नर्सिंग स्टाफ़ इलाज के लिए निर्देशित इंजेक्शन रोगी को देता है। लेकिन रोगी को खिलाने, करवट बदलवाने, नहलाने, शौच करवाने, जाँच के लिए ले जाने जैसे कई कार्य परिजन ही करते हैं। हर महीने 80–90 लावारिस रोगी गंभीर अवस्था में भर्ती होते हैं। इनके साथ कोई भी परिजन नहीं होता है। ऐसी स्थिति में इन रोगियों के मामले में परिजनों वाले कार्य करवाना बहुत ही कठिन होता है और कई बार ऐसे लोग बहुत गंदी स्थिति में मल–मूत्र से सने बिस्तर में पड़े रहते हैं।

गांधीजी के समय लेप्रोसी यानी कोढ़ की बीमारी से ग्रसित लोगों को परिवारजन लावारिस अवस्था में छोड़ जाते थे। गांधीजी ऐसे बहुत से लोगों को अपने आश्रम में लाकर उनके घावों की मरहम–पट्टी कर सेवा करते थे। अस्पताल में लावारिस रोगियों की स्थिति देख मन बड़ा व्याकुल रहता था। कई बार विचार आया कि जब गांधीजी लेप्रोसी के रोगियों की सेवा कर सकते थे तो क्यों न मैं ही अपने वॉर्ड के लावारिस रोगियों को स्नान कराके और उनका मल–मूत्र साफ़ करके इसकी शुरूआत करूँ? लेकिन मुझमें इतना साहस नहीं था और इसी कारण मैं संकोच रूपी दीवार को नहीं तोड़ सका।

एक रोज़ 3 डी–ई वॉर्ड के दौरे के समय हमारी यूनिट के डॉ. ओम नारायण मीना ने कहा, ''सर, क्या हम ऐसे लावारिस रोगियों के लिए कुछ नहीं कर सकते?'' मन बड़ा दुःखी हुआ। सोचते–सोचते मैं अपने ऑफ़िस की ओर आ रहा था।

तभी मेरी नज़र सामने से आ रहे कुछ नर्सिंग के छात्रों पर पड़ी। विचार आया कि लावारिस रोगी की सेवा मानवीय संवेदना से जुड़ा एक पहलू है और नर्सिंग कर्मचारी

सेवा की प्रतिमूर्ति माने जाते हैं। यदि लावारिस रोगियों की सेवा के साथ नर्सिंग छात्रों को जोड़ दिया जाये तो उनमें संवेदना जागृत होगी जो कि उनके पेशे की आत्मा है।

ऑफ़िस पहुँचते ही मैंने नर्सिंग स्कूल की प्राचार्या श्रीमती मधुरानी से बात की और 6 सितम्बर 2013 को छात्रों से बातचीत की। उन्हें बताया गया कि लावारिस रोगियों का परिजन बनकर सेवा करने के जो भी इच्छुक हों वे अपना नाम वॉलंटियर लिस्ट में लिखवाएँ। लावारिस रोगियों हेतु शुरू किए गए इस कार्य का नाम रखा गया 'सेवा'। उनका उत्साह देखते ही बनता था। आश्चर्य हुआ जब करीब 100 छात्र–छात्राओं ने अपने नाम लिखवा दिये। अब समस्या आई, इस सेवा को कोऑर्डिनेट करने हेतु एक सेवाभावी चिकित्सक ढूंढने की। उन्हीं दिनों फ़िज़िकल रीहैबिलीटेशन के डॉ. नरेन्द्र सिंह को पोस्ट करना था। पहले उनको आर.आर.सी. में पोस्ट करना चाहा तो वहाँ के सीनियर डॉक्टरों ने कहा, ''साब, नरेन्द्र जी हमें सूट नहीं करेंगे, हमारे यहाँ पोस्ट नहीं करें। उनकी कार्यशैली इस सेवा के अनुरूप नहीं है।'' तब डॉ. नरेन्द्र की इच्छानुसार नेफ्रोलॉजी में उन्हें पोस्ट करने लगा तो वहाँ के चिकित्सकों ने भी मना कर दिया। तभी विचार कौंधा, डॉ. नरेन्द्र 'सेवा' के कठिन कार्य के लिए सबसे उपयुक्त व्यक्ति हो सकते हैं। डॉ. नरेन्द्र ने कुछ देर विचार करने के बाद कहा, ''सर मैं यह काम कर लूँगा।'' उन्होंने नर्सिंग कर्मचारी बलदेव के साथ मिलकर यह काम शुरू कर दिया।

अभियान शुरू करने के 3 दिन बाद डॉ. नरेन्द्र सिंह मेरे पास आए और बोले, ''सर, ये नर्सिंग छात्र तो काम के नहीं हैं। रात को ड्यूटी वाली छात्रा ने कहा कि गंदी स्थिति में पड़े ऐसे लावारिस की सेवा तो बस की बात नहीं है। मैंने तो झिड़क दिया, क्यों वॉलन्टियर बनने की सहमति दी थी?'' डॉ. नरेन्द्र सिह बोले, ''सर, इसके बाद तो लगभग सभी छात्र–छात्राओं ने अपने नाम, सेवा अभियान से वापस ले लिए।''

मैंने डॉ. नरेन्द्र सिंह को समझाया, ''इन छात्रों में कम से कम भावना तो है सेवा की, जबकि हममें से अधिकांश संवेदनहीन हो चुके हैं। आप इन छात्र–छात्राओं का उत्साह बढ़ाओ। जो भी परेशानियाँ आएँ, उनका समाधान निकालो। अपने आप को ऑफ़िसर या डॉक्टर न समझ, एक मिशनरी मानो।'' बातचीत का असर हुआ और अगले कुछ दिनों में डॉ. नरेन्द्र का एक मिशनरी का रूप दिखाई दिया। नर्सिंग के सभी छात्र–छात्राएँ एक बार फिर इस अभियान से जुड़ गए। शहर के कुछ समाजसेवी भी श्रीमती सुमन चौधरी के नेतृत्व में इस अभियान से जुड़े।

सेवा करने वालों के अनुभव

1. लावारिस में देखी माँ की तस्वीर

नर्सिंग की द्वितीय वर्ष की एक छात्रा पूजा की ड्यूटी 3 डी ई वॉर्ड में भर्ती लावारिस महिला रोगी के पास लगी। छात्रा जब उसके पास पहुँची तो तेज़ बदबू आ रही थी। उसने देखा कि अर्द्धचेतन अवस्था में पड़ी उस रोगी के वस्त्र मल–मूत्र में सने थे।

करीब 10–15 मिनट वहाँ बैठने के बाद उसके मन में आया कि भाग चलूं। वह धीरे–धीरे निकलकर वॉर्ड से बाहर आकर 3 डी ई कॉरिडोर में आ गई। तभी आत्मा से एक आवाज़ आई, क्या मेरी माँ इस रोगी की जगह होती तो उसे भी मैं छोड़ कर चली जाती? दिल से आवाज़ आई, ''नहीं।'' और वह वापस उस रोगी के बिस्तर पर आई। उसने नीचे से स्वीपर को बुलाया और उसकी मदद से कपड़े बदले। पूरी रात रोगी की सेवा करने के बाद सुबह रोगी को होश आया। सुबह हॉस्टल जाते समय उसे एक सुखद अनुभूति हो रही थी।

इस प्रयोग के प्रभाव

सेवा में ड्यूटी के बाद रोगी के कार्यों के प्रति अस्पताल कर्मियों में संवेदनशीलता में काफ़ी सुधार आया। **सेवा या मदद करने की तीन सीढ़ियाँ होती हैं। झिझक, सेवा करने में तकलीफ़ और सेवा के बाद की ख़ुशी। सेवा करते समय जितनी ज़्यादा तकलीफ़ होती है, सेवा के बाद ख़ुशी भी उतनी ही ज़्यादा मिलती है।**

2. सेवा का अविस्मरणीय अनुभव

नर्सिंग असिस्टेन्ट पूनम सेन को पॉलीट्रोमा वॉर्ड में सेवा का मौका मिला। बैड नंबर 5 पर वह लावारिस रोगी 2 दिनों से भर्ती था। पैरों पर पट्टी बंधी थी, कपड़े खून से सने थे। 65 वर्षीय उस रोगी से जब पूनम ने मुस्कुराकर बात की तो रोगी ने उसकी ओर देखकर पानी माँगा। उसने उसे पानी पिलाया। रोगी ने बताया कि काफ़ी समय से प्यास लग रही थी और उसने कृतज्ञता के साथ दुआ दी। पूनम ने खून से सने उसके कपड़े बदले और चाय पिलाई। दोपहर में उसे बैठाकर खाना खिलाया और दवा दी।

शाम को ड्यूटी के बाद जब पूनम जा रही थी तो अपेक्षा भरी नज़रों से उस रोगी ने कहा, ''बेटी, कल फिर आओगी ना?'' पूनम को मन में एक अलग तरह की संतुष्टि महसूस हुई। ऐसा सुखद अहसास हुआ जिसे शब्दों में व्यक्त करना मुश्किल है। 'सेवा' में ड्यूटी के बाद पूनम ने कहा, ''मेरा विश्वास है कि ईश्वर का दिया कभी अल्प नहीं होता, जो बीच में टूट जाये वह संकल्प नहीं होता, इस सेवा का कोई विकल्प नहीं होता।''

इस प्रयोग के प्रभाव

सेवा करने वाले नर्सिंग छात्र–छात्राओं और समाजसेवी श्रीमती सुमन को बहुत–सी बार अस्पताल के वॉर्ड कर्मियों एवं चिकित्सकों की हँसी का पात्र बनना पड़ता था। लेकिन धीरे–धीरे अस्पताल कर्मियों ने इन सभी की लगन को समझा और वे मदद करने लगे।

नर्सिंग छात्र–छात्राओं के अतिरिक्त अस्पताल के बहुत से कर्मचारियों ने अपनी ग़लती का प्रायश्चित्त करने हेतु सेवा में ड्यूटी दी। ऐसी ही एक ड्यूटी का यह वृतांत है:

3. प्रायश्चित्त के बतौर 'सेवा' में ड्यूटी : सज़ा बनी इनाम

एक बार अस्पताल में एक फ़ार्मासिस्ट ड्यूटी पर देर से आई। उसने अपनी

ग़लती स्वीकार कर इसे कभी न दोहराने का वादा किया। उसे प्रायश्चित्त के रूप में सेवा में एक ड्यूटी दी गई। जब डॉ. नरेन्द्र ने उसे 'सेवा' में ड्यूटी देने को कहा तो पहले तो वह राज़ी हो गई लेकिन ड्यूटी पर जाने से पहले उसने रोना शुरू कर दिया। उसे लगा कि सेवा में ड्यूटी देने का काम एक बहुत बड़ा दण्ड है। डॉ. नरेन्द्र ने उसे उत्साहित करते हुए कहा, इतनी मत डरो, तुम्हारा अनुभव भी अन्य लोगों की तरह अच्छा ही होगा। अपनी ड्यूटी के बाद जब वह मेरे पास आई तो बहुत ही खुश दिखाई दे रही थी। प्रायश्चित्त के रूप में सेवा की पेशकश के लिए उसने मेरा पूरे मन से आभार व्यक्त किया और कहा कि वह सेवा में एक ड्यूटी और करना चाहती है लेकिन इनाम के तौर पर, न कि दण्ड के रूप में। लावारिस की 'सेवा' ड्यूटी में उसने एक बुज़ुर्ग मरीज़ की सेवा की जिसकी देखभाल करने वाला कोई नहीं था। मरीज़ के प्रति उसके मन में सहानुभूति उमड़ी। उसने मरीज़ से पूछा, ''बाबा, आप सबसे ज़्यादा क्या पसंद करते हो?'' बुज़ुर्ग बोले, ''रसगुल्ला।'' फिर वह अजमेरी गेट गई और उसके लिए रसगुल्ले लाई। बुज़ुर्ग ने बड़े मन से रसगुल्ला खाया और उसको बहुत आशीर्वाद दिया। फ़ार्मासिस्ट के दिल में उस लावारिस रोगी के लिए इतनी करुणा उमड़ी की उसने बुज़ुर्ग के कपड़े बदले और उसका एक्स–रे करवाया। अगले दिन वह उसके लिए अपने घर से खाना ले कर आई।

हर इंसान में शैतान और भगवान, दोनों वास करते हैं। किसको जगाकर काम में लगाना है और किसको सुलाना है यह निर्भर करता है उस व्यक्ति के प्रेरक बिन्दुओं पर।

प्रति माह करीब 90 लोग लावारिस अवस्था में अस्पताल में भर्ती होते थे। इन लोगों के लावारिस बनने के कारणों का जब विश्लेषण किया तो मालूम हुआ कि क़रीब 50 प्रतिशत लोग शराब का ज़्यादा सेवन करने के कारण लावारिस बने। ऐसे ही एक रोगी के घर जब डॉ. नरेन्द्र सिंह ने फ़ोन किया तो उसकी पत्नी ने बताया कि वह शराबी है और मारपीट करता है, वे लोग उसे संभालने अस्पताल में नहीं आएँगे। तब नरेन्द्र ने उनकी पुत्री से बात कर बताया कि रोगी की हालत गंभीर है। उसकी पुत्री ने कहा, शराब पीकर कल मरने से यही बेहतर है कि वह आज ही मरे। यदि हमने आकर शराबी पिता की देखरेख कर उसे बचा लिया तो हो सकता है ठीक होकर घर आने के बाद वह हमें ही मार दे। इस प्रकार की बातें कल्पना से भी परे लगती हैं। लेकिन इन लावारिस रोगियों के सम्पर्क में आने पर अहसास होता था कि ऐसी कहानियाँ आम बात हैं।

इस प्रयोग के प्रभाव

सेवा में इस ड्यूटी के बाद वह फ़ार्मासिस्ट रोगियों के प्रति अधिक संवेदनशील हो गई। उसने अपने अनुभव में लिखा कि सेवा में ड्यूटी का दिन उसका अस्पताल के कार्यकाल का सर्वोत्तम दिन था।

4. सेवा के नोडल अधिकारी ने छोड़ी सिगरेट

'सेवा' की शुरूआत के कुछ दिनों के बाद मुझे पता लगा कि इसके नोडल अधिकारी डॉ. नरेन्द्र सिंह सिगरेट पीते हैं। इस बात को टालने के बजाय मैंने उन्हें तुरंत बुलाया। आते ही मैंने प्रश्न किया, ''लावारिस रोगियों की सेवा जैसे महान् कार्य करने वाले नरेन्द्र, क्या तुम सिगरेट पीते हो?'' अवाक से खड़े नरेन्द्र धीरे से बोले, ''जी सर।'' फिर अपने आप स्वप्रेरणा से एक निश्चय के साथ बोले, ''सर, आज से मैं इसे छोड़ता हूँ।'' ''दोबारा कब शुरू करोगे,'' मैंने पूछा। ''कभी नहीं,'' वे बोले।

इस प्रयोग के प्रभाव

इस निश्चय के बाद उन्होंने सिगरेट नहीं पी और हमेशा के लिए छोड़ दी। इंसान की प्रचारित अच्छाई उसे बुरे काम से दूर रहने को प्रेरित करती है। **किसी डॉक्टर के धूम्रपान करने की बात का एक आम रोगी के मन पर बहुत बुरा असर पड़ता है। यदि कोई पुजारी व्यभिचारी हो तो आम आदमी बात करेगा कि देखो, क्या कलियुग आ गया है। इसी प्रकार का प्रभाव पड़ता है जब कोई डॉक्टर सिगरेट पीता है।** सिगरेट छोड़ने से डॉ. नरेन्द्र को एक बदनामी वाली बुराई से छुटकारा मिला।

■ ■ ■

4

हिंसक घटनाएँ : अहिंसक समाधान

चिकित्सक का पेशा ऐसा है जिसमें अधिकांश चिकित्सक अक्सर बहुत ज़्यादा धनवान् नहीं होते, लेकिन ख़ुशियाँ लूटने के सबसे ज़्यादा अवसर चिकित्सक के जीवन में ही आते हैं। किसी ज़रूरतमंद की मदद करने से ख़ुशी मिलती है। यदि मदद पाने वाला व्यक्ति बीमारी के कारण कष्ट में हो तो उसकी मदद करने से ख़ुशियाँ ही ख़ुशियाँ मिलती हैं। हालांकि इसके विपरीत कई बार रोगी को जब अपेक्षित लाभ नहीं मिलता या अपेक्षित इलाज नहीं मिलता तो परिजन हिंसा पर उतर आते हैं। इस प्रकार की हिंसा से निपटने का सबसे असरदार तरीका है, अहिंसा का प्रभावकारी उपयोग। अस्पताल में घटी कुछ ऐसी ही घटनाओं का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है।

1. छूटा अहम, निकला रक्तदान का डर

शाम 7 बजे फ़ोन आया कि एक रोगी के परिजन ने एक रेज़िडेंट को चाँटा मार दिया। पुलिस आई और परिजन को गिरफ़्तार कर ले गई। फिर भी रेज़िडेंट डॉक्टर बहुत उत्तेजित थे। मेरे मन में ख़्याल आया, कैसे टालूँ इस समस्या को? नया–नया अधीक्षक बना था। टालने के प्रयास में मुझे विचार आया कि आज ऑन कॉल डाक्टर भेज देता हूँ। उस दिन उप–अधीक्षक डॉ. सुनित राणावत ऑन कॉल ड्यूटी पर थे। मैंने उन्हें समस्या का समाधान निकालने को कहा। आधे घंटे में डॉ. राणावत अस्पताल पहुँच गए। करीब 9 बजे उनका फ़ोन आया कि काफ़ी संख्या में रेज़िडेंट इकट्ठे हो गये हैं तथा स्थिति क़ाबू में नहीं है। मैंने कहा, ''मैं पहुँच रहा हूँ।'' मन में अनिष्ट की आशंका लिए थोड़ी घबराहट के साथ मैं करीब 9.30 बजे वहाँ पहुँचा।

जब मैं पहुँचा तो वहाँ 50–60 रेज़िडेंट डॉक्टर थे। सबको साथ लेकर मैं ऑफ़िस आ गया। पुलिस के एस.एच.ओ. श्री हरीराम कुमावत भी साथ ही थे।

रेज़िडेंट चिकित्सकों ने घटना को विस्तार से बताया। मैंने पूछा, ''अब क्या

करें?'' लिखित माफ़ी, पुलिस केस, रेज़िडेंट्स की माकूल सुरक्षा, आदि सुझाव आए। अचानक मैंने कहा कि एक तरीका यह भी हो सकता है कि मारपीट करने वाले इस परिजन की पिटाई कर बदला ले लें। मुझे संतुष्टि हुई कि एक भी रेज़िडेंट ने मेरा समर्थन नहीं किया। तब मैंने कहा, ''कार्यवाही मुझ पर छोड़ दो।'' ''ठीक है सर, लेकिन कार्यवाही अभी होनी चाहिए'', रेज़िडेंट बोले। ''हाँ, अभी होगी कार्यवाही,'' मैंने कहा।

मैंने एस.एच.ओ. कुमावत जी से गिरफ़्तार परिजन को लाने को कहा। थोड़ी देर में वह वहाँ आ गया। मैंने उससे पूछा तो उसने अपनी ग़लती स्वीकार कर माफ़ी माँगी। मैंने पूछा, ''प्रायश्चित क्या करोगे?''

''सर, ग़रीब रोगियों के लिए 5–10 हज़ार रुपए दे दूँगा।'' ''क्या काम करते हो,'' मैंने पूछा। ''नोएडा, दिल्ली में एक कंपनी में मैनेजर हूँ।'' सभी रेज़िडेंट्स ने उसका रुपए की मदद का प्रस्ताव ठुकरा दिया। तब मैंने पूछा, ''दोनों पक्ष मेरी बात मानोगे?'' ''यस सर,'' सभी बोले।

मैंने परिजन से कहा, ''तुम 7 दिन वॉर्ड में आकर दुःखी रोगियों की सेवा करो या ज़रूरतमंद रोगी को ख़ून दो। उसने जवाब दिया, ''7 दिन ड्यूटी छोड़ना प्राइवेट नौकरी में मुश्किल है, लेकिन मैं ख़ून नहीं दूँगा।'' जिज्ञासावश मैंने पूछा, ''क्यों नहीं दोगे ख़ून?'' ''डर लगता है सर, आज तक कभी ख़ून नहीं दिया।''

''क्या तुम्हें कभी ख़ून मिला?'' ''हाँ, जब 5 साल का था तब पिताजी ने मुझे ख़ून दिया था।'' ''यदि तुम्हारे बच्चे को ख़ून की आवश्यकता हो तो क्या तुम दोगे?''

''हाँ, ज़रूर दूंगा।''

''तब तो तुम अभी ख़ून दे दो।'' वह मान गया और एक कैंसर पीड़ित को उसने ख़ून दिया। इसके बाद परिजन और रेज़िडेंट गिला–शिकवा भुलाकर गले मिले। इस प्रकार की बातचीत में ग़लती स्वीकार करवाने में अध्याय 2 की 'मेरा सच, तेरा सच' घटना में वर्णित ''6'' का उपयोग काफी प्रभावी होता था। इसे समझकर ही लोग अपनी ग़लती बड़ी और दूसरे की ग़लती छोटी मानने को तैयार होते थे। बातचीत के दौरान ही ग़लती करने वाला व्यक्ति ग्लानि महसूस करने लगता था।

इस प्रयोग के प्रभाव

रेज़िडेंट डॉक्टरों की हड़ताल से रोगियों की देखभाल बुरी तरह प्रभावित हो जाती थी। ऐसी स्थिति में हमेशा यही प्रयास रहता था कि हड़ताल न हो। प्रायश्चित के प्रयोग ने रेज़िडेंट डॉक्टरों के विवाद का समाधान निकाला और रोगी हड़ताल की विपदा से बच गये।

किसी भी विवाद का हल है, आपसी बातचीत। इसके चरण हैं : ग्लानि के साथ ग़लती स्वीकार करना, दुबारा नहीं करने का वादा और प्रायश्चित्त। प्रायश्चित्त पीड़ादायक न होकर प्रेरणादायक या लाभदायक होता है तो ग़लती करने वाले व्यक्ति के स्वभाव में परिवर्तन आता है। मुक़ाबला करने से समस्या का समाधान

तो होता ही है, समाधान की ख़ुशी भी मिलती है।

2. कैसे टला वर्ग संघर्ष

उस दिन एस.एम.एस. अस्पताल के अपने ऑफ़िस में दोपहर का भोजन लेने के बाद मैं चाय पीने की सोच ही रहा था कि बाहर से तेज़ आवाज़ें आईं। मैं उठकर पोर्च में गया तो देखता हूँ कि 10–12 लड़के तेज़ी से बाहर जा रहे थे। मुझे बताया गया कि ये महाराजा कॉलेज के छात्र हैं और एक फ़ार्मासिस्ट को पीटकर जा रहे हैं। मैंने सुरक्षाकर्मियों को उन्हें पकड़ने को कहा और पुलिस बुला ली। सुरक्षाकर्मियों ने दो लड़कों को पकड़ लिया। वे मेडिकल छात्र निकले। पुलिस ने उन्हें गिरफ़्तार कर लिया। थोड़ी देर में क़रीब 100–150 फ़ार्मासिस्ट, कम्प्यूटर ऑपरेटर और अन्य ठेकाकर्मी थाने के आसपास एकत्र हो गए। मैं पोर्च की सीढ़ियों से ऊपर आ रहा था कि इतने में देखा कि 300–400 मेडिकल छात्र अस्पताल के अंदर से थाने की ओर जाने के लिए जा रहे थे। तुरंत मैं स्थिति की गंभीरता भाँप गया। छात्र और फ़ार्मासिस्ट ग्रुप यदि आमने–सामने हो जाते तो भयानक मारपीट शुरू हो जाती ।

मैंने छात्रों को चैनल गेट पर रोक लिया। उनकी बात सुनी और कहा कि तुम सब लोग ऑडिटोरियम में इकट्ठे हो जाओ। मैंने डॉ. सुनित राणावत को उनके साथ भेजा और ऑडिटोरियम में इंतज़ार करने को कहा। फिर मैं फ़ार्मासिस्टों के पास गया जो थाने के पास खड़े थे। उन्हें मैंने लेक्चर हॉल में एकत्र होने को कहा। डॉ. राजेश गुप्ता उन्हें वहाँ ले गये।

मैंने लेक्चर हॉल में एकत्रित फ़ार्मासिस्ट कर्मचारियों से पहले बात की। जहाँ से इस घटना की शुरूआत हुई उस दवा की दुकान के फ़ार्मासिस्ट ने बताया, ''एक मेडिकल छात्र जब दवा लेने आया तो लाइन तोड़कर वह पहले दवा लेना चाहता था।'' फ़ार्मासिस्ट ने उसे कहा कि दवा लेनी है तो लाइन में खड़ा होना पड़ेगा। उसने अपने आप को मेडिकल स्टूडेंट बताया तो फ़ार्मासिस्ट ने कहा, ''सभी अपने को मेडिकल छात्र कहते हैं।'' इसके बाद कहा सुनी हो गई। फिर वह मेडिकल छात्र अपने दोस्तों के साथ आया और फ़ार्मासिस्ट के साथ मारपीट की। मैंने उस फ़ार्मासिस्ट से कहा, मारपीट करना मेडिकल छात्र की ग़लती थी। लेकिन शुरूआत में मेडिकल छात्र के परिचय देने के बाद भी तुम्हारी ओर से कहे गये शब्द, क्या सही थे?'' वह फ़ार्मासिस्ट कुछ नहीं बोला। इसके बाद मैंने वहाँ उपस्थित लोगों को संबोधित करते हुए कहा कि ''ईमानदारी से वे लोग हाथ खड़े करो जिनकी वजह से हालात इस स्थिति में पहुँच गए।'' दो फ़ार्मासिस्ट कर्मचारियों ने हाथ खड़ा किया। उन्हें मैंने ऑफ़िस में भेज दिया। बाक़ी लोगों को मैंने कहा ''जो होगा, न्याय ही होगा।''

फिर मैं ऑडिटोरियम में मेडिकल छात्रों के बीच गया। उन्होंने बताया, ''गिरफ़्तार छात्रों की कल परीक्षा है। यदि वे रिहा नहीं हुए तो उनका भविष्य ख़राब हो जाएगा।'' मैंने विश्वास व्यक्त करते हुए कहा, ''वे आज ही रिहा हो जाएँगे।'' और वहाँ भी ग़लती

करने वालों से हाथ खड़े करने के लिए कहा।

तीन छात्रों ने अपनी ग़लती मानी। उनको मैंने अपने ऑफ़िस में बुला लिया। इस बीच मैंने एस.एच.ओ. राजेन्द्र सिंह को गिरफ़्तार छात्रों को लाने के लिए कह दिया। दोनों पक्षों ने अपनी ग़लती स्वीकारी। उनको गांधीजी की प्रायश्चित्त वाली कहानी समझाई तो दो छात्रों ने रक्तदान एवं तीन ने एक महीने के लिए आइसक्रीम बंद करने की इच्छा प्रायश्चित्त के तौर पर ज़ाहिर की। डॉ. अजीत ने दो ज़रूरतमंद लोगों को रक्तदान दिलवाया। बाक़ी 3 छात्रों के साथ, 2 अक्टूबर 13 को आइसक्रीम खाकर मैंने उनका एक महीने का प्रायश्चित्त समाप्त कराया।

इस प्रयोग के प्रभाव

फ़ार्मासिस्ट एवं मेडिकल छात्र अस्पताल के अभिन्न अंग हैं। उनमें आपस का झगड़ा अस्पताल हित में नहीं है। इसलिए पहला मक़सद था कि झगड़ा आगे नहीं बढ़े और दूसरा मक़सद था, अहिंसक तरीके से प्रायश्चित्त करवाकर दोनों पक्षों के अहंकार को पिघलाना।

इस प्रकार की घटना का निपटारा योजनाबद्ध तरीके से करने का सकारात्मक लाभ मिला। ग़लती करने वाले के मन में ग़लती की ग्लानि उत्पन्न करने एवं इसे दुबारा नहीं करने का संकल्प पाने में हम सफल हुए। दोनों वर्गों के लोग वैमनस्य भुलाकर एक बार फिर मित्र बन गये।

3. विफलता में छिपी सफलता

एक दिन अस्पताल में लंच लेते समय ऑर्थोपेडिक के असिस्टेंट प्रॉफ़ेसर धर्म सिंह का फ़ोन आया। उन्होंने बताया कि एस. डबल्यू. वॉर्ड में जब वह अपने एक रिश्तेदार से मिलने गए तो वहाँ के रेज़िडेंट डॉक्टर राहुल ने उनसे बदतमीज़ी की और बात बढ़ने पर उनसे हाथापाई की। मैंने तुरंत डॉ. सुनित राणावत को वहाँ भेजा। डॉ. सुब्रतो बनर्जी की यूनिट की घटना थी इसलिए उन्हें भी बुला लिया।

मैं और डॉ. बनर्जी साथ साथ ही वहाँ पहुँचे। डॉ. धर्म सिंह के हाथ से चोट के कारण खून बह रहा था। धर्म सिंह ने बताया कि अपने रिश्तेदार के बारे में जब डॉ. राहुल से पूछा तो उसने उनकी ओर ध्यान नहीं दिया। जब डॉ. धर्म सिंह ने थोड़ी तेज़ आवाज़ में अपना परिचय देते हुए पूछा तो डॉ. राहुल भी तेज़ आवाज़ में बदतमीज़ी से बोला। बात आगे बढ़ी तो हाथापाई हो गई।

परिचय के बाद भी सीनियर के साथ इस प्रकार का व्यवहार अनुचित था। इसलिए मैंने राहुल को दोषी माना। उसने भी अपनी ग़लती स्वीकार कर ली। तब मैंने डॉ. धर्म सिंह से पूछा, ''क्या सज़ा दी जाए?'' उसने कहा, ''सर आप ही बताएँ।'' मैंने कहा, ''या तो हम इसको यहीं पीट देते हैं या पुलिस में केस दर्ज करवा देते हैं।''

धर्मसिंह ने कहा, ''दोनों ही नहीं, सर।''

''तो फिर फ़ैसला मुझ पर छोड़ दो।'' डॉ. धर्म सिंह और डॉ. राहुल मान गए।

तब मैंने डॉ. राहुल को तीन काम करने को कहा।

''पहला काम,'' मैंने डॉ. राहुल से कहा, ''अपने बड़े भाई समान डॉ. धर्म सिंह के पैर छूकर माफ़ी माँगो। दूसरा, किसी ज़रूरतमंद रोगी को रक्तदान दो। तीसरा, एक महीने में डॉ. धर्म सिंह को अपना दोस्त बना लो।'' डॉ. राहुल ने तीनों बातें स्वीकार करते हुए डॉ. धर्म सिंह के पैर छूकर माफ़ी माँगी। रक्तदान के लिए मैंने डॉ. बनर्जी को रोगी खोजने को कहा।

इतने में डॉ. धर्म सिंह बोले, ''सर, मैं इसको दो–तीन चाँटे मारना चाहता हूँ।'' मैंने कहा, ''फ़ैसले के बाद और पैर छूकर माफ़ी माँगने के बाद यह उचित नहीं है।'' उन्होंने कहा, ''मैं प्राचार्य से शिकायत करूँगा।'' मैंने कहा, ''जैसी आपकी इच्छा।'' प्राचार्य ने इस प्रकरण को कॉलेज की अनुशासन समिति को दिया। अगले 15 दिन अनुशासन कमेटी में बयान हुए, माता–पिता को बुलाया गया और अंत में 7 दिनों के लिए राहुल का निष्कासन हुआ। दोनों को चेतावनी देकर मामला समाप्त हुआ। तब तक एक महीना ख़त्म हो गया। राहुल ने निष्कासन समाप्त होने के बाद दोबारा ड्यूटी जॉइन कर ली थी। तब मैंने राहुल को बुलाया और पूछा, ''दो काम जो बाक़ी रह गए थे, उनका क्या हुआ? तुमने रक्तदान और डॉ. धर्म सिंह को मित्र बनाने का वादा किया था।''

''सर, मैं रक्तदान तो दे दूँगा, लेकिन डॉ. धर्म सिंह बहुत गुस्से में हैं। हो सकता है मैं उनके पास जाऊँ तो हाथापाई करने लग जाएँ। मेरे पिताजी ने भी कहा है कि उनसे संभल कर रहना। कभी भी हमला कर चोट पहुँचा सकता है। ''मैंने कहा,'' क्या तुम एक प्रयोग करोगे? ''उसने कहा,'' बताएँ सर।'' ''तुम कल सुबह 6 बजे डॉ. धर्म सिंह के घर जाओ। वहाँ उनसे कहना, ''सर, आपकी इच्छा थी कि दो चाँटे लगाऊँ। मैं हाजिर हूँ। अब चाँटे लगा कर अपनी इच्छा पूरी करें,'' ''सर, यदि वे सचमुच मुझे मारने लगे, तो? मुझे डर लग रहा है।''

मैंने डॉ. सुनित राणावत को बुलाया और कहा कि इस बच्चे के साथ आप जाएँ।

अगले दिन डॉ. सुनित राणावत की कार में डॉ. राहुल, डॉ. धर्म सिंह के घर गए। डॉ. राणावत घर के बाहर रुक गए। डॉ. राहुल कार से उतरकर डॉ. धर्म सिंह के घर के दरवाज़े की ओर बढ़ा। बीच में मुड़कर वह पीछे देख लेता था, यह तसल्ली करने के लिए कि कहीं डॉ. राणावत उसे छोड़ तो नहीं गए। घंटी बजाकर वह घर के अंदर चला गया। 15 मिनट हो गए, 20 मिनट हो गए, 25 मिनट हो गए। अब डॉ. राणावत का धैर्य जवाब दे गया। उन्होंने मुझे फ़ोन लगाया। इतने में डॉ. सुनित राणावत क्या देखते हैं कि हँसता–हँसता डॉ. राहुल दरवाज़े से बाहर निकला। डॉ. राहुल बोला, ''इतने बुरे आदमी नहीं हैं डॉ. धर्म सिंह! मुझे छोटे भाई का स्नेह देते हुए कहा, ''खूब पढ़ो, बड़े आदमी बनो।''

इस प्रयोग के प्रभाव

इस घटना में डॉ. राहुल द्वारा पैर छूकर माफ़ी माँगने के उपरांत डॉ. धर्म सिंह का यह कथन कि 2–3 चाँटे मार लेता हूँ, नैतिक नहीं था। वह भी पहले पिटाई से इंकार करने के बाद और डॉ. राहुल द्वारा पैर छूकर माफ़ी माँगने के बाद। मैं अक्सर इस घटना का उल्लेख गांधीजी के प्रयोग की विफलता के रूप में करता था। ऐसी स्थिति में मैंने गांधीजी द्वारा चंपारण में किए गए प्रयोग को दोहराने की ठानी। चंपारण में जब गांधीजी ने आंदोलन किया तो वहाँ के एक दबंग ज़मींदार ने कहा कि यदि गांधी उसे अकेला मिल जाए तो वह उसको मार देगा। उस ज़मींदार पर कई हत्याओं के मुकदमे चल रहे थे। लोगों ने गांधीजी को चेताया कि उस ज़मींदार की धमकी को वे गंभीरता से लें।

गांधीजी ने कहा, ''ठीक है।'' अगले दिन सुबह 6.00 बजे गांधीजी उस ज़मींदार के घर अकेले पहुँच गए। उन्होंने दरवाज़ा खटखटाया। आँखें मलते हुए ज़मींदार ने दरवाज़ा खोला। गांधीजी को देख एकदम हक्का–बक्का रह गया। तब गांधीजी बोले, ''मैंने सुना था, आप अकेले में मुझे मारना चाहते हो। दिन में तो बहुत से लोग मुझे घेरे रहते हैं, इसलिए सुबह–सुबह अकेला ही आ गया हूँ। अब आप मुझे मारकर अपनी इच्छा पूरी करें।'' ज़मींदार गांधीजी के पैरों में गिर गया और उनका शिष्य बन गया। डॉ. राहुल ने इस तरीक़े को सफलता से प्रयोग में लिया और डॉ. धर्म सिंह को अपना मित्र बना लिया।

4. हड़ताल टली, शराब छूटी

रविवार के दिन 9 बजे डॉ. दुबे का फ़ोन आया कि वॉर्ड बॉय हड़ताल पर चले गए हैं। कारण पूछने पर पता लगा कि न्यूरोसर्जन डॉ. मनीष ने काम में लापरवाही के कारण एक वॉर्ड बॉय को चाँटा मार दिया और इसी क़ारण सब वॉर्ड बॉय हड़ताल पर चले गए। डॉ. दुबे, डॉ. राजेश और डॉ. रामावतार दोनों पक्षों से बात कर रहे थे। क़रीब 11 बजे जब मैं पहुँचा तो मामला सुलझ चुका था। अंदर कमरे में डॉ. मनीष बैठे थे। उन्होंने कहा, ''सर, ग़ुस्सा आ गया था, ग़लती हो गई।'' ''क्या प्रायश्चित्त करोगे?'' पूछने पर उसने कहा, ''आज से, सबसे प्रिय चीज़ जर्दा छोड़ दूँगा।''

बाहर वाले कमरे में वॉर्ड बॉय एसोसिएशन के नेता श्री महेन्द्र सिंह अपने साथियों के साथ खड़े थे। मेरे आते ही महेन्द्र सिंह बोले, ''सर, हमारे संगठन के वॉर्ड बॉय कर्मचारियों की आपके डॉक्टर लोग पिटाई कर देते हैं। ऐसा शोषण हम नहीं चलने देंगे।'' मैंने कहा, ''चाँटा मारना ग़लत है और इसका प्रबंध भी ऐसा करेंगे कि ग़लती करने वाला आइंदा ऐसी ग़लती कभी नहीं करे। लेकिन एक बात आप बताएँ, हड़ताल पर जाकर काम बंद करना उचित था या बातचीत कर हल निकालना? रविवार के दिन दो घंटे हड़ताल से रोगियों को भारी दिक़्क़त हुई है।'' उसने भी अपनी ग़लती मानी। ''प्रायश्चित्त में आज से शराब छोड़ देता हूँ,'' महेन्द्र सिंह ने कहा।

इस घटना के एक साल बाद पता किया तो मालूम चला कि श्री महेन्द्र सिंह पक्के रहे और उन्होंने शराब शुरू नहीं की लेकिन डॉ. मनीष अपने को रोक नहीं सके

और कुछ माह बाद दुबारा तंबाकू लेने लग गये।

इस प्रयोग के प्रभाव

प्रायश्चित्त में तम्बाकू और शराब छोड़ने से एक पंथ दो काज वाली बात चरितार्थ हुई। जहाँ एक ओर कर्मचारियों में काम के प्रति कर्तव्य बोध जागृत हुआ वहीं दूसरी ओर प्रायश्चित्त स्वरूप उनकी नशे की आदत छूट गई। आपस का मनमुटाव भी ख़त्म हो गया। ग़लती प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण आयाम था कि ग़लती ग़लत होती है न कि इंसान ग़लत होता है। ग़लती से नफ़रत और इंसान से मोहब्बत, यही जज़्बा पैदा करते हैं।

5. लड़ाकू नेता : अहिंसा से हारी हिंसा

इमरजेंसी और गर्ल्स हॉस्टल के बीच की सड़क पर यातायात का दबाव रहता था। गाड़ियों के हॉर्न और गाड़ियों से निकलने वाले धुएँ के कारण काफ़ी प्रदूषण रहता था। ऐसी स्थिति में निर्णय लिया गया कि इस सड़क पर गेट नं. 1 को बंद कर दिया जाए। गर्ल्स हॉस्टल की छात्राओं ने भी गेट नं. 1 को बन्द करने की माँग की थी। रविवार के दिन जब गेट बंद कर दिया गया तो दिन में तो कुछ नहीं हुआ लेकिन रात को डॉ. सुनित राणावत का फ़ोन आया कि किसी ने ताला तोड़ दिया है। मैंने कहा, ''कोई बात नहीं, एक नया ताला लगवा दो।'' दूसरे दिन फिर ताला टूट गया। मुझे बताया गया कि एक नर्सिंग कर्मचारी नेता यह काम कर रहा है। आसपास रहने वाले कर्मचारियों को बुलाया तो गेट बंद करने के लिए सभी सहमत थे। डॉ. सुनित राणावत का मत था कि उस कर्मचारी को गिरफ़्तार करवाना चाहिये। मैंने गिरफ़्तार करवाने के बजाय आधा दर्जन नए ताले ख़रीदकर लाने को कहा। अगले दिन भी दो बार ताले टूटे। चार तालों को तोड़ने के बाद खीझकर और थककर वह कर्मचारी नेता मेरे ऑफ़िस आया। क़रीब आधे घंटे की बातचीत के बाद वह गेट बंद होने की बात से सहमत होकर चला गया। प्रायश्चित्त करने हेतु गांधीजी की एक सी डी उसे देखने के लिए दी।

इस प्रयोग के प्रभाव

हिंसा से कई गुना ज़्यादा शक्ति होती है, अहिंसा में। क्रोध में भरकर उस कर्मचारी ने एक बार, दो बार नहीं, चार बार ताले तोड़े। लेकिन गेट खुला रखवाने में सफलता नहीं मिली। न ही वह अपने आपको गिरफ़्तार करवा पाया। गिरफ़्तार होता तो वह इसे आंदोलन का मुद्दा बनाता। अहिंसा जब निडरता के साथ होती है, तो हिंसा से कई गुना ज़्यादा शक्तिशाली होती है।

6. परिजनों से नोक-झोंक : रोगी संवाद से समाधान

सवाई मानसिंह अस्पताल में आने वाले रोगियों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। आउटडोर ही नहीं, वॉर्ड में भी रोगियों को बिस्तर उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। उदाहरण के लिए मेडिसिन की एक यूनिट के पुरुष वॉर्ड में 20 बिस्तर होते हैं। जबकि भर्ती के दिन करीब 50 लोग भर्ती होते हैं।

भर्ती के दिन से पहले साधारणतः 10 बिस्तर भरे होते हैं। नए रोगियों को 10

बिस्तर ही मिल पाते हैं। 20 रोगियों को बैंच पर लिटाते हैं तो बाकी 20, ज़मीन पर गद्दा लगाकर लेटते हैं। अक्सर रोगी बड़ी अपेक्षा लिए हुए दूर–दूर से एस.एम.एस. अस्पताल आते हैं। लेकिन इतनी अधिक संख्या में आने वाले रोगियों की तुलना में बिस्तर की संख्या बहुत कम है। साथ ही देखभाल करने वाले नर्सिंग कर्मचारियों की संख्या भी अपर्याप्त है। ऐसी स्थिति में अपेक्षा अनुरूप इलाज न मिलने पर अक्सर नोक झोंक हो जाती है। दूर दराज से उम्मीद के साथ आने वाले ऐसे रोगियों और उनके परिजनों की अपेक्षा पर खरे उतरने का पहला कदम होता है, अच्छा संवाद। इसे स्थापित करने हेतु भर्ती के बाद वॉर्ड में मैंने रोगियों के परिजनों की सप्ताह में एक बार कक्षा शुरू की। इसमें वॉर्ड के सभी डॉक्टर और कंपाउंडर भी उपस्थित रहते थे। रोगियों की सेवा करने के कुछ बिंदु परिजनों को सिखाए जाते थे। बुख़ार कैसे नापें, बेहोश रोगी को कैसे खिलाएँ, हार्ट अटैक के रोगी को कब खिलाएँ, कब चलाएँ आदि बातें रोगियों के परिजनों को सिखाई जाती थीं। तंबाकू और शराब का सेवन करने वाले जो रोगी भर्ती होते थे, उनके बारे में भी अन्य रोगियों को बताया जाता था कि कैसे नशे के सेवन ने उन रोगियों को मरणासन्न हालत में पहुँचाया। उनकी हालत देख बहुत से स्वस्थ लोग इन नशों को कभी न करने या त्यागने की प्रतिज्ञा करते थे। उसी कक्षा के दौरान ऐसे रोगियों की पहचान की जाती थी, जो इलाज का ख़र्च उठाने में सक्षम नहीं होते थे। उन रोगियों की मदद हेतु उपस्थित लोग चंदा देते थे। पहला चंदा मैं अपनी जेब से 100 रुपये निकालकर देता था। वॉर्ड में और टॉयलेट में सफ़ाई के बारे में ध्यान रखने के कुछ बिंदुओं पर भी चर्चा की जाती थी। सफ़ाई की चर्चा कंपाउंडर करते थे।

इस प्रयोग के प्रभाव

कई बार ऐसा देखा जाता था कि हार्ट अटैक के रोगी शुरू के दिनों में शौच के लिए चले जाते थे और कुछ एक को दुबारा दिल का दौरा पड़ जाता था। भोजन या पानी किसी भी रोगी को लेटी हुई अवस्था में देने से मृत्यु भी हो सकती है। इसी प्रकार की 8–10 बातें जो रोगियों के लिए आवश्यक होती हैं, उन बातों को इस कक्षा में परिजनों को सिखाया जाता था। उनका अनुसरण कर वे अपने रोगी की ज़्यादा अच्छी देखभाल करने लगते थे।

इस संवाद से वॉर्ड के रोगियों में एक विश्वास जागृत होता था और छोटी किन्तु महत्वपूर्ण जानकारी मिलने के बाद परिजन रोगियों की सेवा ज़्यादा अच्छे तरीक़े से कर पाते थे। इस प्रकार के नियमित संवाद के कारण हमारे वॉर्ड में कहा–सुनी की घटनाएँ भी बहुत कम हो गईं।

7. हिंसक परिजनों ने दी सेवा में ड्यूटी

2 एफ़ वॉर्ड में एक गंभीर रोगी की मृत्यु होने पर उसके परिजनों ने रेज़िडेंट डॉक्टर पर लापरवाही का आरोप लगाते हुए धक्का–मुक्की की। इस पर पुलिस आई और रोगी के शव को मोर्चरी में रखवा दिया। अगले दिन रोगी के परिजन विधायक

श्री किरोड़ीलाल मीणा के घर गए। वहाँ मौजूद लोगों ने परिजनों के साथ मिलकर पुलिस स्टेशन पर धरना देने की बात कही। रेज़िडेंट चिकित्सकों ने मारपीट का और परिजनों ने लापरवाही का केस पुलिस थाने में दर्ज करवा दिया। ऐसी स्थिति में डॉ. सी.एल. नवल, डॉ. अनिल दुबे के साथ लंबी बातचीत में समाधान निकला और पोस्टमॉर्टम के बाद परिजन शव को ले जाने को राज़ी हो गये। दो दिनों के बाद परिजनों के साथ चिकित्सकों की मीटिंग रखी गई। इसमें परिजनों ने स्वीकार किया कि अचानक हुई मृत्यु से उन्हें आघात पहुँचा और उन्हें रेज़िडेंट डॉक्टर पर क्रोध आ गया। वे अपने बर्ताव पर शर्मिन्दा थे। प्रायश्चित्त में दोनों परिजनों ने लावारिस रोगियों की मदद हेतु सेवा में ड्यूटी दी।

इस प्रयोग के प्रभाव

बातचीत और प्रायश्चित्त के प्रयोग से चिकित्सक और परिजनों के बीच आई कटुता समाप्त हो गई और साथ ही पुलिस केस में भी राज़ीनामा हो गया। एम.बी.बी.एस. के बाद जब एक छात्र रेज़िडेंट डॉक्टर बनता है तो उसकी जीवनशैली में ज़बरदस्त बदलाव आता है। एक वॉर्ड के 30–40 लोगों का इलाज वह 24 घंटे करता है। सुबह 3–4 घंटे का सीनियर डॉक्टरों के राउंड का समय छोड़ दें तो बाक़ी समय रेज़िडेंट चिकित्सक ही उन लोगों का भगवान होता है। एक ओर ज़बरदस्त पूछ, दूसरी ओर वरिष्ठ डॉक्टरों की फ़टकार और तीसरी ओर काम तथा पढ़ाई का बोझ। अधिकांश रेज़िडेंट चिकित्सक इस प्रकार की ट्रेनिंग कुशलतापूर्वक पूरी कर लेते हैं। लेकिन अलग–अलग स्थितियों में कई बार उन्हें गुस्सा आ जाता है और स्थिति बिगड़ जाती है। जो रोगी आते हैं उनमें से गंभीर बीमारी से ग्रसित रोगी के परिजनों की मानसिक स्थिति भी सामान्य नहीं होती। छोटी–सी बात पर उनके परिजन अपना आपा खो बैठते हैं। ऐसी स्थिति में हुए वाद–विवाद या मारपीट का समाधान गार्ड, पुलिस या सी सी टी वी लगाने में नहीं है। इस प्रकार की घटनाओं का हल अधिकारियों की अहिंसक तरीके से की गई बातचीत में निहित होता है। प्रायश्चित्त का उपयोग इसमें काफ़ी असरदार है। ■ ■ ■

5

लेने से ज़्यादा देने की ख़ुशी

आज के युग में समाज में धन का महत्व बहुत ज़्यादा है। अधिकांश नौजवानों के मन में थोड़े समय में बहुत धनवान बनने की चाहत होती है। इसी सपने को पूरा करने में आज के नौजवान जी–जान से जुट जाते हैं। कई बार हम भूल जाते हैं कि धन की सीमाएँ हैं, जबकि जीवन का लक्ष्य है, ख़ुशी प्राप्त करना। गांधीजी धन कमाने को बुरा नहीं मानते थे। उनका मानना था कि धन आवश्यक है लेकिन धन अर्जन और विसर्जन के तरीक़े में अच्छाई और बुराई निहित होती है।

मेहनत कर, अपना वांछित मेहनताना लेकर धन अर्जन करना ईमानदारी है। इसके विपरीत किसी की मजबूरी का फ़ायदा उठाकर वांछित मेहनताने से ज़्यादा धन अर्जन करना बेईमानी है। कई नौजवान नौकरी से पहले मेरे पास यह पता करने आते थे कि कहीं अस्थमा के कारण वे मेडिकल जाँच में फ़ेल तो नहीं हो जाएँगे। उन सभी को इलाज और राय देने के बाद 'उपयोगी धन : एक प्रयोग' करने की सलाह देता था। उन्हें बताता था कि यदि स्वयं पर ख़र्च करने से ज़्यादा ख़ुशी मजबूर की मदद में मिले तो नौकरी के बाद आने वाले मजबूर व्यक्ति की मदद कर ख़ुशियाँ बटोरना न कि मज़बुरी के एवज़ में ख़ुद पर ख़र्च करने के लिए रिश्वत लेना। ऐसी छोटी–छोटी बातें कालांतर में समाज में बड़ा परिवर्तन ला सकती हैं।

ईमानदारी की उपयोगिता समझाने के लिए मैं अक्सर अपने सम्पर्क में आने वाले लोगों को कुछ प्रयोग करने को देता था। इस प्रकार किए गए कुछ प्रयोग निम्नांकित हैं।

1. प्रलोभन देने का रास्ता त्याग मदद में जुटा अधिकारी

तेज़ बुख़ार व खाँसी से पीड़ित एक लड़की अस्पताल में भर्ती हुई। उसे निमोनिया की शिकायत थी और वह एक सरकारी अधिकारी की पुत्री थी। इलाज से थोड़ा सुधार आया। उसके पिताजी मुझ से मिलने घर आये। मैंने बच्ची की स्थिति से

उन्हें अवगत करवा दिया। वे संतुष्ट होकर मुझे 500 रुपये देने लगे। भर्ती मरीज़ के परिजन से घर पर फ़ीस लेना रिश्वत है। मैंने रुपए लेने से इंकार किया तो उन्होंने कहा, ''हमने आपका समय लिया, उसका मेहनताना ही है।''

इस पर मैंने उनसे 500 रुपये लेते हुए कहा, ''पैसे लेकर मैंने आपकी इच्छा पूरी की। अब आप मेरा एक व्यक्तिगत काम पूरा कर सकेंगे?''

''अवश्य,'' उन्होंने कहा।

मैंने उनके द्वारा दिए गए पैसे उन्हें देते हुए कहा, ''इसमें से 250 रुपए आप अपने ऊपर ख़र्च करना। उस काम पर, जिससे आपको सबसे ज़्यादा ख़ुशी मिले। बाक़ी बचे 250 रुपयों से आप अस्पताल में भर्ती किसी दुःखी व्यक्ति की मदद करना।''

दो–तीन दिनों के बाद उन्होंने बताया, ''बारिश से बचने के लिए छाता उन्होंने ख़रीदा क्योंकि अस्पताल आते–जाते समय इसकी आवश्यकता थी। बाक़ी बचे 250 रुपयों से एक ग़रीब रोगी को दवा दिलवाई।''

छाता ख़रीदना हालांकि आवश्यकता थी, फिर भी उन्हें उससे कहीं अधिक ख़ुशी उस ग़रीब रोगी को दवा दिलवाने में मिली। ख़ुद पर ख़र्च करने से भी ज़्यादा ख़ुशी दूसरे की मदद में मिलती है, यह मनुष्य की प्रवृत्ति है। अपने पास आने वाले मजबूर लोगों की यदि बिना पैसे लिए आप मदद करेंगे तो इस प्रकार की ख़ुशी बार–बार नियमित रूप से पाएँगे। उन्होंने ऐसा करने का वादा किया।

इस प्रयोग के प्रभाव

इस अधिकारी ने जब दी गई राशि का प्रयोग किया और पाया कि मदद करने से ख़ुद पर ख़र्च करने से भी ज़्यादा ख़ुशी मिलती है तो वे आत्मचिंतन करने के लिये विवश हुए।

2. सेवा अपनों की या लाचार की, ज़्यादा ख़ुशी किसमें?

एक महिला एक लाचार वृद्ध व्यक्ति को मेरे घर दिखाने लाई। उस व्यक्ति को देख मैंने दवा का पर्चा लिख दिया। औरत ने कहा कि उस वृद्ध व्यक्ति का कोई भी इस दुनिया में नहीं है। मैंने उससे फ़ीस लेने से इंकार करते हुए उस औरत से पूछा, ''इसकी मदद करने से तुम्हें कितनी ख़ुशी मिल रही है?'' ''बहुत ख़ुशी मिल रही है।''

''क्या आपने कभी अपने माता–पिता को भी डॉक्टर को दिखाया?''

''पिछले साल बीमार होने पर पिताजी को डॉक्टर को दिखाया था,'' उस औरत ने कहा।

''यदि तुलना करो तो पिताजी को दिखाते समय तुम्हें ज़्यादा ख़ुशी का अहसास हुआ या आज इस लाचार वृद्ध को दिखाने में?''

''आज इस बेसहारा की मदद से मुझे पुण्य मिला, जबकि पिताजी को दिखाना मेरा कर्तव्य था। इसको दिखाने में ज़्यादा ख़ुशी मिली। मेरे इस पुण्य के कार्य को देखकर तो आपने भी फ़ीस नहीं ली,'' वह बोली।

इस प्रयोग के प्रभाव

भगवान ने इंसान का मन बनाया ही ऐसा है कि उसे दूसरे की मदद करने से ज़्यादा ख़ुशी मिलती है, कई बार तो अपनों की सेवा से भी ज़्यादा। ज़रूरत है ऐसे प्रयोगों को प्रोत्साहन देने की।

3. दूसरों की मदद करके किया अपना इलाज

एक 30 वर्षीय युवक जिसे साँस की तकलीफ़ थी, अपने पिताजी के साथ मेरे पास आया। निरीक्षण के उपरांत प्रतीत हुआ कि अस्थमा न होकर उसे मानसिक समस्या होने की संभावना ज़्यादा थी। मैंने पूछा, ''क्या काम–काज मंदा है?'' युवक ने कहा कि 3 वर्षों में उसका किराने का व्यवसाय बीस गुणा बढ़ गया है। फिर क्यों परेशान हो?'' मैंने पूछा। युवक के पिताजी बोले, ''इसने एल्टो कार ख़रीदी है, लेकिन इसकी पत्नी डिज़ायर लेना चाहती है। यह भी इसकी परेशानी का एक कारण है।''

मैंने उसे कुछ टैस्ट लिखे और फिर 100 रुपए ख़ुद पर और 100 रुपए मदद में ख़र्च करने का काम दिया। उसे बताया कि ख़ुद पर भी 100 रुपए ऐसे ख़र्च करना कि ज़्यादा से ज़्यादा ख़ुशी मिले, मदद भी अच्छी तरह करना। शाम को उसने रिपोर्ट दिखाई तो सभी सामान्य थीं अर्थात् उसको अस्थमा नहीं बल्कि मानसिक परेशानी के कारण श्वास की तकलीफ़ का भ्रम था। 200 रुपए ख़र्च करने के बारे में उसने बताया कि मुझे दिखाकर बाहर गया तो प्यास लग रही थी।

उसने पास ही एक जूस के सेंटर पर जाकर दो गिलास रस पिया। बहुत अच्छा लगा। थोड़ी दूर जाने पर उसे तीन लड़के मिले जो काफ़ी निर्धन लगे। वे कचरा बीन रहे थे। उसने उनसे पूछा, ''क्या भूख लगी है?'' वे बोले, ''हाँ।'' पास ही एक मिठाई की दुकान पर उन्हें ले गया और पूछा, ''क्या खाओगे?'' ''जलेबी और समोसा,'' लड़के बोले। ''जलेबी, समोसा खाकर लड़कों ने बहुत धन्यवाद दिया। सर, जूस पीकर शरीर तृप्त हो गया, अच्छा लगा। लेकिन उन भूखे लड़कों को समोसा, जलेबी खिलाकर मन तृप्त हो गया।''

''ज़्यादा ख़ुशी लड़कों को खिलाने में मिली,'' उसने कहा। मैंने कहा, ''हर सप्ताह यह प्रैक्टिकल करो, यही तुम्हारा इलाज है।'' पैर छूकर, हाँ कहकर, वह युवक चला गया।

इस प्रयोग के प्रभाव

तीन वर्षों में व्यवसाय 20 गुना बढ़ने के बावजूद वह रोगी ख़ुश नहीं था क्योंकि पत्नी की 'डिज़ायर कार' लेने की इच्छा वह पूरी नहीं कर पा रहा था। कई बार ऐसे रोग का इलाज दवा की बजाय सही प्रकार की सलाह और सीख में निहित होता है। इस प्रयोग से यही सीख मिलती है।

4. प्रायश्चित्त में सीखा पैसे से ख़ुशी खरीदना

कुछ गंभीर दमा के रोगियों को बाईपैप नामक वैंटीलेटर मशीन की ज़रूरत पड़ती

है। बाज़ार में यह मशीन काफ़ी महँगी मिलती है। श्री प्रदीप शर्मा और श्री हितेन्द्र राठौड़ बाईपैप मशीन की कंपनी के मैनेजर थे। उन्होंने मुझे यह विश्वास दिलाया था कि वे हमारे रोगियों को कम कीमत पर यह मशीन देंगे। लेकिन कुछ रोगियों को श्री प्रदीप शर्मा ने बाज़ार भाव में मशीन दी।

मेरे कहने पर, उन्होंने वादा किए गए पैसों से ज़्यादा लिए गए रुपए उन रोगियों को वापस कर दिये। लेकिन उनकी इस ग़लती पर अंकुश लगाने के लिए मैंने मैनेजर प्रदीप शर्मा को बुलवाया। श्री प्रदीप और श्री हितेन्द्र दोनों मेरे पास आए। श्री प्रदीप ने ग़लती स्वीकार करते हुए भविष्य में ऐसा नहीं करने का वादा किया।

तब पैसा जीवन में कितना महत्वपूर्ण है, यह जानने के लिए मैंने उनसे एक प्रयोग करने को कहा। उन्हें मैंने दो सौ रुपए दिए। 100 रुपए स्वयं पर और 100 रुपए दूसरे की मदद में ख़र्च करने को कहा। श्री प्रदीप ने कहा कि दूसरे दिन सुबह से बड़ी कशमकश थी कि कैसे अपने ऊपर ख़र्च करूँ? फिर शाम को विचार आया और वे अपनी पत्नी को वैशाली नगर के एक रेस्टोरेन्ट में ले गए और दोनों ने मिलकर कॉफ़ी पी। कोई एक साल के अंतराल पर वे दोनों घर से बाहर चिंतामुक्त हो कॉफ़ी पीने आए थे। बहुत ख़ुशी मिली, उन्हें अहसास हुआ कि सौ रुपए में इतनी ख़ुशी भी मिल सकती है।

अब अगले दिन बारी आई किसी और पर मदद में ख़र्च करने की। इधर–उधर नज़र दौड़ाने पर उन्हें समझ में आया कि घर के पास ही एक इमारत बन रही थी। वहीं एक व्यक्ति अपनी पत्नी के साथ मजदूरी करता था। उनका 7–8 साल का बच्चा बजरी के ढेर पर बैठा था। वह बच्चा कभी खेलता, कभी रोता, कभी रोटी माँगता। उसकी माँ बीच–बीच में उसे झिड़क देती थी। यह देख श्री प्रदीप उसके पास 5 रुपए का एक बिस्किट का पैकेट लेकर गये। बच्चे ने बड़े चाव से बिस्किट खाए। तब उन्होंने बच्चे के पिताजी को समझाया कि यह उम्र स्कूल भेजने की है और उसे बच्चे को स्कूल भेजना चाहिए। लेकिन पिताजी की समझ में यह बात नहीं आई। तब श्री प्रदीप बच्चे को पास के बाज़ार में एक खिलौने की दुकान में ले गए और बच्चे को एक खिलौना पसंद करने को कहा। बच्चे ने रिमोट से चलने वाली कार पसंद की। 90 रुपए की कार आई। वापस आने पर बच्चा पहले अपने माता–पिता और फिर दोस्तों को वह कार रिमोट से चला कर चाव से दिखाने लगा। इसे देख श्री प्रदीप आनंदित हो उठे। उन्होंने बताया कि पत्नी के साथ 100 रुपये की काफ़ी पीना बहुत ही ख़ुशी के पल थे उनके व्यस्त जीवन में। लेकिन बच्चे को खिलौना दिलाने की ख़ुशी कॉफ़ी पीने के पलों की ख़ुशी से भी कहीं अधिक थी। ''मैं अब हमेशा रोगी हित में काम करूँगा, लालसा नहीं पालूँगा'', श्री प्रदीप बोले।

इस प्रयोग के प्रभाव

कई बार जीवन का लक्ष्य धन अर्जन तक ही सिमट कर रह जाता है। दूसरे पर धन ख़र्च कर ख़शी प्राप्त करना तो दूर स्वयं पर ख़र्च कर ख़ुशी पाने से भी वंचित रह

जाते हैं। श्री प्रदीप को पत्नी के साथ 100 रुपए की कॉफ़ी पीने में काफ़ी समय बाद आनंद मिला। निर्धन बच्चे को दिलाई कार की घटना बताते समय उनका प्रफुल्लित चेहरा देखकर बहुत अच्छा लगा। उन्होंने महसूस किया, मदद में मिलने वाला आनंद।

5. परोपकार कल नहीं, आज ही

बहुत सालों पहले एक रविवार को मैं चैंबर में बैठा रोगियों को देख रहा था। तभी एक सज्जन अपनी वृद्ध माताजी को लेकर आये। उनके साथ मेरे परिचित श्री जय कुमार डोकवाल थे। श्री डोकवाल ने उनका परिचय करवाते हुए कहा कि श्री सम्पत जी बच्छावत बहुत ही सेवाभावी स्वभाव के हैं और बहुत से रोगी जो कष्ट में थे, उनकी मदद उन्होंने की थी। मेरे पास ऐसे रोगी आते थे जिनके फेफड़े धूम्रपान से क्षतिग्रस्त हो जाते थे, इतना गंभीर सीओपीडी रोग हो जाता था कि उन्हें बाई पैप नामक वैंटीलेटर मशीन पर रखना पड़ता था। रोगी रोज़ाना 10–12 घंटे इस मशीन को इस्तेमाल करते थे। एक मशीन की क़ीमत उन दिनों एक लाख रुपए के आसपास थी। हम लोग ऐसे रोगियों को अस्थमा भवन की ओर से कुछ मदद देकर जीवनभर के लिए 20–30 हज़ार रुपए में यह मशीन उपलब्ध करवाते थे। सम्पत जी ने इस प्रॉजैक्ट का उस वर्ष का ख़र्चा पूछा। ख़र्चा करीब 6 लाख रुपए का था। सम्पत जी ने पूछा, ''डॉ. साहब आज किसे कहते है?'' मैंने कहा, ''कल से पहले के समय तक आज की सीमा है।'' उन्होंने कहा ''मैं आज 24 घंटे का मानता हूँ और आज की सीमा ख़त्म होने से पहले इस बाईपैप प्रॉजैक्ट के लिए आवश्यक धनराशि का इंतज़ाम हो जायेगा। आज की सीमा होती है, कल पर सीमा का कोई बंधन नहीं है। वह 1 दिन, 5 दिन, 5 महीने या 5 साल का भी हो सकता है। उन्होंने 24 घंटों में धनराशि की व्यवस्था की जिससे इस गंभीर रोग से ग्रसित अनेक ग़रीब रोगियों को मदद मिली। इसी प्रकार के एक व्यक्ति हैं, श्री जय सिंह सेठिया जो कि अस्पताल के हर काम में ''इदम् शरीरम् परमार्थ साधनम'' के सिद्धांत पर काम करते हैं। रोगियों के हित के हर कार्य में वे सहयोग करते हैं।

इस प्रयोग के प्रभाव

श्री सम्पत जी बच्छावत मुझसे संभवतः पहली बार मिले थे और एक निवेदन पर इतना बड़ा निर्णय मेरे लिए अप्रत्याशित था। इस घटना के बाद पैसे के प्रति मेरे दृष्टिकोण में काफ़ी परिवर्तन आया। आगे सवाई मानसिंह अस्पताल में भी सम्पत जी का काफ़ी योगदान रहा। मेरे निवेदन पर न केवल पूरे अस्पताल में, बल्कि 3 छात्रावासों में भी उन्होंने शुद्ध पानी की व्यवस्था हेतु आर.ओ. संयंत्र लगवाए।

6. कमीशन लेता कंपाउंडर

एक कंपाउंडर बड़ा जोशीला था। रोगियों का काम भी भाग–भागकर करता था। लेकिन मुझे पता लगा कि वह बाज़ार से आने वाली दवाइयों में कमीशन लेता था। हालांकि इसके कोई सबूत नहीं थे लेकिन फिर भी लोग कहते थे कि वह ऐसे कामों में लिप्त रहता है।

मैंने उसे बुलाकर समझाया कि ऐसा करना ग़लत है। उसने वादा किया कि वह ऐसा नहीं करेगा। क़रीब तीन–चार महीनों बाद मुझे आभास हुआ कि वह अब भी ऐसा कर रहा है। मैंने उसे उसी दिन रिलीव कर दिया। वह घर आकर बहुत गिड़गिड़ाया तो मैंने पूछा, ''वादे के बाद कितना कमीशन लिया?'' ''सर, करीब 2500 रुपए।''

मैंने कहा कि निदेशालय से सवाई मानसिंह अस्पताल में नियुक्ति के आदेश ले आओ और 2500 रुपए ज़रूरतमंद रोगियों पर ख़र्च करो।

क़रीब एक महीने में उसके आदेश आए और वॉर्ड के ग़रीब रोगियों की सेवा में उसने 2500 रुपए ख़र्च किए।

इसके बाद मैंने पूछा, ''कमीशन के पैसे मिलते थे, तब ज़्यादा ख़ुशी मिलती थी या ग़रीब रोगियों की मदद की, इसमें?''

''मदद में ज़्यादा ख़ुशी मिली,'' यह था उसका जवाब।

इस प्रयोग के प्रभाव

कंपाउंडर ने जाना कि पैसे लेने के सुख की तुलना में ज़्यादा ख़ुशी पैसे से दूसरे की मदद करने से मिलती है। ज़रूरत है, इस बात को समय–समय पर प्रयोग करके महसूस करने की।

■ ■ ■

6

शराब जनित घटनाएँ : समाधान

आज के युग में शराब का चलन बहुत बढ़ गया है। शराब न केवल शरीर में बहुत सी बीमारियाँ पैदा करती है बल्कि सड़क दुर्घटनाओं और समाज में होने वाले अपराधों में भी इसका योगदान है। ''यदि मैं एक दिन के लिये तानाशाह बन जाऊँ, तो शराब पर प्रतिबंध मेरा पहला क़दम होगा।'' यह कथन था बापू का।

अस्पताल में मेरे कार्यकाल में शराब जनित कई घटनाएँ हुईं, जिनका ब्यौरा दे रहा हूँ।

1. माफ़ी ने बदला इंसान

होली से कुछ दिन पहले दोपहर के 3 बजे होंगे। तभी बेसमेंट से फ़ोन आया कि एक कर्मचारी शराब पीकर आ गया है और उसने सुरेश और सुधीर अजमेरा नामक दो कर्मचारियों को चाँटा मार दिया है। पुलिस आई और शराबी कर्मचारी सतपाल को गिरफ़्तार कर लिया। अस्पताल की नल, बिजली और अन्य व्यवस्थाओं को सुचारू रूप से चलाने की ज़िम्मेदारी बेसमेंट कर्मचारी संभालते हैं। इस घटना ने मुझे बड़ा व्याकुल कर दिया। मैं सोचने लगा कि इतनी बार शराब और तंबाकू छोड़ने की काउंसलिंग के बाद भी ऐसी घटनाएँ क्यों होती हैं? तभी एक विचार कौंधा कि क्यों नहीं गांधीजी के तरीके का परीक्षण किया जाए?

मैंने श्री सुरेश और श्री सुधीर अजमेरा को बुलाया और पूछा कि क्या वे एक प्रयोग करना चाहेंगे? ''क्या श्री सतपाल की ज़मानत तुम दे सकते हो?'' थोड़ी हिचक के बाद दोनों ने हाँ भर दी। सतपाल, सुरेश और अजमेरा द्वारा ज़मानत देने से रिहा हो गया। दूसरे दिन सतपाल आया, पैर छूकर माफ़ी माँगी और प्रतिज्ञा की कि जीवन में कभी भी शराब का सेवन नहीं करेगा। प्रायश्चित्त में उसने 'सेवा' में तीन ड्यूटी करने का वादा किया।

अगले दिन मैंने इन कर्मचारियों की मीटिंग बुलाई। घटना का विवरण देते हुए सुरेश और अजमेरा को स्टेज पर बुलाकर शाबासी दी। सभी ने सुरेश और सुधीर को बधाइयाँ दीं और सभा के अंत में दो और लोगों ने शराब छोड़ने की घोषणा की। सुरेश और सुधीर अजमेरा तंबाकू का सेवन करते थे। उन्होंने उसी दिन तंबाकू छोड़ने का संकल्प लिया। बाद में मुझे पता लगा कि सुरेश ने तो तंबाकू छोड़ दी लेकिन सुधीर अजमेरा अब भी तंबाकू ले रहा है।

सतपाल ने 'सेवा' में तीन दिन नहीं बल्कि 6 दिन ड्यूटी की। मैंने पूछा कि ''तुम्हारा प्रायश्चित्त तो 3 दिन का ही था, तुमने 6 दिन क्यों ड्यूटी की?''

''मुझे उस रोगी से लगाव हो गया,'' सतपाल ने कहा। ''साब, उस रोगी को हड्डी जोड़ने के लिए ऑपरेशन द्वारा एक यंत्र फ़िक्सेटर लगाया जाएगा। इसकी कीमत 10000 रुपए है। उस यंत्र की कंपनी वाले को भी प्रायश्चित्त करना था। उसने वह यंत्र लावारिस रोगी को मुफ़्त दे दिया।'' सच कहा जाए तो जब सच्चे मन से किसी पुण्य के काम को करते हैं तो भगवान भी उसकी मदद करते हैं।

क़रीब एक महीने बाद वह रोगी पूर्ण रूप से ठीक हो गया और अस्पताल से उसकी छुट्टी हो गई। वह राजस्थान का नहीं, झारखण्ड का मुस्लिम रोगी था। आज भी सतपाल को वह अपना भगवान मानता है।

इस प्रयोग के प्रभाव

तब से सतपाल ने शराब का सेवन नहीं किया है। अपने काम के प्रति वह और सजग हो गया है। मदद करने की ख़ुशी के ख़ज़ाने का रहस्य उसकी समझ में आ गया। श्री सुरेश और श्री सुधीर ने चाँटे का बदला चाँटा मारकर नहीं बल्कि ज़मानत रूपी मदद दे कर लिया। ऐसे आनंद का उनका पहला अनुभव था। इसी अनुभव के साथ श्री सुरेश ने सदा के लिए तंबाकू से छुटकारा पा लिया।

2. प्रायश्चित्त ने किया झगड़े का इलाज

एक दिन सुबह 6 बजे डॉ. रणधीर का फ़ोन आया कि गत रात को अस्पताल की एक ठेका एजेंसी ने एक होटल में कॉकटेल पार्टी दी। पार्टी में गये रेज़िडेंट्स में से दो को तोड़-फोड़ के आरोप में पुलिस ने गिरफ़्तार कर लिया है। मैंने पुलिस कमिश्नर श्री बी.एल. सोनी से बात की। उन्होंने उचित कार्यवाही का आश्वासन दिया। मैं सीधा थाने गया, वहाँ एस.एच.ओ. ने उन्हें 10 बजे छोड़ने का वादा किया। दोनों लड़कों को दस बजे छोड़ दिया गया। जानकारी ली तो पता चला कि कॉकटेल डिनर में पहले शराब कम पड़ गई और फिर खाना कम पड़ गया। नतीजा रेज़िडेंट डॉक्टर्स आक्रोश में आ गए। होटल के गार्ड्स की सख़्ती ने आग में घी का काम किया। कुछ रेज़िडेंट्स ने एक दो होटलकर्मियों को धक्का दिया। तभी पुलिस आई और इन दोनों को गिरफ़्तार कर लिया।

दूसरे दिन वे रेज़िडेंट्स मेरे पास ऑफ़िस आए। उन्होंने पुलिस पर तंग करने का आरोप लगाया। मैंने कहा, ''तुमने घटना के समय शराब पी रखी थी या नहीं?''

''सर, थोड़ी ली थी।''
तब मैं उन्हें समझाने लगा, ''काम दो तरह के होते हैं–अच्छे और बुरे। बुरे काम कौन–कौन से होते हैं?''
''चोरी, मारपीट, हत्या, रेप आदि।''
''क्या तुम करोगे?''
''नहीं, सर।''

मैंने पूछा, ''है कोई जादूगर जो तुमसे ये सारे बुरे काम करवा सकता है? शराब वह जादूगर है, जो इच्छा के विरूद्ध भी आपसे ये सारे काम करवा सकती है।'' इस बातचीत के दौरान, शराब लेने की ग़लती की ग्लानि उनके चेहरे पर झलक रही थी।
''सर, आज से हम शराब छोड़ते हैं और आगे कभी नहीं लेंगे।'' दोनों ने प्रतिज्ञा ली।

करीब 15 दिन बाद उस ठेका एजेंसी के मालिक मुझसे मिलने आए। मैंने कहा, ''डॉक्टर्स को डिनर देने के मामले में आपने बहुत ग़लतियाँ की हैं।''
''बॉस, मैंने क्या ग़लतियाँ कीं?'' उन्होंने पूछा।
''पहली ग़लतीः आपने कॉकटेल पार्टी के लिए मुझ से अनुमति नहीं ली।''
''दूसरी ग़लतीः नहीं पूछा तो कोई बात नहीं, लेकिन कॉकटेल की बजाय साधारण डिनर पार्टी नहीं रखी।''
''तीसरी ग़लतीः चलो कॉकटेल पार्टी कोई बात नहीं, लेकिन वहाँ की स्थिति तो आप संभाल लेते और कम से कम पुलिस को तो नहीं बुलाते।''
''चौथी ग़लतीः पुलिस बुलाई तो भी कोई बात नहीं, लेकिन कम से कम रेज़िडेंट्स को तो गिरफ़्तार नहीं होने देते।''
''पाँचवी ग़लतीः पुलिस ने गिरफ़्तार किया तो भी कोई बात नहीं, कम से कम उन रेज़िडेंट्स को छुड़ा तो लेते।''
''सॉरी बॉस, ग़लती हो गई।''
''तो प्रायश्चित्त क्या करोगे?'' तपाक से मैंने पूछा।
''जो आप कहेंगे,'' वे बोले। ''कितने रुपये की शराब पिलाई ?'' मैंने पूछा।
''करीब एक लाख रुपए की,'' वे बोले।
''क्या एक लाख रुपए अस्पताल में गार्डन–गमलों के विकास में खर्च कर पाओगे?''
''अवश्य,'' वे बोले।

प्रायश्चित्त में दान के पैसों से अगले तीन महीनों में अस्पताल के गार्डन का अच्छा विकास हुआ।

इस प्रयोग के प्रभाव

आज के समाज में, विशेष तौर से युवा रेज़िडेंटस में शराब का चलन आधुनिकता की निशानी बन गया है। रात–दिन काम में व्यस्त रेज़िडेन्ट डॉक्टर्स को जब भी कॉकटेल पार्टी का निमंत्रण मिलता है तो वे बड़ी रुचि से उसमें भाग लेते हैं। इस

प्रकार की अप्रिय घटना के बाद प्रायश्चित्त में रेज़िडेंट डॉक्टर्स का शराब छोड़ने का वादा उनमें सुधार का द्योतक है। कंपनी के मालिक ने बताया कि प्रायश्चित्त में किया गया बाग़ बगीचों का विकास उन्हें अच्छा लगा, पीड़ाजनक नहीं लगा।

3. आत्मदाह की धमकी देने वाला बना नेक चिकित्सक

रात के करीब 12 बजे थे। नींद में फ़ोन की घंटी सुनाई दी। फ़ोन करने वाला एक रेज़िडेंट था। उसने बताया कि पिछले महीने रेज़िडेंट हड़ताल अवधि के दो दिनों की तनख़ाह कटने का उसे बहुत दुःख है।

मैंने कहा, ''सुबह आ जाना बात करेंगे।'' उसने कहा कि नहीं। या तो तनख़ाह दिलाओ, अन्यथा वह मेरे ऑफ़िस के सामने अभी आत्मदाह कर लेगा। मैंने उसे समझाने की बहुत कोशिश की कि सरकार का नियम है, काम नहीं, तो तनख़ाह नहीं। लेकिन वह अपनी बात पर अड़ा रहा। उसकी बातचीत से लग रहा था कि उसने शराब पी रखी थी। 15 मिनट की बातचीत के बाद विशेष निष्कर्ष नहीं निकला तो मैंने फ़ोन काट दिया। उसका दुबारा फ़ोन आया तो मन में कुछ घबराहट के कारण फ़ोन नहीं उठाया। समझ में नहीं आ रहा था, क्या करूँ। इसी उधेड़बुन में नींद आ गई। सुबह आँख खुली तो मन में एक भय–सा था। अस्पताल की इन्क्वायरी पर फ़ोन कर पूछा, ''रात को सब ठीक था?'' मैं पूछना चाहता था कि किसी रेज़िडेंट ने आत्मदाह तो नहीं किया, लेकिन इतनी हिम्मत नहीं हुई। ड्यूटी स्टाफ़ ने कहा, ''सब ठीक रहा, सर।''

सुबह अस्पताल पहुँच कर जब मैंने कॉल ट्रेस किया तो पाया कि वह फ़ोन रेडियो डायग्नोसिस विभाग के एक रेज़िडेंट डॉक्टर का था। यह ब्रांच मेडिकल साइंस के सबसे होशियार छात्रों को ही मिलती है। मैंने उस रेज़िडेंट को बुलाया। आते ही उसने ग़लती स्वीकार की और कहा, ''सर शराब के नशे में ऐसा हो गया।'' आगे पूछने पर बताया कि उसके पिताजी गाँव में खेती करते हैं और बड़ा भाई शिक्षक है। मैंने उसके पिताजी से बात करवाने को कहा तो उसने पैर पकड़ लिए और आत्मग्लानि के साथ कहा, ''जीवन में कभी शराब नहीं पीऊँगा।''

''कितने रुपये की शराब पीते हो?''

''150 रुपए की प्रतिदिन।''

प्रायश्चित्त के बतौर उसको दो काम दिए गए। एक काम में उसे 150 रुपए ख़ुद पर ख़र्च करने थे, सबसे ज़्यादा ख़ुशी दिलाने वाली चीज़ पर। दूसरे काम में 150 रुपए से किसी ज़रूरतमंद की मदद करने को कहा। काम पूरा होने पर उसे बताना था कि ख़ुशी ज़्यादा किसमें मिली।

दो सप्ताह बाद वह दोबारा मिला। उसने बताया कि शराब उसने त्याग दी है। ख़ुद पर ख़र्च करने वाले 150 रुपये की वह गणेश जी की मूर्ति लाया और हॉस्टल के कमरे में रखी। इसके बाद उसको शराब की तलब भी नहीं हुई और पढ़ाई भी अच्छी होने लगी। बाक़ी के 150 रुपये से उसने एक ग़रीब रोगी, जिसके पास दवा के पैसे नहीं थे,

उसको दवा दिलवाई। उसने बताया कि रोगी की मदद करने में उसे ज़्यादा ख़ुशी मिली।

इस प्रयोग के प्रभाव

निलंबन, पुलिस रिपोर्ट या विभागाध्यक्ष को मामले की सूचना जैसे दण्ड रेज़िडेंट को अनुशासित तो बना सकते थे लेकिन एक आशंका यह भी थी कि दण्ड के बाद वह ज़्यादा उद्दण्ड बन जाता। इस घटना का कारण था शराब का नशा, न कि शराबी रेज़िडेंट। इसलिए इस शर्मनाक घटना के बारे में इस प्रकार बातचीत की गई कि उस रेज़िडेंट में शराब के प्रति घृणा और स्वयं के मन में ग्लानि भर गई। आवश्यकता थी, रेज़िडेंट से शराब की लत छुड़वा कर, उसमें सेवा करने की भावना जागृत करने की। इस प्रायश्चित्त के साथ न केवल उसकी शराब की लत छूट गई बल्कि पढ़ाई भी अच्छी तरह से होने लगी और रोगियों के प्रति संवेदनशीलता बढ़ी।

4. शराब छोड़ने से बदली छवि

श्री गिर्राज अस्थमा भवन में फ़ार्मेसिस्ट है। एक बार वह अपने मित्र मेडिकल रिप्रेज़ेंटेटिव के साथ कहीं गया हुआ था। दोनों ने साथ–साथ शराब का सेवन किया। तभी अस्थमा भवन में रोगी को दवा देने के लिए उसे बुलाया गया। वहाँ आकर रोगी को दवा देने के बाद जब वह गेट बंद कर रहा था तो दरवाज़े का काँच टूट गया। अगले दिन गिर्राज की शराब पीने की बात सामने आई। इसके बाद वह मेरे पास आया और अपने कृत्य पर माफ़ी माँगते हुए शराब छोड़ने की प्रतिज्ञा की। उस घटना के बाद गिर्राज में बहुत बदलाव आया। उसके बदले हुए व्यवहार से ससुराल में भी उसकी इज़्ज़त बढ़ गई। वे बच्चे जो पहले उसे तिरस्कार की दृष्टि से देखते थे, अब उसके पैर छूते हैं।

इस प्रयोग के प्रभाव

समाज और परिवार में हर व्यक्ति की कार्यकलाप, व्यवहार और पद के आधार पर एक छवि बनती है। बच्चों का उस व्यक्ति के प्रति व्यवहार इसका एक अच्छा मापदण्ड होता है। बच्चे सच्चे होते हैं। अक्सर शराबी को बच्चे अच्छी दृष्टि से नहीं देखते हैं। तिरस्कार से सम्मान का मिलना गिर्राज के लिए एक महत्वपूर्ण बात थी, शराब रहित बने रहने के लिए।

■ ■ ■

7

हड़ताल का इलाज सत्याग्रह

गांधीजी को दक्षिण अफ़्रीका में ट्रेन से बाहर फेंक दिया गया था। यह घटना सभी को मालूम है। इसके बाद गंतव्य स्थान तक पहुँचने के लिये उन्होंने बग्गी का टिकट ख़रीदा। जब वे बग्गी में बैठने लगे तो बग्गी के कोचवान ने कहा, ''तुम्हारे जैसे काले लोगों को बग्गी में नहीं ले जाऊँगा।'' गांधीजी ने इस अन्याय का विरोध करते हुये बग्गी के हैंडल को पकड़ लिया। तब कोचवान ने चाबुक से गांधीजी को पीटना शुरू किया। गांधीजी के हाथ से ख़ून और आँखों से आँसू बहने लगे। इस दृश्य को देख बग्गी में बैठे गोरे लोगों ने कोचवान को झिड़का, ''जब इसके पास टिकट है तो इसे बैठने दो।'' तब कोचवान ने गांधीजी को बैठने दिया। इस प्रयोग के परिणाम के आधार पर गांधीजी ने निष्कर्ष निकाला कि **जहाँ वेदना है, वहाँ संवेदना है। यदि वेदना के साथ सत्य और अहिंसा है तो संवेदना ज़्यादा प्रबल होगी।** इसी प्रयोग का नाम उन्होंने सत्याग्रह यानी सत्य के लिये आग्रह रखा। मैंने सत्याग्रह का प्रयोग अस्पताल में हुई एक बड़ी हड़ताल के समाधान में किया।

1. ठेका कर्मचारियों की हड़ताल का जनता ने किया इलाज

मेरे अस्पताल अधीक्षक बनने के कुछ दिन बाद ही ठेका कर्मचारियों ने एक दिन का नोटिस देकर अनिश्चितकालीन हड़ताल शुरू कर दी। हड़ताल के कारण कंप्यूटर रजिस्ट्रेशन, लैब रिपोर्ट, ट्रॉली सर्विस बंद हो गईं। अस्पताल में बड़ी विषम परिस्थिति पैदा हो गई। ठेका कर्मचारियों की हड़ताल का मतलब होता है, अस्पताल की व्यवस्था ठप्प होना। ठेका कर्मचारियों की मुख्य माँग थी, पैसे बढ़ाओ। ठेके के कर्मचारियों को नियम के अनुसार पैसे मिलते हैं। यह नियम राजस्थान प्रदेश के समस्त सरकारी कार्यालयों और अस्पतालों के लिए एक समान होते हैं। अकेले सवाई मानसिंह अस्पताल के ठेका कर्मचारियों के पैसे बढ़ाने की माँग मेरी समझ से बाहर थी।

पैसे बढ़ाने के अलावा सारी माँगें मानने में मुझे कोई भी कठिनाई नहीं थी। दूसरे दिन मीटिंग में यह निर्णय हुआ कि तनख़ाह का निर्णय एक कमेटी पर छोड़, बाक़ी माँगें मान ली जाएँ। ठेकाकर्मियों ने सांसद की उपस्थिति में समझौता करने की बात कही।

इसे मैंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। सांसद महोदय और महासंघ के अध्यक्ष श्री महेन्द्र सिंह के सामने समझौता हुआ और हड़ताल ख़त्म कराने की व्यग्रता में मैंने तुरंत हस्ताक्षर कर दिए। तब कुछ कर्मचारी बाहर गए और हमें बताया गया कि हड़ताली कर्मियों का मत है कि जब एक दिन में इतना मिल गया तो हम तनख़ाह बढ़ने के बाद ही हड़ताल खत्म करेंगे। तभी कुछ कर्मचारी नेताओं ने सांसद महोदय से कहा कि भाई साहब, आपसे मिलकर ही हमने हड़ताल शुरू की थी। मैं ठगा–सा महसूस कर रहा था और तब मैंने निश्चय किया कि हड़ताल का मुक़ाबला करेंगे।

दुर्भाग्य अभी बाक़ी था। दूसरे दिन सफ़ाई कर्मचारी भी हड़ताल में शामिल हो गए। नगर निगम से बात की लेकिन मदद नहीं मिली। चीफ़ सेक्रेटरी श्री सी. के. मैथ्यू साहब से बात की तो उन्होंने नगर निगम को सफ़ाई कर्मचारी भेजने के आदेश दिए। नगर निगम की वैन जब 15 कर्मचारियों को लेकर आई तो हड़ताली कर्मचारियों ने उनके ख़िलाफ़ नारे लगाए और फिर बातचीत करके उनको भी भड़का दिया। नतीजा निकला कि वे सभी बिना काम किये लौट गए।

तब अस्पताल के प्रशासनिक अधिकारियों ने स्थिति पर गंभीर चिंतन किया। कुछ का मत था कि पुलिस की मदद से धरना दे रहे कर्मचारियों को वहाँ से हटाया जाए। सफ़ाई नहीं होने पर भयावह स्थिति पैदा होने की आशंका थी। मैं बल प्रयोग के पक्ष में नहीं था। ऐसी स्थिति में हड़ताल के मुक़ाबले के प्रथम चरण में डॉ. रणधीर ने नर्सिंग के कुछ छात्रों को कंप्यूटर पर बैठाया लेकिन परीक्षा होने के कारण वे अधिक समय तक नहीं रुक सके। रेज़िडेंट डॉक्टर्स एसोसिएशन के डॉ. जगदीश चौधरी ने गोखले हॉस्टल एवं इंजीनियरिंग के छात्रों की मदद ली। अगले दिन वे 12 छात्रों को लेकर आ गये। आई.टी. सचिव संजय मलहोत्रा से बात करने के बाद उन्होंने भी 20 लोगों को भेज दिया। डॉ. रणधीर ने अस्पताल के कर्मचारियों को सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण स्थानों पर लगाया। उसी समय ई.टी.वी. के श्री बाबूलाल हड़ताल के सिलसिले में इंटरव्यू लेने आए। मैंने ई.टी.वी. पर दर्शकों से अपील करते हुए कहा कि वर्षों तक बीमारी में आपके सहायक बने सवाई मानसिंह अस्पताल को आज आपकी ज़रूरत है। आप स्वैच्छिक काम के लिए आमंत्रित हैं। रोगियों की वेदना की बात सुन, जयपुर की जनता में संवेदना जागृत हुई। पहले दिन 10 लोग आए। उन्होंने ट्रॉली व्यवस्था संभाली। अगले दिन अख़बार के समाचारों में मेरी यह अपील प्रकाशित हुई और लोगों का तांता लग गया। तीसरे दिन 100 और चौथे दिन तो करीब 500 लोग अस्पताल की व्यवस्था में योगदान करने आगे आ गए। इन्होंने कंप्यूटर लैब, ट्रॉली, आउटडोर की व्यवस्था संभाल ली।

मेरे मित्र श्री सम्पत बच्छावत अपनी दुकान के कर्मचारियों एवं तेरापंथी युवा मंडल के 100 कार्यकर्ताओं के साथ आए। उन्होंने धंवंतरि की सफ़ाई व्यवस्था संभाल ली। तभी निरंकारी मंडल के 100 स्वयंसेवक भी सफ़ाई व्यवस्था हेतु आ गए। उन्होंने मेन बिल्डिंग में सफ़ाई व्यवस्था संभाली।

इस जन सहयोग की अनूठी पहल ने अस्पताल व्यवस्था को चरमराने से बचा लिया। उधर छठे दिन हड़ताली कर्मचारियों में बेचैनी होने लगी। छठे दिन शाम को उनका प्रतिनिधि मंडल आया और कहा, ''सर, दूसरे दिन वाला समझौता मंज़ूर है।'' मैंने कहा, ''काम पर आ जाओ।'' उन्होंने कहा, ''आप हस्ताक्षर कर के दें।'' मैंने इंकार कर दिया। शाम 6 बजे सांसद महोदय का फ़ोन आया कि अब सब सुलझ गया है, आप हस्ताक्षर कर दें। मैंने कहा, ''पहले हस्ताक्षर के हश्र के बाद मुझे दूसरा हस्ताक्षर करना उचित नहीं लगता।'' सांसद महोदय थोड़े खिन्न हुए। अगले दिन हड़ताल जारी रही। स्वयंसेवकों ने अस्पताल की व्यवस्था को संभाल रखा था। अगले दिन शाम को चीफ़ सेक्रेटरी मैथ्यू साहब का फ़ोन आया। मैंने उनसे निवेदन किया कि एक दिन का समय दें, सब ठीक हो रहा है। रात को हड़ताली नेता आए। मैंने कहा, ''मैं तुमसे नहीं सारे हड़ताली कर्मचारियों से बात करूँगा। इसके लिए आप सब लोग सुबह ऑडिटोरियम में इकट्ठे हों।'' ऑडिटोरियम में करीब 800 लोग इकट्ठे हो गए। मैंने उनसे सीधे हड़ताल की बात करने की बजाय बीड़ी, सिगरेट, शराब जैसी नशीली चीज़ों के हानिकारक असर पर आधे घंटे का स्लाइड प्रोग्राम दिखाया। अंत में कहा कि पिछले 8 दिनों की हड़ताल में न तुम्हारा कुछ बिगड़ा, न हमारा कुछ बिगड़ा। बिगड़ा उस दुःखी रोगी का, जो यहाँ इलाज की उम्मीद में भर्ती हुआ। माँगों पर तो बातचीत से ही समाधान निकलेगा न कि हड़ताल से। हड़ताल रूपी ग़लती का प्रायश्चित्त करना चाहिए आपको।

''प्रायश्चित्त बताएँ, हम करेंगे,'' सभी कर्मचारी बोले।

प्रायश्चित करने के लिए मैंने उन्हें पाँच बातें बताईं :

1. ''चोरी नहीं,''
2. ''कामचोरी नहीं,''
3. ''यूनीफॉर्म में रहेंगे,''
4. ''रोगियों से मृदु बोलेंगे,''
5. ''बीड़ी, गुटका और शराब का सेवन नहीं करेंगे।''

''प्रायश्चित्त में क्या आप इन 5 बातों को जीवन में उतारने की प्रतिज्ञा ले सकेंगे?'' मैंने पूछा।

''यस सर,'' और सभी ने हाथ खड़े कर दिए।

''क्या आप लिखित में यह वादा करेंगे?''

आश्चर्य कि सभी ने लिखकर दे दिया।

मैंने उनके पैसे बढ़ाने के लिए सतत प्रयास का वादा किया। ईमानदारी के इस

वादे को भविष्य में याद दिलाते रहने के लिए रोगियों को ले जाने वाली अस्पताल की क़रीब 200 ट्रॉलियों एवं व्हील चेयर्स पर लिखवाया गया, ''निःशुल्क सेवा। मुझे पैसे नहीं, धन्यवाद दीजिए।''

इस प्रयोग के प्रभाव

कर्मचारियों को जायज़ हक़ दिलवाने के लिए मैं हमेशा ही प्रयत्नशील रहा हूँ। लेकिन रोगियों के जीवन को ख़तरे में डालकर हड़ताल जैसे ब्लैकमेल के शस्त्र के सामने झुकने को मैं कभी भी तैयार नहीं था। इस कठिन घड़ी में जयपुर की जनता के दिल में अस्पताल के रोगियों की वेदना ने संवेदना जागृत की। संवेदनशील नागरिक स्वयंसेवक के रूप में आगे आए और अस्पताल की मदद की। प्रेस ने इस घटना का उल्लेख 'सवाई मानसिंह अस्पताल में निकला हड़ताल का इलाज' जैसे शीर्षकों से किया। आज के ज़माने में प्रशासन ऐसी स्थिति में जीत मिलने पर कर्मचारियों के साथ बदले की भावना से काम करता है। हमने इस मानसिकता का फ़ायदा उन कर्मचारियों में व्याप्त बुराइयों को दूर करने में उठाया। प्रायश्चित्त में ली गईं 5 शपथें कर्मचारियों के हृदय परिवर्तन की दिशा में एक बड़ा क़दम था । बहुत–से लोगों ने उसी दिन गुटका, बीड़ी, शराब छोड़ी और दुबारा शुरू नहीं की। ट्रॉलियों एवं व्हील चेयर्स पर लेखन उन्हें शपथें याद दिलाता रहा। मुझे अत्यंत हर्ष है कि मैं अपनी सेवानिवृत्ति से पहले ठेका कर्मचारियों का वेतन बढ़वाने में भी सफल रहा।

2. वेदना से उपजी संवेदना

हड़ताल के सातवें दिन श्री सम्पत बच्छावत काम करने के बाद ऑफ़िस आए और बोले, ''पानी पिलाओ।'' मैंने घंटी बजाई और वॉर्ड बॉय को पानी लाने के लिए कहा। थोड़ी देर में वह दो ग्लास पानी लेकर आ गया। ''कहाँ से आता है यह पानी?'' सम्पत जी ने पूछा। मैंने वॉर्ड बॉय की तरफ़ देखा।

''सर, ऊपर की टंकी से,'' वॉर्ड बॉय बोला।

''यह तो शुद्ध नहीं है! ऊपर टंकियों में तो कचरा पड़ा रहता है। यहाँ रोगी बीमार होकर आता है, ऐसी स्थिति में अशुद्ध पानी उसकी तबीयत और ख़राब कर देगा।'' सम्पत जी बोले और उनके चेहरे पर झलकती संवेदना का मैं मूक दर्शक था।

''मैं पूरे अस्पताल में आर.ओ. लगवाऊँगा,'' फिर सम्पत जी बोले।

अगले तीन महीनों में लगभग 18 लाख की लागत से क़रीब पाँच आर.ओ. सम्पत जी ने लोगों की मदद से अस्पताल में लगवा दिए।

अब रोगियों, उनके परिजनों, अस्पताल के कर्मचारियों और चिकित्सकों को आर.ओ. का शुद्ध पानी निःशुल्क मिलता है। अगले एक साल में उन्होंने रेज़िडेंट हॉस्टल, गर्ल्स हॉस्टल एवं नर्सिंग हॉस्टल में भी आर.ओ. लगवा दिए।

इस प्रयोग के प्रभाव

शुद्ध पानी अस्पताल आने वाले हर व्यक्ति को मिलना ही चाहिये। लेकिन 80

साल पुराने अस्पताल में यह उपलब्ध न हो सका। बच्छावत जी की संवेदना और तत्कालीन अस्पताल इंजीनियर श्री अनिल साहू के अथक परिश्रम से अस्पताल में हर व्यक्ति को शुद्ध पानी उपलब्ध हो सका। आज भी अस्पताल इंजीनियर श्री देशराज वर्मा के प्रयासों से पूरे अस्पताल एवं छात्रावासों में आर.ओ. का शुद्ध पानी लगातार उपलब्ध हो रहा है।

3. अनुभव एक स्वयंसेवक का

हड़ताल के तीसरे दिन असलम नामक एक व्यक्ति स्वयंसेवक के रूप में ऑक्सीजन प्लांट में ड्यूटी दे रहे थे। दिन भर ड्यूटी करते-करते शाम तक उन्हें काम बड़ा ही नीरस लगा। स्वयंसेवक अभियान के इंचार्ज से उन्होंने कोई ज़्यादा उपयोगिता वाला काम देने को कहा। डॉ. रणधीर ने उनकी ड्यूटी आई.सी.यू. में गंभीर रोगियों को ट्रॉली में लाने, ले जाने पर लगाई। आई.सी.यू. में गम्भीर रोगियों को ऑक्सीजन और वैंटिलेटर लगे थे। वहां उन्हें पता चला कि पिछले दिन जिस ऑक्सीजन प्लांट पर उनकी ड्यूटी थी, वहीं से आ रही ऑक्सीजन के कारण वे लोग ज़िंदा थे। उन्हें समझ में आया कि अस्पताल के सभी कार्य महत्वपूर्ण हैं। पूरी शक्ति के साथ उन्होंने हड़ताल के पूरे समय यह काम किए।

इस प्रयोग के प्रभाव

सामान्य जनता को केवल व्यवस्था, चिकित्सक और नर्सिंग स्टाफ़ ही सामने दिखाई देते हैं। रंगमंच और सिनेमा के पर्दे के पीछे किसका योगदान है, यह जानकारी उसे नहीं होती। हड़ताल के दौरान स्वैच्छिक सेवा देने वाले लोगों को अस्पताल की कार्यप्रणाली को निकटता से देखने-समझने का मौक़ा मिला। स्पष्ट है कि अस्पताल संचालन और व्यवस्था के प्रति समझ बढ़ने के कारण सौजन्य में स्थाई वृद्धि हुई।

■ ■ ■

8

समय की पाबंदी : एक सीख

पश्चिमी देशों की प्रभावशाली व्यवस्था का एक मज़बूत आयाम है, समय की पाबंदी। बताए गए समय पर काम पूरा करना किसी भी समाज को आगे ले जाने के लिए महत्वपूर्ण है। अत्यंत व्यस्तता के बावजूद गांधीजी की समय की पाबंदी अनुकरणीय थी। हालांकि आज के ज़माने में हम लोग समय की पाबंदी का वादा नहीं निभा पाते हैं।

इसी प्रकार की एक घटना है।

ज़हर से ज़हर का इलाज

मैंने अपनी बड़ी बेटी शीतू की शादी के कार्ड छपवाए। कार्ड छापने वाली दुकान 'निमंत्रण' के मालिक श्री अशोक परनामी ने वादा किया कि अमुक तारीख़ तक कार्ड छापकर वह दे देंगे। जबकि कार्ड उन्होंने वादा की गई तारीख़ से क़रीब एक सप्ताह बाद दिए। इससे कार्ड बाँटने में काफ़ी कठिनाई आई। जब कार्ड का पैसा लेने वह आए तो उन्होंने 15000 रुपये का बिल दिया। मैंने पहले बिल और फिर उनकी तरफ देखा। मैंने कहा, ''आप वादे के अनुसार बताई गई तारीख़ के पक्के नहीं हो, इससे बहुत ज़्यादा असुविधा हुई। मैं आपको बिल में लिखे 15000 रुपये नहीं दूँगा।'' वह बोले, ''नहीं सर, पोसाता नहीं है। इतने पैसे तो अवश्य दीजिए।''

मैंने कहा कि पोसाने वाले पैसे ही दूँगा और जैसे ही मैं उन्हें पैसे देने लगा तो उन्होंने इंकार करते हुए कहा, ''नहीं सर, मैं पूरे पैसे लूँगा।'' मैंने आग्रह किया कि ये मैं पोसाने वाले पैसे ही दे रहा हूँ, ले लो। वह नहीं–नहीं बोलते रहे तो मैंने कहा, ''ज़रा गिनो।'' उन्होंने गिने तो बोले, ''ये तो 16000 रुपए हैं। आपने ग़लती से ज्यादा दे दिए हैं।'' ''ग़लती से नहीं, सोच समझकर दिये हैं।'' उन्हें एक झटका सा लगा। चेहरा बिल्कुल याचक सा बना कर बोले, ''नहीं सर, मैं नहीं ले पाऊँगा।'' मैंने कहा, ''चलो, मैं वापस ले लूँगा, लेकिन एक साल बाद मुझे देना। शर्त होगी कि आगे आने वाले ग्राहकों

को कार्ड देने में समय की पाबंदी ज़रूर रखना।'' जाते–जाते वे पैर छूकर गये।

इस घटना के एक साल बाद उनका फ़ोन आया। ''सर, मैंने अब समय की पाबंदी जीवन में उतार ली है, इससे मेरा व्यवसाय भी ख़ूब चल पड़ा है। अब मैं आपकी अमानत आपको लौटा रहा हूँ।''

इस प्रयोग के प्रभाव

कार्ड तैयार करने वाला यह व्यक्ति ऐसा था जो पैसे कमाने की लालसा की पूर्ति करने के लिए अपनी क्षमता से ज़्यादा काम ले लेता था और निश्चित समय पर काम करके देने के अपने वादे को भी भूल जाता था। ऐसे दुकानदार के मन में काम समय पर देने के वादे के प्रति निष्ठा पैदा करने के लिए एवं पैसे को तुच्छ बताने को मैंने यह प्रयोग किया, जो सफल रहा।

गांधीजी के चिंतन का केन्द्र था, सत्य। विचार, वाणी और व्यवहार की एकरूपता ही उनके लिये सत्य की परिभाषा थी। जब मैं उस दुकानदार के पास कार्ड बनवाने गया तब उसने एक निश्चित दिन तक कार्ड देने का वादा किया जबकि मन में वह जानता था कि पहले के काम के बोझ के कारण वह उस तारीख तक कार्ड नहीं दे पाएगा। इसी कारण उसने वास्तव में कार्ड एक सप्ताह देर से दिए। **विचार, वाणी और व्यवहार की एकरूपता यदि हम अपना लें तो बहुत सी आम परेशानियों से बचा जा सकता है।**

■ ■ ■

9

आलोचक को मित्र बनाना

एक बार दक्षिणी अफ्रीका में गांधीजी इमीग्रेशन के मामले में बात करने एक सरकारी अधिकारी के पास जा रहे थे। इसी मसले पर रास्ते में एक अफ़ग़ानी मीर आलम से उनका विवाद हो गया। मीर आलम ने गांधीजी के सर पर डंडे से वार किया। गांधीजी बेहोश हो गए। पुलिस मीर आलम को गिरफ़्तार कर ले गई। होश आने पर गांधीजी ने मीर आलम के बारे में पूछा। पता करने के बाद गांधीजी सीधे पुलिस स्टेशन पहुँचे और रिपोर्ट में बताया कि मीर आलम का कोई दोष नहीं है। मीर आलम जेल से रिहा हो गया लेकिन तब से वह गांधीजी का शिष्य बन गया। गांधीजी ने इस तरीक़े से आलोचक या शत्रु को मित्र बनाया। इस तकनीक के उपयोग से मैंने भी अस्पताल की कुछ समस्याओं का समाधान किया।

1. आलोचक वकील ने देखा डॉक्टर में भगवान

एक दिन जब मैं एलर्जी क्लिनिक में था तो एक व्यक्ति गुस्से से आगबबूला होता हुआ मेरे पास आया। मैंने जब उनकी ओर गंभीर दृष्टि से देखा तो तपाक से बोले, ''डॉ. साहब आपने पॉलीट्रोमा में तो डॉक्टर नहीं राक्षस बैठा रखे हैं।'' मैंने पूछा, ''क्या हुआ?'' ''मेरे रिश्तेदार सड़क दुर्घटना में घायल होने के बाद वहाँ भर्ती हैं। जब कोई ध्यान नहीं दे रहा था तो मैंने वहाँ मौजूद डॉक्टर साहब से निवेदन किया। वे उलटे मुझ से झगड़ने लगे। मेरे जैसे हाइकोर्ट के वकील के साथ ऐसा हो सकता है, तो आम आदमी का तो मरना निश्चित है।''

मैंने ग़ौर से उनकी बात सुनते हुए बिना कोई टिप्पणी किये हुए, अपने पी.ए. से पॉलीट्रोमा के चिकित्सक से फ़ोन पर बात करवाने को कहा। फ़ोन पर ज्योंही मैंने कहा कि एक वकील....., डॉक्टर तपाक से बोले, ''सर, एक सिरफ़िरा वकील आकर मुझे धमकी देकर गया है कि बाहर निकल, देख लूँगा।'' मेरे कान फ़ोन पर लगे थे

लेकिन दृष्टि वकील साहब के चेहरे पर थी। मैंने पूरी बात सुनने के बाद डॉक्टर से कहा कि क्या वह मेरा एक व्यक्तिगत काम कर सकेंगे?

''यस सर,'' वे बोले। ''जिस रोगी के बारे में कहा–सुनी हुई, उसके इलाज की पूरी ज़िम्मेदारी आपको सौंपता हूँ। उसकी इतनी सेवा करो कि जाते समय वह आपके पैर छूकर जाए।''

''यस सर, मैं पूरी कोशिश करूँगा,'' डॉक्टर ने कहा।

इस दौरान वकील साहब के चेहरे का गुस्सा बिल्कुल ग़ायब हो गया। नम्रता के साथ बोले, ''सर, शुरूआत डॉक्टर साहब ने की थी।'' ''आग डॉक्टर साहब ने लगाई, लेकिन उसमें घी तो आपने डाला,'' मैंने कहा। ''सर, ग़लती हो गई।'' ''अब इस ग़लती का प्रायश्चित्त क्या करेंगे?'' ''आप बताएँ,'' वे बोले। मैंने पूछा, ''पॉलीट्रोमा में लावारिस रोगी की दो घंटे सेवा, क्या कर सकोगे?'' वह बोले, ''यस सर।''

वकील साहब ने पॉलीट्रोमा में तीन दिन ड्यूटी देने के बाद अपने संस्मरण में लिखा कि सुना ही था कि डॉक्टर भगवान होते हैं, लेकिन आज प्रत्यक्ष देखा। वॉर्ड में रोगियों के ख़ून और मवाद से सने घावों की पट्टी डॉक्टर जिस आत्मीयता से कर रहे थे, उसे देख उनमें मुझे भगवान का रूप नज़र आया। कुछ डॉक्टर बोली के कड़वे होते हैं लेकिन रोगियों की सेवा करने में वे भी कम नहीं होते हैं।

इस प्रयोग के प्रभाव

इस प्रयोग में डॉक्टर साहब ने सीखी आलोचक को मित्र बनाने की कला। वकील साहब ने समझी, चिकित्सक की सेवा और सच्चे मन से अनजान व्यक्ति की मदद से मिलने वाली ख़ुशी का रहस्य। चिकित्सालय को मिले एक प्रशंसक वकील जो कभी आलोचक थे।

2. कैसे जानी पीर पराई?

एक दिन सुबह तीन गार्ड किसी मरीज़ के एक परिजन को लेकर मेरे पास आए। बिना पास प्रवेश को लेकर शुरू हुई कहा–सुनी इतनी बढ़ी कि परिजन ने गार्ड को गाली देना शुरू कर दिया। परिजन को पुलिस के सुपुर्द करने का मानस बना चुके डिप्टी सुपरिंटेंडेंट डॉ. सुनित राणावत मेरी सहमति लेने आये थे। तब तक परिजन भी थोड़े शांत हो चुके थे। उन्होंने अपनी ग़लती को स्वीकार किया। सरकारी कार्य में बाधा डालने जैसे अपराध की भरपाई के लिए मैंने उन्हें दो विकल्प दिए।

1) पुलिस में गिरफ़्तारी अथवा 2) चार घंटे गार्ड की ड्यूटी

परिजन ने चार घंटे गार्ड की ड्यूटी देने का विकल्प स्वीकार किया। चार घंटे की ड्यूटी के दौरान उसकी तीन लोगों से हल्की–फुल्की झड़प भी हुई। ड्यूटी के दौरान परिजन ने जाना कि यदि बिना पास गार्ड ने उसे अंदर जाने से मना किया था तो वह उसकी ड्यूटी थी और अस्पताल व्यवस्था बनाए रखने के लिए यह आवश्यक था। चार घंटे की ड्यूटी पूरी करने पर मरीज़ के परिजन को समझ में आया कि गार्ड सही था।

इस प्रयोग के प्रभाव

सवाई मानसिंह अस्पताल में रोगियों की संख्या मेरे कार्यकाल में कई गुना बढ़ गई थी। 2010 में जहाँ 10 लाख रोगी आते थे वहीं 2013 में 25 लाख रोगी आए। ऐसी स्थिति में अस्पताल के कर्मचारियों पर काम का भार बढ़ गया। कई बार नोक–झोंक की स्थिति आ जाती थी। मारपीट, झगड़ा हो जाता था। पुलिस के माध्यम से ऐसी घटनाओं का समाधान नहीं हो पाता था। गिरफ़्तार हुआ व्यक्ति कुछ ले–देकर या सिफ़ारिश करवा कर छूट जाता था और इसके बाद गार्ड पर या अन्य चिकित्साकर्मियों पर रुतबा जमा वह उन्हें निरुत्साहित करता था। अपनाए गए इस तरीक़े से, एक ओर जहाँ उग्र परिजन को सही सबक़ मिला, वहीं गार्ड्स का मनोबल भी बढ़ा। वह परिजन अस्पताल की व्यवस्था के आलोचक के स्थान पर अब समर्थक बन गया।

3. नए मंत्री, नई शैली मगर अस्पताल हित सर्वोपरि

नई सरकार बनने के पाँचवें दिन मुख्यमंत्री श्रीमती वसुन्धरा राजे अस्पताल आईं। अस्पताल के दौरे के दौरान उन्होंने सफ़ाई और रंग–रोगन पर विशेष ध्यान देने को कहा। जिस रोगी को देखने आईं थीं, उसके अच्छे इलाज के लिए चिकित्सकों की भूरि–भूरि प्रशंसा की। वापस जाते समय पोर्च में लगी 'स्टार ऑफ द मंथ' की तस्वीर देखकर वे बहुत ख़ुश हुईं और उन्होंने कहा, ''बहुत बढ़िया।''

इसके बाद स्वास्थ्य विभाग को नये मंत्री मिले। उन्होंने अस्पताल का दौरा किया। इस दौरे में अस्पताल की कमियों को अच्छी तरह से मीडिया को बताया गया। मुझे बुरा नहीं लगा क्योंकि सरकार बदलने के साथ यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया थी।

एक दिन सवेरे उनका फ़ोन आया। गुस्से में कहा, ''मेरे चूरू के एक रोगी का डॉ. बनर्जी ने, कहने के बाद भी सही इलाज नहीं किया।'' मैंने इसे दिखवाने की बात कह, उनसे मिलने का समय माँगा। उन्होंने कहा, ''अभी आ जाओ।'' इस घटना के तुरंत बाद मैं उनके घर गया।

वहाँ कुछ लोग बैठे थे और बात कर रहे थे। तभी मंत्रीजी बोले, ''डॉक्टरों का सिर्फ़ एक ही काम होता है, सुबह से शाम तक मरीज़ देखकर रुपयों से बोरी भरना।'' फिर मेरी ओर देखकर बोले, ''आप भी अपने बूचड़खाने को सुधारें जहाँ डॉ. बनर्जी जैसे डॉक्टर हैं।'' अपनी बुराई तो मैं सुन सकता था, लेकिन राज्य के सबसे बड़े एवं क़ाबिल चिकित्सकों से लैस अस्पताल के लिए बूचड़खाना के कथन से मैंने अपमानित महसूस किया। मैंने उनसे पदमुक्त करने का निवेदन किया। वे बोले, ''डॉक्टर साहब, आप अच्छा काम कर रहे हो और पद छोड़ना तो पलायन होगा।''

मैंने सोचा, चलो कुछ दिन देखते हैं। हालांकि इसके बाद से अस्पताल के काम में मंत्रीजी का अपेक्षित सहयोग मिलता रहा। इसी दौरान अस्पताल में रेज़िडेंट्स की समस्या के बारे में ज़िक्र किया तो तुरंत रेज़िडेंट्स को बुलाकर समस्या का समाधान किया।

कुछ समय पश्चात् किसी रोगी को अपेक्षा अनुरूप इलाज नहीं मिलने पर उन्होंने मेडिसिन के प्रोफ़ेसर डॉ. सुधीर मेहता का स्थानांतरण कर दिया। मुझे यह बात चिकित्सालय हित में नहीं लगी। जब मंत्रीजी से डॉ. मेहता का स्थानांतरण निरस्त करवाने का आग्रह किया, तो कुछ झिझक के साथ उन्होंने इस निवेदन को स्वीकार कर लिया। कुछ सप्ताह बाद एक बार मिले तो बोले, ''डॉ. साहब, अस्पताल अच्छा है और हम दोनों मिलकर एस.एम.एस. को अगले 2–3 साल में एम्स के बराबर बना देंगे।''

इस घटना के करीब एक महीने बाद जब चुनाव लड़ने हेतु मैंने पद त्याग की बात कही तो मंत्रीजी दुःखी हुए। उस समय वे धौलपुर गए हुए थे। वहाँ से फ़ोन पर बात करते हुए बोले, ''डॉक्टर साहब, आपकी फ़ाइल मेरे सामने है, लेकिन मेरा हाथ हस्ताक्षर करने से मना कर रहा है। यार, वापस ले लो ना अपना इस्तीफ़ा।'' मैंने कहा, ''सर, निर्णय हो चुका है।''

इस प्रयोग के प्रभाव

यदि हम अपना काम संस्था के हित को ध्यान में रखते हुए करते हैं तो सरकार कोई भी हो, अपेक्षित सहयोग मिलता है।

4. चिकित्सक ने पढ़ा इलाज का पाठ

एक रात एक रेज़िडेंट का फ़ोन आया कि एक रोगी इलाज से फ़ायदा नहीं होने के कारण नाराज़ है और कह रहा है कि आप लोग ध्यान नहीं दे रहे हो, हम किसी प्राइवेट अस्पताल में जाते हैं।

''सर, क्या छुट्टी कर दूँ?''

''नहीं,'' मैंने कहा, ''इसकी अच्छी देखभाल करो, इतनी मदद करो कि छुट्टी होने के समय तुम्हारे पैर छूकर जाए।'' पाँच दिन बाद ठीक होकर जाते समय रोगी ने डॉ. सुनील बेनीवाल को तहेदिल से धन्यवाद देते हुए कहा, ''डॉ. साब, आप तो भगवान हो, आपने बचा लिया। इस बार बीमारी बड़ी ख़तरनाक थी।''

इस प्रयोग के प्रभाव

'आपकी दवा से बिलकुल फ़ायदा नहीं आया' यदि इस कथन पर चिकित्सक को क्रोध नहीं आए और पहले से ज़्यादा ध्यान देकर वह रोगी का इलाज करे तो समझें वह सफल चिकित्सक है।

चिकित्सक के जीवन में ऐसी घटनाएँ अनेक बार होती हैं जब अपने रोगी की स्थिति में सुधार होता न देख परिजन आवेश में आकर चिकित्सक को कुछ भी कह देता है। ऐसी अवस्था में रोगी हित में कैसे चिकित्सक काम करे, इसके लिए डॉ. सुनील को प्रेरित किया और जब रोगी ने भगवान तुल्य कहा तो उसका दिल ख़ुशी से प्रफुल्लित हो उठा।

5. अपनी ग़लती बड़ी, दूसरे की ग़लती छोटी

बात उन दिनों की है, जब मैं सहायक आचार्य के पद पर काम कर रहा था। इमरजेंसी में

ड्यूटी लगी हुई थी, किसी कारण से लेट हो गया। इमरजेंसी की इंचार्ज डॉ. पैट्रीशिया विकर्स थीं और उन्होंने इमरजेंसी में चिकित्सकों की निगरानी का काम डॉ. के. एम. गर्ग को दे रखा था। दूसरे दिन डॉ. गर्ग अस्पताल के पोर्च में मुझे मिल गए। मैंने मिलते ही अपनी ग़लती स्वीकार की एवं स्पष्टीकरण भी दिया। लेकिन उन्होंने डाँटने के अंदाज़ में मुझे कुछ बुरा–भला कहा। उन दिनों मुझे भी गुस्सा ज़्यादा आता था। मैंने उन्हें कुछ तेज़ आवाज़ में जवाब दे दिया। आपस में वाक्युद्ध हुआ। नाराज़ होकर उन्होंने डॉ. पैट्रीशिया को वाक़या बताया और मेरे विरुद्ध लिखित में कार्यवाही करने को कहा।

डॉ. पैट्रीशिया ने भी मेरे विरुद्ध तत्कालीन प्राचार्य डॉ. पी.एल. नवलखा से कार्यवाही करने की सिफ़ारिश की। डॉ. नवलखा ने मुझे बुलाकर मेरा पक्ष सुना और उन्हें लगा कि क्षणिक आवेश में कहा–सुनी हुई।

उन्होंने मामले को रफ़ा–दफ़ा कर दिया। लेकिन डॉ. गर्ग के मन में गाँठ पड़ गई। मेरे मन में यह बात ज़रूर रही कि मेरी ग़लती उनकी ग़लती से बड़ी थी।

इसके बाद हमारी बातचीत बंद हो गई थी। तब मुझ में इतना साहस नहीं था कि अपनी ग़लती को बड़ा कहकर, डॉ. गर्ग से माफ़ी माँग लेता। इस घटना के करीब एक वर्ष बाद एक दिन मुझे पता लगा कि किसी ने डॉ. गर्ग की शिकायत की है जिससे उनका तबादला जयपुर से बाहर हो रहा है। तबादला दूसरी जगह होना काफ़ी तकलीफ़देह होता है। मुझे लगा सज़ा से पहले उन्हें अपनी बात रखने का मौका मिलना चाहिए। शिकायत और तबादले वाली बात की सूचना देकर उनकी मदद करनी चाहिए। सुबह अस्पताल में मैं उनके वॉर्ड की तरफ़ गया तो वे मिल गए। मैंने उन्हें बताया कि आपकी शिकायत हुई है जिससे आपका तबादला हो रहा है, रुकवाने की कोशिश कर लीजिए। वे क्रुद्ध दृष्टि से मुझे देखते हुए बिना कुछ कहे चले गए। रात को उनका फ़ोन आया और उन्होंने कहा, ''यार, आपने समय पर बता दिया और मुझे अपना पक्ष रखने का मौक़ा मिला अन्यथा आज तबादले के आदेश हो ही गए थे। अपनी अनबन के कारण सुबह आपके द्वारा दी गई सूचना पर मुझे विश्वास नहीं हुआ। सॉरी, आपके साथ मेरा व्यवहार रूखा रहा।'' मेरे मन को एक शान्ति सी मिली।

इस प्रयोग के प्रभाव

जब भी हमसे कोई ग़लती होती है, उसके साथ आत्मग्लानि का बोध होता है। लेकिन आज के समाज में ग़लती स्वीकार करना बेवकूफ़ी समझा जाता है और हम उसे स्वीकार करने की बजाय बचाव का रास्ता ढूँढने में लग जाते हैं।

मन का अहंकार हमें उस ग़लती को स्वीकार नहीं करने के लिए बाध्य करता है। इस मानसिकता के साथ हमें अपनी ग़लती छोटी और दूसरे की ग़लती बड़ी लगती है। गांधीजी हमेशा अपनी ग़लती को बड़ा और दूसरे की ग़लती को छोटा समझते थे। ग़लती प्रबंधन का एक आयाम यह भी था जिसके कारण उन्होंने एक बार ग़लती होने के बाद उसे दोहराया नहीं।

इसी भावना के वशीभूत होकर मैं डॉ. गर्ग की मदद कर पाया और इस घटना के बाद वे आलोचक से मित्र बन गए।

■■■

10

क़ीमत एक बोतल ख़ून की

एक प्राइवेट अस्पताल के मालिक को पुलिस ने किसी मामले में गिरफ़्तार कर लिया था। तबीयत ख़राब होने पर इमरजेंसी के द्वारा वे मेडिसिन की यूनिट में भर्ती हो गए। कोर्ट ने आदेश दिया कि उन्हें कोर्ट में हाज़िर किया जाए। मेडिकल आई.सी.यू. से जब उन्हें कोर्ट ले जाने लगे तो उनके पुत्र और दोस्तों ने विरोध किया और नीचे मेरे कमरे में आ गए। वे मुझ से भी ज़ोर–ज़ोर से बोलने लगे। मैंने उन्हें बताया कि यह कोर्ट का आदेश है, इसमें छूट देने का अधिकार हमें नहीं है। लेकिन फिर भी उनका ग़ुस्सा जारी रहा। वह दिन मेरे लिए बड़ा कठिन दिन था और मैं पसोपेश में था। एक ओर दबाव था रोगी के प्रभावशाली मित्रों और स्वजनों का, उनको कोर्ट में पेश नहीं करने का। दूसरी ओर आदेश था कोर्ट का। ऐसी स्थिति में रोगी के इलाज की पुख़्ता व्यवस्था कर उन्हें कोर्ट में प्रस्तुत कर मैंने अपने कर्तव्य का पालन किया। कोर्ट ने सुनवाई कर उन्हें आई.सी.यू. में इलाज करवाने की इजाज़त दे दी।

दो दिन बाद उनकी ज़मानत हो गई, पर मरीज़ अभी आई.सी.यू. में ही भर्ती थे। इसके बाद एक दिन आई.सी.यू. के राउंड के समय मुझे उनके पुत्र दिखाई दिए और मैं उनके पास चला गया। उनके पुत्र ने उस दिन ग़ुस्से से बोलने की ग़लती के लिये क्षमा माँगी। ''सर, उस दिन आवेश में आ गया था,'' वे बोले। मैंने पूछा, ''क्या प्रायश्चित्त करोगे ग़लती के लिए?'' ''आप जो कहें,'' उनकी माँ बोलीं। एक यूनिट ख़ून दे दीजिए। ''अरे, इसमें कहाँ ख़ून है और ऊपर से डायबिटिज़ भी है।'' ''तो हमारे अस्पताल के रोगियों के परिजनों को भोजन खिला दीजिए।'' ''कितने समय?'' ''एक दिन से लेकर एक साल तक।'' ''100 खाने रोज़, 3 महीनों तक,'' उन्होंने वादा किया, जिसका ख़र्च लगभग 1 लाख रुपए था। उन्होंने वादे के मुताबिक़ भोजन की व्यवस्था की।

इस प्रयोग के प्रभाव

मुझे एक अनोखी बात समझ में आई कि जहाँ एक ग़रीब 500 रुपए की ख़ातिर अपना एक यूनिट रक्त बेच देता है वहीं एक अमीर प्रायश्चित्त में 1 लाख रुपए का दान देकर अपना एक यूनिट रक्त बचाता है। आज भी यह स्थिति है हमारे देश की और शायद रक्त की क़ीमत में यह भेद ही हमारे देश की प्रगति में सबसे बड़ी बाधा है।

■ ■ ■

11

निडरता : डर के आगे जीत है

गांधीजी निर्भयता के प्रतीक थे। नमक आंदोलन के लिये रवाना होते समय उन्होंने अपने साथियों से विदा कहते हुए कहा था कि यदि ज़िंदा रहे तो सफल होकर आएँगे अन्यथा अलविदा। यदि इस निर्भयता को हम आचरण में उतार लें तो अधिकांश कठिनाइयों का समाधान स्वतः ही हो जाता है। कुछ दृष्टांत नीचे दिये गये हैं।

1. अनजान की जान के लिए लगाया 1.5 लाख रुपयों का दाव

रात के 11 बज रहे थे। कार्डियोथोरेसिक सर्जरी के प्रोफ़ेसर डॉ. अनिल शर्मा का फ़ोन आया। उन्होंने बताया कि एक क़ैदी गंभीर अवस्था में उनके यहाँ भर्ती है । उसका तुरंत ऑपरेशन होना है अन्यथा जीवन बचना मुश्किल हो सकता है। लेकिन आपरेशन में जो प्रोस्थेसिस यंत्र लगेगा, वह जेल से स्वीकृत होकर नहीं आया है। मैंने पूछा, ''इससे पहले किसी को बिना स्वीकृति कभी ऐसा प्रोस्थेसिस लगाया है क्या?'' ''नहीं सर,'' डॉ. अनिल बोले। मैंने पूछा, ''कितने का आता है यह प्रोस्थेसिस?'' ''क़रीब 1.5 लाख रुपये का।''

''यदि जेल से स्वीकृति नहीं आती तो यह अपनी जेब से लगेगा।'' ''आप लगवाओ, पैसे स्वीकृत नहीं हुए तो मैं दे दूँगा।'' ''आधे मैं भी दे दूँगा सर,'' डॉ. अनिल बोले। मैंने उन्हें फ़ोन पर ही शाबाशी दी।

इसके बाद मैंने रिलीफ़ सोसायटी इंचार्ज डॉ. अरुण चौगले को फ़ोन किया और प्रोस्थेसिस यंत्र रोगी के लिए देने को कह दिया। रात 1 से 3 बजे तक चले ऑपरेशन से रोगी बच गया।

दो दिनों बाद क्या देखता हूँ कि जेल के उप अधीक्षक स्वयं प्रोस्थेसिस का चेक लेकर मेरे ऑफ़िस आए। उन्होंने कहा, ''सर, मैं आप जैसे बहादुर ऑफ़िसर से मिलना चाहता था, कितना बड़ा जोखिम लेकर आपने उस क़ैदी का जीवन बचाया।''

इस प्रयोग के प्रभाव

यदि मदद के काम में ज़रूरत महसूस हो तो जोखिम लेना चाहिए, क्योंकि ईश्वर आपके साथ होता है। इस घटना के बाद, अस्पताल में जो भी अस्पतालकर्मी, रोगी हित का या अन्य कोई अच्छा कार्य करता था तो उसका फ़ोटो और अच्छे कार्य का विवरण पोर्च में बोर्ड पर लगवाया जाने लगा। बोर्ड पर "Star of the month" का एक अलग कोना बनाया गया, जिससे अच्छे काम को प्रोत्साहन मिले।

2. सत्य की राह पर निडरता

बाँगड परिसर की तरफ़ जयपुर मेडिकल एसोसिएशन के पास कुछ वर्ष पहले नगर निगम ने अस्पताल की भूमि में कुछ कियॉस्क्स विकसित कर लोगों को दिए। इन कियॉस्क्स का रास्ता जे.एल.एन. मार्ग से था लेकिन इन कियॉस्क्स वालों ने अस्पताल की दीवार तोड़कर रास्ता बना लिया। धीरे–धीरे इन कियॉस्क्स में शराब एवं ड्रग्स भी मिलने लग गईं। रक्त की ख़रीद–फ़रोख़्त का काम भी यहीं से होने लगा। कई पूर्व अधीक्षकों ने टूटी दीवार को ठीक करवाने की कोशिश की, लेकिन ऊपर से दबाव आने के कारण वे ऐसा नहीं कर सके। जब यह मामला मेरे सामने आया तो मुझे बताया गया कि कोर्ट से स्टे भी लगा हुआ है। मैंने हमारे लीगल ऑफ़िसर श्री एच. के. टूटेजा से स्टे ख़त्म करवाने की दिशा में काम करने को कहा। कुछ दिनों बाद ही टूटेजा स्टे खत्म होने का ऑर्डर कोर्ट से ले आए। तब मैंने डॉ. सुनित राणावत और पी.डब्ल्यू.डी. इंजीनियर श्री डी. सी. माथुर को बुलाया और कहा कि दीवार आज ही बननी चाहिए।

दीवार के पास 20 गार्ड्स लगवा दिए और दीवार बनने लगी। दोपहर लगभग 3 बजे यूनिवर्सिटी के 8–10 लड़के मेरे पास आए और दीवार का काम बंद करने का आग्रह किया। मेरे नहीं मानने पर उन्होंने एक कैबिनेट मंत्री से मेरी बात करवाई। मैंने मंत्रीजी को बताया कि अस्पताल हित में दीवार का काम बंद करना संभव नहीं है। तब वे लड़के बोले, ''साहब चैलेंज है, यह दीवार तो टूटेगी।'' मैंने कहा, ''बेटा, तुम्हारी आत्मा से जो तुम सही मानते हो वही करो, गुड लक!'' रात तक दीवार बन गई। रात को एक चिकित्सक बंधु आये और दीवार तुड़वाने के लिए कहा। कहने लगे आप तो कुछ लेते नहीं हो, लेकिन बाँगड़ के बाहर के क्षेत्र में 1.50–2.00 लाख रुपए प्रतिमाह खर्च कर रोगियों की सुविधा के लिए हम शानदार गार्डन विकसित कर देंगे। मैंने नम्रता से उन्हें मना कर दिया। इसके बाद मंत्रीजी के पी.एस. ने हमारे अस्पताल के अधिकारियों, डॉ. सुनित राणावत और डॉ. अनिल दुबे को फ़ाइल समेत तलब किया और दीवार तुड़वाने के लिए कहा। उन्होंने दीवार वापस तोड़ने में असमर्थता ज़ाहिर की। इसके बाद एक दिन मंत्रीजी ने मुझे बुलाया और कहा, ''भाई, वह दीवार का क्या मामला है, उसको तुड़वा दो।'' मैंने नम्रता से कहा, ''सर, वे कियॉस्क वाले लोग शराब, ड्रग्स एवं ख़ून की ख़रीद– फ़रोख़्त आदि में शामिल हैं। दीवार तोड़ना अस्पताल और समाज दोनों के ही हित में नहीं है।''

''डॉक्टर साहब, इन चीज़ों को पुलिस देखेगी। यह आपका काम थोड़े ही है?''

''सर, फिर आप मुझे पद मुक्त कर दीवार तोड़ने की आज्ञा दे दें।''

''क्या वहाँ एक रिवॉल्विंग गेट नहीं लग सकता?''

''नहीं सर,'' मैंने कहा। ''ठीक है, डॉ. साहब! मैं प्रशंसा करता हूँ कि आप अस्पताल हित में सोचते हो। हमारे ऊपर तो बहुत से लोगों का प्रैशर आता रहता है।'' मेरी सेवानिवृत्ति के बाद, जहाँ तक मुझे जानकारी मिली है, अब भी इस दीवार को तोड़ने के प्रयास किए जा रहे हैं।

इस प्रयोग के प्रभाव

जब मंत्रीजी का रुख़ देखा तो एक बार मैं सोच में पड़ गया। क्षण भर के लिये मन में जयपुर से बाहर तबादले का भय भी आया। फिर मैंने आँखें बंद कर सोचा, क्या दीवार तुड़वाना अस्पताल हित में है? आत्मा की आवाज़ आई, ''नहीं।'' तब मैंने निडर होकर यही रुख़ अपनाने का निर्णय लिया, चाहे परिणाम कुछ भी हो।

3. शराबबंदी को पूर्ण समर्थन

मेरे अधीक्षक के कार्यकाल के समय पूर्व विधायक गुरूशरण छाबड़ा पूर्ण शराबबंदी लागू करने हेतु आमरण अनशन पर बैठे। अस्पताल में भर्ती होने के बाद हमने उन्हें मेडिकल आई.सी.यू. में रखा। उन्हें देख मन बड़ा व्याकुल हुआ। लगा कि मुझे उनका समर्थन करना चाहिए। लेकिन मेरे मित्रों ने कहा कि अधीक्षक जैसे संवेदनशील पद पर रहते हुए ऐसा समर्थन करना मेरे लिए घातक सिद्ध हो सकता है। इसी उधेड़बुन में मैं आई.सी.यू. में छाबड़ा साहब से मिलने गया। जैसे ही आई.सी.यू. से बाहर निकला, वहाँ ई टी.वी. के बाबू लाल खड़े थे। उन्होंने चिर–परिचित अंदाज़ में मुस्कुराते हुए कहा, ''सर, छाबड़ा साहब की स्थिति पर बाइट चाहिये।'' मैंने उनके स्वास्थ्य के बारे में जानकारी देने के उपरांत साफ़ शब्दों में उनका समर्थन करते हुए कहा कि शराबबन्दी समाज के लिए बहुत आवश्यक है और सभी प्रदेशवासियों को छाबड़ा साहब का समर्थन करना चाहिए।

अगले दिन मुख्यमंत्री अशोक गहलोत छाबड़ा साहब से मिलने आए और मेरे टी.वी. बयान की प्रशंसा की। अनशन समाप्ति पर शराबबन्दी लागू करने हेतु अतिरिक्त मुख्य सचिव सी.एस. राजन की अध्यक्षता में एक कमेटी बनाई गई और मुझे भी इसका सदस्य बनाया गया। मैंने बड़ी मेहनत से आँकड़े इकट्ठे किये और 3–4 महत्वपूर्ण निर्णय हुए। इनमें प्रमुख थे सचित्र चेतावनी, शराब की दुकान हटाने के लिए जनता का मतदान, सार्वजनिक रूप से शराब पीने पर भारी जुर्माना, आदि। वित्त सचिव श्री तन्मय कुमार जी के साथ अंतिम ड्राफ़्ट बनाते समय काफ़ी मशक्कत हुई। लेकिन प्रमुख वित्त सचिव डॉ. गोविन्द शर्मा एवं मुख्य सचिव श्री सी.के. मैथ्यू काफ़ी सुलझे हुए अधिकारी थे। उन्होंने इस प्रस्ताव का समर्थन किया।

मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत एक संवेदनशील व्यक्ति हैं, उन्होंने न केवल

समझौते को मंज़ूर किया बल्कि प्रदेश की जनता के हित में इसके आदेश भी प्रसारित कर दिए।

इस प्रयोग के प्रभाव

जिसे दिल से सही मानते हो और उसका समर्थन करते हो तो ईश्वर भी आपके साथ होता है। इस प्रयोग से मैंने सीखा कि जनहित के मुद्दे पर अपनी आत्मा की बात को ज़रूर कहना चाहिए।

■ ■ ■

12

अस्पताल हित सर्वोपरि

गांधीजी का व्यक्तित्व बहुआयामी था। उस कर्मयोगी ने बैरिस्टर, दर्जी, धोबी, मोची, नौकर, रसोइया, किसान आदि दर्जनों कार्य जीवन में कुशलता से किए। जब भी वे कोई काम करते थे तो पूरा मन लगाकर करते थे। इससे एक ओर जहाँ वह काम अच्छा होता था वहीं दूसरी ओर मन लगाकर काम करने से उन्हें अपूर्व ख़ुशी मिलती थी। जब मैंने अधीक्षक का पद ग्रहण किया तो निश्चय किया कि इस पद का काम भी मन लगाकर करूँगा। जब भी कोई उलझन आती थी तो एक क्षण के लिये आंखें बंद कर सोचता था कि अस्पताल हित में क्या है? हमेशा वही किया जो अस्पताल हित में होता था। इसी प्रकार के कुछ प्रकरण।

1. उपेक्षा से उपजी कुंठा का निदान

हर व्यक्ति नौकरी के दौरान मेहनत से काम करते समय यह अपेक्षा करता है कि समय पर उसका प्रमोशन होगा। लेकिन एस.एम.एस. अस्पताल में बेसमेंट के कर्मचारियों का एक वर्ग ऐसा भी है, जिन्हें पिछले 30 वर्षों से एक भी प्रमोशन नहीं मिला। ये लोग बिजली, नल, खाती आदि का काम करने वाले व्यक्ति थे। प्रमोशन न होने का कारण था, इनके आपसी झगड़े। प्रमोशन न मिलने के कारण इनमें कुंठा आ गई और वे काम के प्रति लापरवाह हो गए। हर वॉर्ड में बिजली, पानी, दरवाज़े जैसी चीज़ों की ख़राबी होने पर सुधार होने में कई दिन या सप्ताह लगते थे।

इन सबकी मीटिंग बुलाई गई और मैंने पूछा, ''कैसे हो सकता है, आज का काम आज ही?'' ''सर, हमारा प्रमोशन करवा दीजिए, हम पूरे मन से काम करेंगे।'' मैंने प्रमोशन का वादा किया और आपस में झगड़ा न करने का उनसे वादा लिया। काम में सुधार दिखने लगा। मैंने प्रमोशन से संबंधित बाबू और सैक्शन ऑफ़िसर को दफ़्तर में बुलाया और उनसे इस मामले के अवरोध पूछे। वे बोले, ''साहब, मामला बहुत ही

पेचीदगी वाला है और इसमें रिस्क भी है।'' ''क्या रिस्क हो सकता है?'' मैंने पूछा। ''सर, इंक्रायरी हो सकती है, चार्जशीट मिल सकती है।'' मैंने पूछा, ''30 सालों में प्रमोशन नहीं मिलना सही है या ग़लत?'' ''इतने समय तक प्रमोशन नहीं मिलना तो ग़लत है सर,'' वे बोले।

''इससे अस्पताल के कामकाज पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यदि अस्पताल हित की बात में मुझे जेल भी जाना पड़े तो कोई बात नहीं। इंक्रायरी या चार्जशीट ज़्यादा ख़तरनाक है या जेल?'' इसके बाद कार्यालय के अधिकारी मेहनत से इस दिशा में काम करने को तैयार हो गए।

मैंने प्रमोशन के लिए समिति बनाई और राज्य सरकार से स्वीकृति ले ली। श्री राजेश पारीक ने अथक प्रयास कर पूरे 30 सालों का रिकॉर्ड तैयार किया और अधिकांश कर्मचारियों के प्रमोशन मेरी स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति से पहले ही कर दिए।

बेसमेंट कर्मचारियों की भरपूर कोशिशों के बावजूद वॉर्ड में ख़राबी को ठीक करने में 1–2 दिन लग रहे थे। व्यवस्था को प्रबल और सुचारू बनाने के लिए मैंने कंप्यूटर का प्रयोग करने का निश्चय किया। अब कंप्यूटर से, ख़राबी की ऑनलाइन सूचना पूछताछ स्थित कंट्रोल रूम जाती है। वहाँ से सिविल, इलेक्ट्रिकल, बेसमेंट आदि में विभाजित हो संबंधित कर्मचारी या ए.एम.सी. करने वाले के पास एस.एम.एस. द्वारा जाती है। आनलाइन फ़ॉल्ट व्यवस्था में डॉ. दिनेश बैरवा और अस्पताल इंजीनियर श्री देशराज वर्मा ने काफ़ी मेहनत की।

इस प्रयोग के प्रभाव

यदि किसी कर्मचारी का प्रमोशन उसकी वांछित अपेक्षा के अनुरूप नहीं होता है तो उसमें कुंठा आ जाती है और वह काम के प्रति उदासीन हो जाता है। इन कर्मचारियों की पदोन्नति को असंभव लक्ष्य माना जा रहा था। लेकिन सच्चे मन से कोशिश करने पर रास्ता निकल आया और इनकी पदोन्नति हो गई। कर्मचारियों ने भी अपने वादे के अनुसार 'आज का काम आज' को अपनी दिनचर्या में उतारा।

2. राजनीति का शिकार मेहनती बाबू

मुझे अधीक्षक का पद ग्रहण किये हुए मुश्किल से एक महीना ही हुआ था। इस दौरान मैंने पाया कि श्री नरेन्द्र कश्यप एक मेहनती और अच्छा ज्ञान रखने वाले बाबू हैं लेकिन किसी कारण से एक राज्यमंत्री जी ने उनका तबादला करवा दिया। एक दिन राज्यमंत्री के ओ.एस.डी. का फ़ोन आया और कश्यप को रिलीव करने को कहा। मैंने उन्हें समझाया कि वह काम का जानकार मेहनती बाबू है और उसे रिलीव करना अस्पताल हित में नहीं है। ''कुछ भी हो मंत्रीजी चाहते हैं, वह बाबू तुरन्त रिलीव होना चाहिये।'' मैंने कहा, ''मैं मंत्रीजी से इस बारे में बात करना चाहूँगा। ''

अगले दिन मंत्रीजी का स्वयं का फ़ोन आ गया। उन्हें भी मैंने समझाया कि अस्पताल हित में यह ठीक नहीं है। ''आप तो रिलीव कर दीजिये क्योंकि मैं कह रहा

हूं।'' मैंने नम्रता से इन्कार कर दिया। इस पर वे थोड़े नरम पड़े। बोले, ''भाई साहब, आप सिर्फ़ एक दिन के लिए रिलीव कर दो, मेरी बात रह जाएगी।'' मैंने नम्रता से कहा, ''मैं रिलीव करने के साथ अपना त्यागपत्र भी भेज रहा हूँ।'' इस पर वे एकदम से सकते में आ गए। तुरंत बोले, ''अच्छा, मैं आपको 10 मिनट बाद फ़ोन करता हूँ।''

5 मिनट बाद ही उनका फ़ोन आया, ''अरे भाई साहब, आप ही रख लो कश्यप को। यह तो आपके कार्यालय के एक उप–अधीक्षक ने इज़्ज़त का सवाल बना लिया था।'' मैंने तुरंत उन उप–अधीक्षक को बुला कर झिड़का कि अपनी शक्ति अच्छे कामों में लगाओ न कि अपने अहंकार की तुष्टि में।

इस प्रयोग के प्रभाव

हम जिस संस्था में रहते हैं, उसके हित को चिंतन का केंद्र बिंदु बनाकर काम करते हैं तो काम सही दिशा में होते हैं। गांधी मार्ग में निडरता एक प्रमुख आयाम है। यह बाबू बड़ी मेहनत से काम करता था और कार्यालय की जटिलता को सुलझाने में इसकी अहम भूमिका रही।

3. चिकित्सकों का तबादला : अस्पताल हित और आर या पार

2013 के विधानसभा चुनावों से करीब 6 महीने पहले चिकित्सा मंत्री मुझ से नाराज़ हो गए और उन्होंने अस्पताल की कोर टीम के चार चिकित्सकों का तबादला कर दिया। आपातकालीन इकाई के डॉ. जगदीश मोदी एवं डॉ. अमित, अस्पताल विकास कार्य को देख रहे डॉ. राजेश गुप्ता और बायोवेस्ट सफ़ाई व्यवस्था देख रहे डॉ. राजाराम जैसे कर्मठ चिकित्सकों का तबादला बाहर हो गया। इन चिकित्सकों को बाहर भेजने का अर्थ था अस्पताल की व्यवस्था के चरमराने की आशंका। मैं मंत्रीजी से मिला लेकिन उनका व्यवहार बड़ा रूखा–सा था।

मैंने प्राचार्य डॉ. सुभाष नेपालिया से बात की लेकिन उनको भी मंत्रीजी ने ना कह दिया। तब मैंने महाधिवक्ता श्री गिरधारी बाफना से बात की। उन्होंने मुख्यमंत्रीजी से बात करने हेतु उनके उपसचिव श्री प्रदीप बोरड़ से बात की। कोशिश के बाद भी मुख्यमंत्रीजी का हस्तक्षेप संभव नहीं हो पाया। ऐसी स्थिति में इन चिकित्सकों को रिलीव नहीं करने की स्थिति में अपने विरूद्ध कार्यवाही का ख़्याल भी मेरे मन में आया। तब मैंने आँखें बंद कर मन में चिंतन किया कि अस्पताल हित में, मैं क्या करूँ। आत्मा की आवाज़ आई, मत रिलीव करो और मेरी सेवानिवृत्ति तक मंत्रीजी के कोप के बावजूद अस्पताल हित में मैंने उन चारों चिकित्सकों को रिलीव नहीं किया।

इस प्रयोग के प्रभाव

कर्तव्य हित में निडरता से लिए गए निर्णय से सफलता की संभावना बढ़ जाती है। बिखरे हुए अस्पताल के टुकड़ों को समेटकर एक टीम तैयार हुई थी जो पूर्ण विकेंद्रीकरण के सिद्धांत पर अस्पताल को चला रही थी। इसी टीम ने प्रभावशाली प्रबंधन के कारण रोगियों की संख्या 10 लाख से 25 लाख पहुँचने पर भी इलाज की गुणवत्ता

को बनाए रखा। ऐसी अवस्था में इन चार चिकित्सकों के कार्यमुक्त होने से रोगियों के अहित की आशंका ने मुझे साहस दिया।

4. अस्पताल हित सर्वोपरि तो मदद मिली भरपूर

एक दिन सुबह अख़बार में पढ़ा कि रीको ने अपने कॉर्पोरेट ज़िम्मेदारी के बजट से सवाई मानसिंह चिकित्सालय को 5 करोड़ रुपये दिये हैं। यह घोषणा उद्योग मंत्री श्री राजेन्द्र पारीक ने विधानसभा में की। मुझे लगा, शायद किसी अन्य अस्पताल के बजाय त्रुटिवश सवाई मानसिंह चिकित्सालय का नाम छप गया होगा। हमने कोई योजना बनाकर मदद हेतु आवेदन नहीं किया था। उसी शाम रीको के चेयरमैन श्री सुनील अरोड़ा जी का फ़ोन आया। उन्होंने बताया कि मंत्री राजेन्द्र पारीक से पिछले दिनों चर्चा के आधार पर यह धनराशि स्वीकृत की है। तब मुझे ध्यान आया कि ठेका कर्मचारियों की हड़ताल के समय मंत्रीजी श्री राजेन्द्र पारीक किसी से मिलने अस्पताल आए थे। **मेरे कक्ष में बातचीत के दौरान जब ठेकाकर्मियों की हड़ताल से वॉलंटियर्स की मदद से निपटने के तरीक़े के बारे में बताया गया तो वे बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने कहा कि संभवतः आज़ादी के बाद देश में हड़ताल से निपटने का इस प्रकार का यह पहला प्रयोग है।**

तभी हमने चिकित्सालय में बेसमेंट को काम में लेने लायक बनाने हेतु धन की आवश्यकता बताई। उन्होंने पूछा, ''कितना पैसा लगेगा?'' मैंने कहा, ''करीब 3–4 करोड़।'' कुछ नहीं बोले। लेकिन 4 दिन बाद उन्होंने विधानसभा में सवाई मानसिंह चिकित्सालय की मदद हेतु 5 करोड़ की घोषणा की। जब मैंने उन्हें धन्यवाद दिया और कहा, ''सर, आपने उस समय तो कोई वादा नहीं किया, सीधे ही पैसे दे दिये! छोटी–छोटी योजनाओं के लिए आवश्यक पैसे के लिए भी अस्पताल के अधिकारियों को जी–तोड़ मेहनत करनी पड़ती थी, आपने तो पीड़ित मानवता के लिए बड़ा उपकार किया।'' श्री पारीक बोले, ''डॉ. साब, आपका हड़ताल निपटाने का तरीक़ा नायाब था, हम यदि आपसे चक्कर कटवाएँगे तो अस्पताल की समस्याओं से आप कैसे निपटेंगे?''

हालांकि तकनीकी जटिलताओं और समयाभाव के कारण बेसमेन्ट का यह कार्य मेरे समय में पूरा नहीं हो सका।

इसी प्रकार एक बार मुख्य सचिव श्री सी.के. मैथ्यू इमरजेंसी में आए। आपातकालीन विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ. डी. एस. मीना ने उन्हें कुछ कार्यों की ज़रूरत बताई। उन्होंने सीधे 10 करोड़ रुपए का बजट विभिन्न कार्यों के लिये आवंटित कर दिया।

काफ़ी समय से अस्पताल में स्टाफ़ की कमी थी। वार्षिक बजट समिति की मीटिंग में जब नये पदों की स्वीकृति के लिए प्रस्ताव रखे गए तो प्रमुख वित्त सचिव श्री गोविन्द शर्मा ने सभी प्रस्तावों पर पूर्ण स्वीकृति दी। यह अस्पताल के इतिहास में संभवतः पहला मौक़ा था, जब बजट में माँगे गये सभी प्रस्ताव 100 प्रतिशत मंज़ूर हुए।

इससे अस्पताल को काफ़ी मदद मिली। इसी प्रकार के सहयोग के कारण सवाई मानसिंह चिकित्सालय रोगियों के बढ़ते दबाव के बावजूद अपनी गुणात्मक सेवाएँ देता रहा।

इस प्रयोग के प्रभाव

अस्पताल में बजट के पैसे के बारे में चर्चा करते समय अक्सर यह कहा जाता था कि सरकार से पैसे नहीं मिलेंगे। लेकिन उपर्युक्त बातों से मुझे यह सीख मिली कि रोगी हित के लिए अपने संकोच को छोड़ हमें कोशिश करनी चाहिए।

जब हम अपने कार्यों का लक्ष्य संस्था हित रखते हैं तो सभी उच्चाधिकारी और नेता साथ देते हैं। ज़रूरत है, अपनी बात और संस्था हित को निडरता से रखने की।

■ ■ ■

13

क्रियाशील ईमानदारी

1. जो सुख देने में है, वह लेने में नहीं

बैरिस्टर बनने के बाद गांधीजी ने राजकोट में वकालत शुरू की। लेकिन वहाँ उन्हें एक समस्या का सामना करना पड़ा। वहाँ के रिवाज़ के मुताबिक़ जो वकील मुकदमे भेजते थे, उन्हें कुछ दलाली देना ज़रूरी था। गांधीजी ने इसके लिए साफ़ इंकार कर दिया। ऐसी स्थिति से मुझे भी गुज़रना पड़ा, जब मैंने डॉक्टरी की प्रैक्टिस शुरू की।

एम.डी. के बाद मैंने मन लगाकर मेहनत की। अस्थमा के मरीज़ों का अच्छा इलाज करना मेरा लक्ष्य था। इलाज से रोगियों को अच्छा फ़ायदा मिला। बहुत से रोगी जिनका डायग्नोसिस नहीं हो पाता था, उनका डायग्नोसिस मेरे द्वारा किया गया। मैं जयपुर ही नहीं बल्कि देश का प्रसिद्ध अस्थमा का चिकित्सक बन गया। कश्मीर से लेकर पोर्ट ब्लेयर और कोलकाता से लेकर गुजरात तक के रोगी दिखाने आने लगे। इस दौरान अक्सर कुछ प्रतिनिधि आकर अपनी प्राइवेट लेबोरेट्री में जाँच के लिए मरीज़ भेजने का आग्रह करते थे। मैं उन्हें इंकार कर देता था।

1991 की दीपावली थी। सीनियर बैच के दो चिकित्सक, जो कि मेरे घनिष्ट मित्र भी थे, त्योहार पर मुझ से मिलने आए। उन्होंने घर के पास एक लेबोरेट्री खोल रखी थी। वे बोले, ''यार वीरेन्द्र, तुम तो कमीशन लेते नहीं हो फिर हमारे पास जाँच कैसे भेजोगे?'' उन्होंने मुझे जाँच की गुणवत्ता के बारे में भरोसा दिलाया। अचानक मेरे मुँह से निकला, ''क्या आप मेरे रोगियों को कमीशन दे देंगे?''

''दिया,'' उन्होंने तुरंत कहा। ''हम तुम्हारे रोगियों की जाँच 30 प्रतिशत सस्ती कर देंगे।'' जो एक्सरे साधारणतः 100 रुपए का करते थे, मेरे रोगियों के 70 रुपयों में करने लगे। जयपुर की बहुत सी लेबोरेट्रियाँ मेरे रोगियों की रियायत पर जाँच करने लग गईं।

इस प्रयोग के प्रभाव

अकसर समाज में देखा जाता है कि बेइमानी के साथ अनेक गतिविधियाँ और कार्यकलाप जुड़ जाते हैं, जबकि ईमानदारी सीधी और सपाट होती है। ज़रूरत है ईमानदारी में रचनात्मकता लाने की। कमीशन नहीं लेना ईमानदारी है लेकिन रोगी की कम पैसों में जाँच करवाना रचनात्मक ईमानदारी है। नतीजा निकला रोगियों का विश्वास। जब रोगी विश्वास के साथ दवा लेता है तो दवा सही प्रकार से लेता है जिससे रोग में ज़्यादा फ़ायदा मिलता है।

2. ज़रूरतमंद रोगियों की मदद (निर्धन की क्या पहचान?)

अस्थमा रोगियों का इलाज करना मेरा जुनून है। रोगियों की भीड़ रहती थी। मेरा पैतृक निवास छोटा पड़ा तो वर्तमान घर बनकर तैयार हो गया और 1996 में मैं यहाँ आ गया। मैंने सोचा कि समाज के कुछ ज़रूरतमंद लोगों से फ़ीस नहीं लूँ। कैंसर पीड़ित, अनाश्रित विधवा और निर्धन–तीन श्रेणियाँ मेरी समझ में आईं। अपने मित्र डॉ. श्यामसुन्दर से चर्चा की तो उसे लगा कि निर्धन श्रेणी रखना उचित नहीं है।

निर्धन का कोई पैमाना नहीं है इसलिए उसे आशंका थी कि कहीं सभी लोग निर्धन न बन जाएँ। मैंने कहा, ''चलो देखते हैं।'' इसके बावजूद निर्धनता की परिभाषा में न उलझकर तभी से **कैन्सर पीड़ित, अनाश्रित विधवा और निर्धन फ़ीस नहीं दें**–यह सूचना प्रमुखता से मेरे कक्ष के बाहर दरवाज़े पर चिपकी हुई है। जब भी मुझे ऐसे लोग दिखाने आते हैं और मैं फ़ीस नहीं लेता हूँ तो उनकी आँखों में एक ऐसी दुआ होती है जिससे एक विशेष प्रकार के आनंद की अनुभूति होती है।

मैंने एक बार सोचा कि फ़ीस माँगूँगा नहीं, कोई नहीं देगा तो कोई बात नहीं। कुछ दिन तो ठीक चलता रहा, लेकिन एक दिन समृद्ध दिखने वाला व्यक्ति बिना फ़ीस दिए चला गया तो मन में बेवक़ूफ़ बनने की बात क्षणभर के लिए आई और निकल गई। 10 मिनट बाद वह व्यक्ति वापस आया और फ़ीस देते हुये कहा, ''सर, मैं भूल गया था, आप माँग लेते।'' उस समय मैं एक ग्रामीण महिला को देख रहा था। वह महिला तपाक से बोली, ''पैसों से डॉक्टरजी के घर के कमरे भर गए हैं, अब माँग के क्या करेंगे?'' उस महिला की बात मुझे दिल में चुभती हुई–सी लगी। मन थोड़ा खिन्न भी हुआ। मैंने कहा तो कुछ नहीं लेकिन इसके बाद समर्थ से फ़ीस माँग कर भी लेने लगा।

इस प्रयोग के प्रभाव

अकसर हम अपने व्यवसाय में लेने का यानी कमाई करने का सुख तो लेते हैं लेकिन उपर्युक्त तीन श्रेणियों की फ़ीस माफ़ कर देने के सुख की अनुभूति मुझे ज़्यादा संतोषजनक प्रतीत होती है। ज़रूरतमंद की मदद करनी चाहिए लेकिन बिना ज़रूरत, ज़्यादा मदद करने पर लोग अलग–अलग अर्थ निकालते हैं।

3.एक तराज़ू में मित्र, दूसरे में मरीज़

मेरे नए मकान के सामने श्री सुनील ने दवा की दुकान खोली थी। मेरे मन में

आया कि क्यों नहीं रोगियों को सस्ती दवा उपलब्ध हो। मैंने कई बार सुनील से चर्चा की। वह चाहता भी था, लेकिन दवा विक्रेताओं की ऐसोसिएशन के दबाव के कारण वह कुछ नहीं कर पाया। तभी 2005 में घर में नया निर्माण हुआ तो एक दुकान की जगह निकल आई। मैंने वहाँ दुकान बनवाकर श्री अजय गुप्ता को इस शर्त पर दुकान दी कि वह लिखी हुई कीमत में रियायत कर सभी रोगियों को दवा देगा। सुनील से मेरे मित्रता के रिश्ते एक छोटे भाई जैसे घनिष्ट थे। जनहित में सुनील के स्थान पर अजय को कंसैश्नल दवा स्टोर देने का यह निर्णय मेरे लिए बहुत कष्टदाई था। इससे मन कई दिनों तक दुःखी रहा था। लेकिन रोगियों को राहत देने का मानस और भी ज़्यादा प्रबल था। अब कई वर्षों से, लिखी क़ीमत से 20 प्रतिशत रियायती मूल्य पर अजय रोगियों को दवा उपलब्ध करवा रहा है।

इस प्रयोग के प्रभाव

'देने का सुख', लेने के सुख से ज़्यादा होता है। यदि 'देने का सुख', दुःखी रोगियों के माध्यम से मिलता है तो सुख की अनुभूति भी अधिक होती है। जब मैंने देने के सुख के स्वाद को चखा तो परोपकार की भावना ज़्यादा प्रबल हुई। **विडंबना यह कि हममें से बहुत–से लोगों ने 'देने के सुख' का स्वाद कभी चखा नहीं है। जो इसके स्वाद को चख लेते हैं, उन्हें तो जैसे इसका नशा हो जाता है।**

4. अस्थमा रोगी : इलाज का प्रशिक्षण

अस्थमा एक ऐसा रोग है जिसमें रोगी बार–बार बीमार और बार–बार ठीक होता है। जब रोगी ठीक होता है तो उसे लगता है कि वह हिमालय पर भी चढ़ सकता है। लेकिन जब वह बीमार होता है तो ऐसा लगता है कि अगली साँस शायद वह नहीं ले पाएगा। बार–बार ठीक और बार–बार बीमार होने के इस क्रम में बहुत–से रोगी, विशेषकर बच्चे हताश और निराश हो जाते हैं।

ऐसे रोगियों का इलाज एक डॉक्टर के साथ–साथ यदि मित्र बनकर किया जाए तो ज़्यादा असरदार होता है। मैंने इसी को अपनी कार्य पद्धति का आधार बनाया। इस बीमारी में दवा के साथ–साथ रोगी को एक विशेष प्रकार की जीवनशैली अपनानी पड़ती है। ठंडी चीज़ें, खट्टी चीज़ें, ठंडी हवा, पानी में भीगना, धुआँ आदि बहुत से कारक बीमारी को बढ़ा देते हैं। ऐसी स्थिति से निपटने के लिए अस्थमेटिक स्टाइल की खोज की। उसके प्रचार–प्रसार पर ध्यान दिया। खेल–खेल में रोगी को सिखाया जाता है कि वे अपने रोग से निपटने की कला में कैसे पारंगत हो सकते हैं। इसके लिए अस्थमा रोगियों के निःशुल्क सम्मेलन समय–समय पर आयोजित किए। इसमें ज्ञान के अलावा अल्पाहार भी दिया जाता है। स्वस्थ रहने की कला सिखाने के लिये एक त्रैमासिक पत्रिका 'अस्थमा संजीवनी' का प्रकाशन शुरू किया गया। एलर्जी–अस्थमा रोगियों के लिए यह काफ़ी उपयोगी सिद्ध हुई। इसके प्रकाशन में वरिष्ठ पत्रकार डॉ. यश गोयल और डॉ. सुरेश बोहरा का काफ़ी योगदान रहा।

इस प्रयोग के प्रभाव

अस्थमा के रोग के विभिन्न पहलुओं में प्रशिक्षण पाने के उपरांत रोगी अपने रोग पर बेहतर ढंग से अंकुश लगा पाने में सफल रहते हैं।

■ ■ ■

14

समस्या का समाधान : गांधी मार्ग

पैसा ज़्यादा, काम कम और समस्या रहित कार्यालय आज हमारे युवाओं की पहली पसंद हैं। यही कारण है कि आज परिवार और समाज की मानसिकता काम से दूर और आराम की ओर अग्रसर हो रही है। यह मानसिकता परिवार, समाज और देश के लिए तो घातक है ही, स्वयं को भी ख़ुशी से वंचित करती है।

एक क्षण चिंतन करें तो पाएँगे कि जब भी हम कोई काम बिना मन करते हैं तो वह हमें नीरस लगने लगता है और कुछ समय बाद हम थक जाते हैं। ऐसी स्थिति में छोटे से छोटा काम भी भारी लगने लगता है और मन को ख़ुशी नहीं मिलती। इसके विपरीत बड़े से बड़ा काम भी जब हम मन लगाकर करते हैं तो लंबे समय तक काम करने के बावजूद थकान नहीं आती और मन में ख़ुशी का अहसास होता है।

इसी प्रकार, दैनिक जीवन में कोई न कोई समस्या अवश्य आनी चाहिए। **यदि समस्या नहीं आएगी तो समाधान के तरीके नहीं ईजाद होंगे। समस्याओं का समाधान निकालते-निकालते कुंठित बुद्धि तीक्ष्ण तो बनती ही है बल्कि जब भी समस्या का समाधान होता है तब एक अनूठी ख़ुशी प्राप्त होती है एवं सफलता का अहसास होता है। इसलिए यदि जीवन में नियमित ख़ुशी पानी है तो समस्याओं का समाधान करते हुए मेहनत भरा जीवन जीना व समस्या रहित और आरामपूर्ण जीवन से परहेज़ करना श्रेयस्कर है।** अस्पताल में जब भी कोई समस्या आती थी तो गांधी मार्ग की रोशनी में मैं उस समस्या का अहिंसक और ईमानदार तरीक़े से समाधान निकालने के लिए चिंतन करता था। हमेशा तीन बातों पर विशेष ध्यान देता था। एक- समाधान अस्थाई न होकर स्थाई हो, दो- उससे संबंधित लोग उस समाधान के श्रेय के भागीदार बनें और तीन- समाधान में अस्पताल हित अर्थात् रोगी हित सर्वोपरि रहे।

एक काम को जब हम टाल देते हैं तब वह समस्या बन जाता है। इसलिए

ज़रूरी है कि काम टाला न जाए और समस्या बन चुके कामों का जल्दी से जल्दी समाधान निकाला जाए।

लाइलाज समस्याओं का समाधान

1. कैसे छूटी काम न करने की आदत

अस्पताल की लैब में एक टैक्नीशियन ड्यूटी पर तो आ जाता था, लेकिन आने के बाद कोई न कोई बहाना बनाकर काम टालता रहता था। कई बार समझाने के बाद भी यह बात उसकी समझ में नहीं आई।

तब मैंने उससे कहा कि अगले दो दिनों का कार्य एक प्रयोग करने हेतु है। मंगलवार को तुम ड्यूटी के समय पर सिर्फ़ कुर्सी पर बैठोगे और लैब का सारा काम दूसरा टैक्नीशियन संभालेगा। बुधवार को दूसरा टैक्नीशियन छुट्टी पर रहेगा और सारा काम तुम करोगे। गुरुवार को मैंने उसे चैंबर में बुलाया और पूछा, ''ज़्यादा ख़ुशी कौन से दिन मिली?'' ''सर, जिस दिन पूरा काम किया, उस दिन ज़्यादा ख़ुशी मिली।'' ईश्वर ने शरीर बनाया ही काम करने के लिए है। इसलिए काम करने से ज़्यादा ख़ुशी मिलती है। ''मैं अब मन लगाकर काम करूँगा,'' उसने वादा किया।

इस प्रयोग के प्रभाव

काम नहीं मिलना जीवन में सबसे बड़ी सज़ा है। फिर भी हममें से बहुत से लोग ऑफ़िस के समय में आराम करने को अच्छा मानते हैं। इसी भ्रांति को दूर करने के लिए मैंने यह प्रयोग किया, जो सफल रहा। नतीजन उस टैक्नीशियन की कामचोरी की आदत ख़त्म हो गई।

2. अस्पतालकर्मी और निःशुल्क जाँच

समाज की कुछ श्रेणियों को अस्पताल में होने वाली जाँचें निःशुल्क उपलब्ध थीं। लेकिन इन श्रेणियों से बाहर के भी बहुत से लोग जाँचें निःशुल्क करवाते थे। यह न्यायोचित नहीं था। इनमें सबसे प्रमुख श्रेणी थी अस्पताल के कर्मचारियों की, जो अपने रिश्तेदारों की जाँचें निःशुल्क चाहते थे।

अस्पताल के कर्मचारियों को इलाज के ख़र्च का पुनर्भरण होता है। लेकिन इसमें क़रीब 1 से 2 साल लग जाते थे। चीफ़ एकाउंट्स ऑफ़िसर श्री ब्रज भूषण से बात करने पर उन्होंने बताया कि इस अवधि को कम किया जा सकता है। इस प्रकरण से जुड़े सभी लोगों की मीटिंग बुलाई गई। इसमें निश्चय किया गया कि जो भी मेडिकल रीइंबर्समेंट का बिल आएगा, 15 दिन में ट्रेज़री भेज दिया जाएगा। इलाज के ख़र्च का पुनर्भरण करने के काम को एक साल से घटाकर एक महीने में करने वाले बाबू श्री रेख राज का फ़ोटो भी 'स्टार ऑफ द मंथ' में छपा।

मैंने स्वयं के दो बार सीटी स्कैन, दो बार एम.आर.आई. और कुछ बार ब्लड टेस्ट करवाए और हमेशा इनका भुगतान किया। कई मित्रों ने कहा, ''अरे अस्पताल में काम करते हो, और कुछ नहीं तो कम से कम जाँचें तो निःशुल्क करवाओ।''

इस प्रयोग के प्रभाव

यदि लक्ष्य को ध्यान में रख कर, काम करने वाले कर्मचारियों को प्रेरित किया जाए तो वांछित परिणाम आ सकते हैं। पुनर्भरण की इस सुविधा के बाद निःशुल्क जाँचें करवाने के लिए आने वाले कर्मचारियों की संख्या में काफ़ी कमी आई।

3. मेडिकेयर रिलीफ़ सोसाइटी में बकाया पैसे के लिए भटकते रोगी

कई श्रेणियों के रोगियों को दवाइयाँ या ऑपरेशन पैकेज, मेडिकेयर रिलीफ़ सोसाइटी के द्वारा मिलता था। इसमें रोगियों के ख़र्चे का ब्योरा रखना और इलाज के बाद बचे पैसे लौटाने का काम काफ़ी मुश्किल होता था और रोगियों को चक्कर पर चक्कर लगाने पड़ते थे। इसमें हर समय रिश्वत की गुंजाइश भी रहती थी।

इसके लिए पहले चरण में स्टोर, लाइफ़लाइन एवं मेडिकल रिलीफ़ सोसाइटी का सारा रिकॉर्ड कंप्यूटर में डलवाया गया। अगले चरण में तीनों को ऑनलाइन सिस्टम से जोड़ दिया गया। बाक़ी बची रक़म को चैक से न लौटाकर आर.टी.जी.एस. से भेजा जाने लगा। यह काम होने के बाद रोगियों को बकाया पैसे लेने ऑफ़िस आने की ज़रूरत ही समाप्त हो गई। इस योजना को सफल बनाने हेतु ऑर्थोपेडिक, न्यूरोसर्जरी और कार्डियोथोरेसिक विभागों की मीटिंग बुलाई गई। इन विभागों में कार्यरत चिकित्सकों एवं नर्सिंगकर्मियों की ज़बरदस्त समझाइश की गई।

इस प्रयोग के प्रभाव

कंप्यूटर का अच्छा प्रयोग करने और गांधी मार्ग के अंगीकार से प्रदेश के सबसे बड़े अस्पताल की बहुत–सी असाध्य समस्याएँ सुलझ गईं। यदि अस्पतालकर्मियों को सही लक्ष्य के साथ प्रेरित किया जाए तो वांछित परिणाम भी मिलते हैं।

4. लैब की रिपोर्ट ऑनलाइन

अस्पताल में ग़लत लैब रिपोर्ट एक विकट समस्या थी। इसका प्रमुख कारण निकला, टाइपिंग की ग़लती। मशीन जो प्रिंट देती थी, उसके आँकड़े कंप्यूटर ऑपरेटर टाइप कर रिपोर्ट में चढ़ाता था। यह व्यवस्था कई वर्षों से चल रही थी। मशीनों को रिपोर्ट देने वाले ऑनलाइन सिस्टम से जोड़ना एक चुनौती थी। कंपनियों के इंजीनियर्स से लगातार बात करने से यह काम हो गया। लेकिन कंप्यूटरकर्मियों के मन में यह आशंका थी कि ऑनलाइन सिस्टम के बाद वे बेरोज़गार हो जाएँगे। इसलिए लैबोरेट्री के विभाग अकसर कम सहयोग करते थे। इस भ्रांति का निवारण बातचीत से हुआ। इसके बाद नियमित मॉनिटरिंग से ऑनलाइन सिस्टम काम करने लगा जिससे ग़लत रिपोर्ट की समस्या पर अंकुश लगा।

इस प्रयोग के प्रभाव

छोटी–सी समझाइश से एक बड़ी समस्या का हल निकल गया। **कई बार कर्मचारी अपने छोटे–से स्वार्थ की पूर्ति के लिए समाज का बहुत बड़ा नुकसान कर देते हैं। हर कार्यालय में ऐसी बातों की मॉनिटरिंग की आवश्यकता है।**

5. रक्त की कमी बदली बहुतायत में

सवाई मानसिंह अस्पताल में सड़क दुर्घटना एवं गंभीर रोगों से ग्रसित लोग बड़ी संख्या में भर्ती होते हैं जिनको रक्त की आवश्यकता भी होती है। अकसर रक्त के लिए पर्याप्त संख्या में दोस्त एवं रिश्तेदार उपलब्ध नहीं होते थे। ऐसी अवस्था में लोग या तो किसी नेता को पकड़ते थे या पेशेवर रक्तदाताओं से संपर्क कर ख़रीद–फ़रोख़्त में लिप्त होते थे। इस प्रकार रक्त की ख़रीद–फ़रोख़्त अनैतिक ही नहीं, ग़ैर क़ानूनी भी है। इस पर अंकुश लगाने की कोशिश पिछले कई दशकों से हो रही थी। गार्ड, सादे वस्त्रों में पुलिस, ब्लड बैंक में कैमरे, आदि कई प्रयास किए गए लेकिन सभी नाकाम रहे। अचानक विचार आया कि क्या हम रक्त की कमी को बहुतायत में बदल सकते हैं।

समस्या का अध्ययन करने पर पता लगा कि हर वर्ष करीब 200 रक्त कैंप आयोजित होते हैं। यदि 365 कैंप हों यानी रोज़ाना एक कैंप हो, तो रक्त की कमी ख़त्म हो जाएगी और हर ज़रूरतमंद को रक्त मिल सकेगा। हमने पिछले सालों के रक्त कैंप आयोजित करने वाले दानदाताओं से संपर्क किया। उनका सम्मान समारोह आयोजित किया गया। डॉ. अखिलेश को इसका नोडल अधिकारी बनाया गया व अगले एक वर्ष का ब्लड बैंक कैलेंडर बनाया गया। इस समारोह में आगंतुकों के सम्मान के साथ–साथ अगले साल की कैंप की तारीख़े आरक्षित करने की अपील की गई। हाथों–हाथ 100 कैंपों की तारीख़ें आरक्षित हो गईं। लगातार मॉनिटरिंग के साथ वर्ष में 365 कैंप और हर माह में हर रोज़ एक कैंप बुक हो गया। रक्त की कमी बहुतायत में बदल गई।

इसके अतिरिक्त मेडिकल समुदाय द्वारा ज़रूरतमंद की मदद के लिए 'रक्त सेवा' शुरू की गई। करीब 500 मेडिकल छात्र, रेज़िडेंट्स, नर्सिंग स्टाफ़ एवं मेडिकल टीचर्स इसमें वॉलंटियर्स बने। रक्त की ज़रूरत पड़ने पर वॉलंटियर ज़रूरतमंद रोगी से मिलता और उसके लिए रक्तदान करता था। यह मिलन बहुत ही मार्मिक होता था। साथ ही रक्त लेने वाला वादा भी करता था कि अगले एक साल में वह कहीं भी समाज के लिए रक्तदान करेगा। डॉ. जगदीश चौधरी को इसका नोडल ऑफ़िसर बनाया गया। एक ओर जहाँ रक्त की ज़रूरत के मारे लोगों की मदद हो रही थी वहीं दूसरी ओर ज़रूरतमंद रोगी से मिलकर रक्तदान करने का अभूतपूर्व आनंद ले रहे थे लोग।

इस प्रयोग के प्रभाव

रक्त की उपलब्धता को 'Scanty to Plenty' बनाने का सपना साकार होते ही समस्या अपने आप समाप्त हो गई। **जहाँ समस्या है वहीं उसका समाधान होता है। यही विधि का विधान है। ज़रूरत है, समाधान के नवीनतम तरीक़ों की पहचान कर उन्हें लागू करने की।**

6. नई टेक्नॉलोजी और पुराने कर्मचारी

2009 से लगभग सभी वॉर्डों एवं ओ.पी.डी. में कंप्यूटर लगे हुए थे। लेकिन

रजिस्ट्रेशन काउंटर को छोड़ कहीं भी इनका उपयोग नहीं हो रहा था। अस्पताल के नर्सिंग स्टाफ़ में यह भावना व्याप्त थी कि वे न तो कंप्यूटर जानते हैं और न ही इस उम्र में इसे सीख सकते हैं। ओ.पी.डी. के नर्सिंगकर्मी ने तो यहाँ तक कह दिया कि आप नर्सिंगकर्मियों से कंप्यूटर का काम करवाकर उनका शोषण कर रहे हैं। आप दबाएँगे तो हम आंदोलन करेंगे। नर्सिंगकर्मियों के इस प्रकार के रवैये के कारण ही अधिकांश कंप्यूटर 2009 से ही वॉर्डों की बजाय स्टोर्स में रखे हुए थे। इस समस्या का समाधान निकालने हेतु अस्पताल के नर्सिंग स्टाफ़ की एक मीटिंग आयोजित की गई। इस सभा में मैंने एक सवाल पूछा, ''वे लोग हाथ खड़ा करें जिनके पास मोबाइल फ़ोन नहीं है।'' कोई हाथ खड़ा नहीं हुआ। मैंने कहा, ''जितने स्टैप्स मोबाइल में फ़ोन मिलाने में लगते हैं, उतने ही स्टैप्स से आप रोगी की जानकारी वॉर्ड एवं ओ.पी.डी. कंप्यूटर में दर्ज कर सकेंगे।''

बात का असर पड़ा। सभी लोग कंप्यूटर इस्तेमाल में रुचि लेने लगे। तब मालूम पड़ा कि कई जगह के कंप्यूटर ख़राब हो गए थे या उनकी लाइन ख़राब थी। मेरे बचपन के दोस्त डॉ. बीरबल दाना द्वारा दी गई सहयोग राशि से इनको ठीक करवा लिया गया। अब सभी वार्डों में रोगियों की भर्ती, ट्रांस्फ़र एवं डिस्चार्ज का पूरा रिकॉर्ड कंप्यूटर पर आ गया। मेरी सेवानिवृत्ति से एक माह पहले कुछ वार्डों में डिस्चार्ज टिकट्स भी कंप्यूटर पर बनने लग गए थे। डिस्चार्ज टिकट्स में रेज़िडेंट डॉ. परमिन्दर के सुझाव बड़े महत्वपूर्ण साबित हुए।

इस प्रयोग के प्रभाव

सही उदाहरण से समझाइश से एक ओर जहाँ अस्पताल के नर्सिंग कर्मचारियों का सहयोग मिला तो दूसरी ओर मित्र की मदद से जब कंप्यूटर ठीक हो गए तो बहुत से काम द्रुत गति से होने लग गए।

7. आपातकालीन इलाज में सुधार

इमरजेंसी एक तरह से अस्पताल का दर्पण होता है। वहाँ कोई साधारण इंसान नहीं, बल्कि दु:खी और घबराया हुआ परिजन रोगी को लेकर आता है। रेज़िडेंट जो आते ही रोगी को देखते हैं, वे हुनर में तो अच्छे होते हैं, लेकिन उन्हें व्यवहारकुशलता का अनुभव नहीं होता। ऐसे में साधारण–सी चूक के प्रति भी घबराए हुए परिजन की प्रतिक्रिया सामान्य नहीं होती। इसलिए इमरजेंसी में कहा–सुनी की घटनाएँ बहुत होती हैं। इन पर अंकुश रखने के लिए एक सीनियर डॉक्टर (सहायक आचार्य) की ड्यूटी वहाँ लगाई जाती रही है। लेकिन पिछले 15–20 सालों से सीनियर डॉक्टरों ने इमरजेंसी ड्यूटी करना बंद कर दिया था।

हमने सबसे पहले विभिन्न लोगों को प्रशिक्षण दिया। सभी को तीन बातों को व्यवहार में लाने पर ज़ोर दिया गया। पहली बात थी, परिजनों का ख़राब व्यवहार। सबने माना कि इमरजेंसी में आने वाले रोगियों एवं परिजनों की मानसिक स्थिति सामान्य नहीं होती है, इसलिए इन्हें साधारण इंसान मत मानो। इस प्रकार के दु:खी इन्सान के अप्रिय

व्यवहार का बुरा मत मानो। दूसरी बात थी, ड्यूटी के प्रति सजगता। तीसरी बात थी, इलाज की। हर रोगी जिसे इंजेक्शन लगना है उसे इंजेक्शन इमरजेंसी में आने के पाँच मिनट में लग जाए।

सीनियर डॉक्टर जो कि शिफ़्ट के इंचार्ज हैं, उनको अपनी ड्यूटी का प्रॉफ़ॉर्मा भरने का काम दिया गया एवं ड्यूटी परिवर्तन पर उस ड्यूटी में हुए कार्य की सूचना देने के लिए पाबंद किया गया। इससे इमरजेंसी के इलाज में काफ़ी सुधार हुआ। इमरजेंसी के विभागाध्यक्ष डॉ. डी.एस. मीना एवं डॉ. जगदीश मोदी की सजगता से काफ़ी फ़र्क पड़ा।

इस प्रयोग के प्रभाव

इमरजेंसी की कार्यप्रणाली की कमियों की पहचान और तीन बिंदुओं के द्वारा किया निराकरण काफ़ी प्रभावी रहा। रोगी के इमरजेंसी में आने के कितने समय बाद इंजैक्शन लगा, इसकी मॉनिटरिंग में वहाँ लगे वीडियो रिकॉर्डर की मदद भी ली गई। इससे इमरजेंसी की गुणवत्ता में सुधार आया।

8. मूलभूत सुविधाओं के लिए जूझता अस्पताल

जब मैं एस.एम.एस. मेडिकल कॉलेज का छात्र था तभी से मुझे शुद्ध पानी, अच्छी चाय और अच्छे भोजन की कमी अस्पताल में हमेशा खलती थी। भर्ती रोगी के परिजन के लिए तो यह महत्ती आवश्यकता थी ही। बोतल से हम लोग जो पानी पीते थे वह टंकी का होता था या बाथरूम के नल का, हमें भी ज्ञात नहीं था। प्लास्टिक की थैली में बाहर थड़ियों से बनकर आने वाली चाय से बचने का एक ही उपाय था कि हम वॉर्ड में ही चाय बना लें। बहुत–से लोग ऐसा करते थे। लेकिन अकसर दूध वही काम में आता था जो रोगियों के लिये होता था। खाने की कैंटीन एवं अस्पताल के पास स्थित थड़ियों के दूषित खाद्य पदार्थों के बारे में तो अख़बारों में भी समय–समय पर छपता रहता था।

चाय की समस्या के समाधान की ज़िम्मेदारी डॉ. अनिल दुबे को दी गई। डॉ. दुबे ने सुझाव दिया कि जे.डी.ए. के कार्यालयों में लिप्टन के कियॉस्क्स लगे हुए हैं, जो बढ़िया काम कर रहे हैं। अस्पताल में पाँच लिप्टन और पाँच नेस्कैफ़े के कियॉस्क्स लगवा दिए गए। चाय, कॉफ़ी और सूप की कीमत मात्र 4 रुपए। यह प्रयोग काफ़ी उपयोगी रहा।

कई सालों से कैंटीन के बारे में कोर्ट में चल रहे केस को निपटाने की ज़िम्मेदारी डॉ. दिनेश द्विवेदी और श्री एच. के. टूटेजा को दी गई। इन लोगों के सतत प्रयासों से अतिरिक्त ज़िलाधीश जयपुर श्री अरुण गर्ग ने जनहित में कैंटीन हटाने पर दिया स्टे रद्द कर दिया।

इसके बाद अक्षय पात्र को कैंटीन का काम दिया गया। इस काम में विभाग के प्रमुख चिकित्सा सचिव श्री दीपक उप्रेती के सहयोग से निःशुल्क जगह उपलब्ध करवाई गई, जिससे पदार्थों की क़ीमत कम रखना संभव हो सका। अक्षय पात्र ने पुरानी कैंटीन

से भी कम पैसों में शुद्ध खाना उपलब्ध करवा दिया।

इस प्रयोग के प्रभाव

अस्पताल के 80 सालों के इतिहास में पहली बार चाय, कॉफ़ी, सूप और शुद्ध भोजन उपलब्ध हो पाया। मैं इसे अपने कार्यकाल की एक बड़ी उपलब्धि मानता हूँ।

9. बिना यूनिफ़ार्म टैक्नीशियन

लैब के निरीक्षण के दौरान चार टैक्नीशियन ने एप्रन नहीं पहन रखे थे। ग़लती स्वीकार करने के बाद उन्होंने लैब के चारों कमरों में प्रायश्चित्त स्वरूप सफ़ाई की।

इस प्रयोग के प्रभाव

सभी लोग कहते थे, ''लैब में गंदगी है और सफ़ाई होनी चाहिए,'' लेकिन करे कौन सफ़ाई?

प्रायश्चित्त में सफ़ाई करने का मौका मिलने पर स्पष्ट हुआ कि सफ़ाई कोई और नहीं, वे स्वयं भी कर सकते हैं। **कोई भी काम छोटा या बड़ा नहीं होता।**

10. लापरवाह से बना ज़िम्मेदार

2013 में मेरे पास बिहार का एक लड़का ज़ीशान हाउस जॉब के लिये आया। वह मेधावी और मेहनती छात्र था, लेकिन कई बार निर्देश भूल जाता था। एक बार एक रोगी के लिये उसे बताया गया कि उसका ए.बी.जी. करवाए। वह ए.बी.जी. कराना भूल गया। सुबह तक रोगी की तबीयत ज़्यादा ख़राब हो गई। सुबह ए.बी.जी. करवाने के बाद उसे बाईपैप मशीन पर रखा गया। तब जाकर कहीं क़रीब 4–6 घंटों में रोगी की हालत में सुधार हुआ।

ज़ीशान ने ग़लती स्वीकार करते हुए दोबारा ग़लती नहीं करने का विश्वास दिलाया। प्रायश्चित्त के लिए उसने एक विशेष प्रकार का ख़ून 'सिंगल डोनर प्लेटलेट' (एस.डी.पी.) देने का निश्चय किया। इस घटना के बाद ज़ीशान एक डायरी जेब में रखने लगा और उसी में आदेश लिखने लगा।

कुछ दिनों बाद एक डेंगू के रोगी को मैच रक्त वाला कोई व्यक्ति नहीं मिला। ज़ीशान ने उसे एस.डी.पी. रक्त देकर प्रायश्चित्त करने का संकल्प पूरा किया और रोगी के सभी परिवारजनों ने ज़ीशान को हृदय से दुआ दी।

इस प्रयोग के प्रभाव

जब प्रायश्चित्त में ऐसा काम किया जाए कि उसमें दुआ भी मिले तो इससे संवेदनशीलता जागृत होती है। ज़ीशान की ग़लती भूलने से हुई और भविष्य में पॉकेट डायरी में कार्य लिखकर रखने से इस समस्या का समाधान निकला।

11. गंभीर रोगियों की तुरन्त जाँच व्यवस्था

सवाई मानसिंह अस्पताल राज्य का सबसे बड़ा अस्पताल है। यहाँ गंभीर रोगियों को कुछ जाँचों की तुरंत ज़रूरत होती है। उदाहरण के लिए हार्ट अटैक पता लगाने की जाँच सी.पी.के.–एम.बी., सेप्टीसोमिया के लिए सी.बी.सी., रक्तस्राव के लिए पी.टी.आई.

एन.आर. आदि। बायोकेमिस्ट्री और पैथोलॉजी के चिकित्सकों से बात कर ऐसी व्यवस्था की गई कि इस प्रकार की जाँचों की रिपोर्ट्स एक घंटे में ऑनलाइन उपलब्ध हो जाती थीं।

12. अस्पताल में भूलभुलैया

अस्पताल में किसी भी वार्ड या कमरे को ढूँढना एक टेढ़ी खीर थी। न केवल परिजनों के लिए बल्कि अस्पताल में काम करने वाले कर्मचारियों के लिए भी। वार्डों के नामों जैसे 1एबी, 2 ऐफ़ आदि का आपस में कोई संबंध नहीं था। कभी कोई मिलने आता या कोई महत्वपूर्ण डाक आती तो भगवान भरोसे ही गंतव्य तक पहुँच पाती थी। पिछले 30 सालों से कामना थी कि इसका कोई समाधान निकले।

मैंने अधीक्षक बनते ही पत्रकारों को चाय पर बुलाया एवं सुझाव लिए। पत्रकारों ने सही प्रकार के सूचना पटट् की आवश्यकता बताई। डॉ. राजेश गुप्ता इसके नोडल अधिकारी बने। क़रीब तीन महीनों के समय में पूरे अस्पताल में हर स्थान, वॉर्ड व कमरे का एक निश्चित नंबर हो गया। रोगियों, परिजनों एवं मिलने आने वालों के लिए सुविधा हो गई।

इस प्रयोग के प्रभाव

हर कमरे, लिफ़्ट और गेट पर नंबर एवं जगह–जगह नक़्शे लगने से अस्पताल में एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना सुविधाजनक हो गया।

13. कबाड से भरा अस्पताल

जब मैं लैक्चरर था तभी से देखता आ रहा था कि हमारी लैब और वार्डों में ख़राब सामान के ढेर लगे होते थे। मैंने आते ही इसका समाधान पूछा तो समस्या आई कि निश्चित अवधि पूरी हुए बिना सामान को बेकार घोषित नहीं किया जा सकता। समय से पहले बेकार सामान को कंडम करने की समस्या के बारे में मैंने प्रमुख चिकित्सा सचिव श्री दीपक उप्रेती से चर्चा की। उन्होंने इसका तोड़ बताया, ''जैसे चद्दर 6 महीने चलनी चाहिए, लेकिन यदि विशेषज्ञ 2 महीनों बाद यह कहें कि रोगी के लिए इसका उपयोग सुरक्षित नहीं तो इसे हम बेकार घोषित कर सकते हैं। इसी बात का सहारा लेकर डॉ. रणधीर राव और श्री ब्रज भूषण शर्मा ने अस्पताल के कबाड़ में पड़े काफ़ी सामान का निस्तारण करवाया। इससे काफ़ी जगह मिल गई। श्री उप्रेती एक क़ाबिल अफ़सर हैं जो लालफ़ीताशाही के स्थान पर समस्या के समाधान में विश्वास रखते हैं।

इस प्रयोग के प्रभाव

कबाड़ के निस्तारण से एक ओर जहाँ काफ़ी खाली स्थान अस्पताल के वार्डों में उपलब्ध हो गया वहीं दूसरी ओर इसकी नीलामी से धन की आमदनी भी हुई।

14. अनारकली का मक़बरा

अस्पताल में प्रवेश करते समय बाँईं ओर एक कमरा बना था, जिसका कोई

दरवाज़ा नहीं था। उसके बग़ल में लगे फ़व्वारों की सुंदरता में यह एक बड़ा अवरोध था। पता किया तो मालूम चला कि यहाँ अस्सी के दशक की कोबाल्ट मशीन दफ़न है। कोबाल्ट मशीन का उपयोग कैंसर के रोगियों के इलाज में होता है। लेकिन इसके खुले में पड़े रहने से विकिरण का ख़तरा रहता है इसलिए बेकार पड़ी मशीन के चारों ओर दीवार बनाकर यहाँ रख छोड़ा था। इस मशीन की ख़रीद–फ़रोख़्त कई इन्क्वायरी कमेटियों के रास्ते से गुज़री। यह मशीन ज़्यादा काम नहीं कर पाई और यहाँ दफ़न कर दी गई।

मैंने इसकी पत्रावली रखने वाले बाबू श्री अब्दुल हफ़ीज़ और रेडिएशन फ़िज़िक्स के विभागाध्यक्ष डॉ. अरुण चौगुले को मशीन को नीलाम कर हटाने की बात कही। शुरू में दोनों ही हिचकिचाए। ''सर, यह बहुत ही झंझट का मामला है। मेरी राय में हाथ डालना उचित नहीं है।'' मैंने पूछा, ''अस्पताल हित में यह हटनी चाहिए या नहीं?''

''ज़रूर हटनी चाहिए,'' वे बोले। ''तो हटाने की कार्रवाही शुरू करो।'' मेरे पद छोड़ने से पहले इसको हटाने की कार्यवाही शुरू हो चुकी थी।

इस प्रयोग के प्रभाव

कुछ दिनों पहले मैंने देखा कि इसके हटने के बाद अस्पताल के पोर्च और इसके बग़ल में लगे फ़व्वारे की सुंदरता में निखार आ गया है।

15. रोगी इलाज एवं परामर्श : कंप्यूटर टैक्नॉलोजी से बढी कार्यक्षमता

जब रोगी एक विभाग में भर्ती रहता तो उसका इलाज सुगमता से चलता रहता था। ज्यों ही उसकी बीमारी में दूसरे विभाग के परामर्श की ज़रूरत होती तो बहुत ज़्यादा समय लगता था। कई बार तो 3–4 दिन लग जाते थे। रेफ़रेंस नोट बनाना, दूसरे विभाग में नोट करवाना, दूसरे विभाग के सीनियर डॉक्टर तक जानकारी पहुँचाना, रोगी को देखा जाना जैसे चरणों में कम–से–कम एक से दो दिनों का समय लगना तो मामूली बात थी। ऐसे में गंभीर रोगी की जान पर बन आती थी। इस समस्या पर कई बार चर्चा हुई लेकिन कोई समाधान नहीं निकला। कॉलेज काउंसिल की मीटिंग में कई सीनियर डॉक्टरों ने इस पर गंभीर टिप्पणी भी की थी।

काफ़ी विचार विमर्श के बाद तय किया गया कि रेफ़रेंस की सूचना भेजने की व्यवस्था को ऑनलाइन कर दिया जाए। पहली आवश्यकता थी, वार्डों के कंप्यूटर्स को सही हालत में लाना। ख़र्चा था, क़रीब 5 लाख रुपए।

मेरे अच्छे दोस्त डॉ. बीरबल दाना जो दुबई में रहते हैं, उन्होंने इसके लिए 5 लाख रुपए धनराशि देने की तुरंत सहमति दे दी। कंप्यूटर्स ठीक हो गए। सभी चिकित्सकों के डाटा, कम्प्यूटर्स में डालने के बाद इसको मैसेज से जोड़ने की समस्या आई। इसमें आई.टी. विभाग के श्री तपनजी ने मदद की और पूरा सिस्टम ऑनलाइन किया गया। लेकिन आदत मुश्किल से जाती है। विभिन्न विभागों के रेज़िडेंट डॉक्टर्स रेफ़रेंस ऑनलाइन नहीं भेजते थे। इस कार्य की मॉनिटरिंग एवं वार्डों के डॉक्टर्स को प्रेरित करने के लिए रेज़िडेंट डॉक्टर्स एसोसिएशन के सचिव डॉ. सुरेन्द्र भाखल एवं एक

वरिष्ठ चिकित्सक डॉ. दिलीप वाधवानी को लगाया गया। वे रोज़ाना मॉनिटरिंग की रिपोर्ट मुझे भेजते थे। रेज़िडेंट एवं सीनियर चिकित्सकों की विभागवार मीटिंग में भी इस मुद्दे पर हमेशा चर्चा की गई। शुरू में कंप्यूटर पर रेफ़रेंस 20 से 40 होते थे। लेकिन 2–3 महीनों के सघन प्रयास से क़रीब 150 रेफ़रेंस रोज़ाना होने लगे। अस्पताल के कंप्यूटर विभाग के श्री अशोक कुमावत और श्री विजय व्यास ने जी–तोड़ प्रयास कर इस व्यवस्था को सुचारू बना दिया।

इसी प्रकार एक समस्या थी, दूसरी बार अस्पताल आने वाले रोगियों के पहले इलाज की जानकारी के बारे में। कुछ रोगी, इलाज की पुरानी पर्ची लेकर आते थे लेकिन बहुत–से मरीज़ भूल भी जाते थे। अकसर चिकित्सक के सामने यही समस्या रहती थी कि पिछली बार कौन–सी दवा मरीज़ को दी थी। पहले चिकित्सक एक ही पर्चे पर कई बार दवा का नाम न लिख नंबर लिखकर आगे के लिए दवा लिख देते थे। लेकिन निःशुल्क दवा प्रणाली आने के बाद चिकित्सकों को हर बार दवा के नाम लिखने पड़ते हैं। इसमें काफ़ी समय लग जाता था और आउटडोर में बढ़ती भीड़ के साथ कार्य करना बहुत कठिन हो गया।

इसी से संबंधित दूसरी बड़ी समस्या थी ग़लत दवा देने की। हम चिकित्सकों की हस्तलिपि कई बार साफ़ नहीं होती है तो कई बार फ़ार्मासिस्ट ध्यान से नहीं देखता था। इससे रोगी को ग़लत दवा दिए जाने की आशंका बनी रहती थी।

इसके लिए व्यवस्था की गई कि रजिस्ट्रेशन के समय रोगी को जो पर्चा दिया जाता है उसके ऊपरी भाग में पिछली बार दी गईं दवाइयाँ टाइप होती हैं। दवा वितरण केंद्र के कंप्यूटर के डाटा को रजिस्ट्रेशन से जोड़ने से यह संभव हो पाया। पर्ची भूलने, ग़लत दवा देने की आशंका जैसी समस्याओं का समाधान हो गया।

ब्लड बैंक में बहुत भीड़ होती थी। रक्त की ज़रूरत अकसर गंभीर स्थिति में ही होती है इसलिए रक्त लेने आने वाले परिजन अधिक व्यग्र होते थे। बार–बार ब्लड बैंक कर्मचारियों से पूछते थे कि उनके रोगी का रक्त तैयार हुआ या नहीं। इससे कई बार अव्यवस्था फैल जाती थी। इसके लिए व्यवस्था की गई कि जिस भी रोगी का रक्त तैयार हो जाता था उसके परिजन के पास मोबाइल फ़ोन पर ब्लड बैंक कंप्यूटर से एस.एम.एस. सूचना शुरू की गई। इससे काफ़ी मदद मिली।

इस प्रयोग के प्रभाव

अस्पताल की बहुत सी समस्याओं का समाधान है कंप्यूटर प्रणाली का सही प्रयोग। कंप्यूटर से ऑनलाइन रेफ़रेंस भेजने से रोगियों को दूसरे विभागों के चिकित्सकों द्वारा देखने के समय में लगभग 50 प्रतिशत की कमी आई। उपलब्ध चिकित्सकों की संख्या में बिना वृद्धि किये यह उपलब्धि एक बड़ी बात थी। ओ.पी.डी. के पर्चे पर पिछली बार दी गई दवाइयों का विवरण आने से इलाज करने वाले चिकित्सकों को सुविधा हुई एवं रक्त तैयार होने की सूचना मिलने से रोगी के परिजनों को सुविधा हो गई। इस

प्रकार कंप्यूटर प्रणाली के उपयोग के लिए एस.एम.एस. अस्पताल को देश का सर्वोच्च पुरस्कार भी मिला।

16. तंबाकू पीक से रंगी दीवारें

अकसर लोग अस्पताल में थूक देते थे। इससे दीवारें, विशेष तौर से सीढ़ियों की दीवारें, गंदी हो जाती थीं। क्या हो इसका उपाय, समझ में नहीं आया। तभी ध्यान में लाया गया कि अस्पताल में तंबाकू सेवन पर 50 रुपए के दंड का कानून बना हुआ था। तंबाकू के साथ थूकने एवं अहाते में पेशाब करने जैसे कार्यों पर भी 50 रुपए दंड का कानून मेडिकल रिलीफ़ सोसायटी की स्वीकृति लेकर अस्पताल में लागू किया गया।

इसके लागू करने के बाद लगभग 100 लोगों का प्रतिदिन चालान होने लगा। नतीजा, अस्पताल काफ़ी साफ़ दिखाई देने लगा। बीड़ी पीते, तंबाकू थूकते लोग भी कम हो गए। मेडिकल रिलीफ़ सोसायटी की मीटिंग में कुछ लोगों ने इस दंड को 200 रुपए करने की बात कही। लेकिन मैंने कहा, ''इससे गार्ड के स्तर पर भ्रष्टाचार बढ़ेगा। उद्देश्य धन इकट्ठा करना नहीं, ज़्यादा से ज़्यादा लोगों में इसका प्रचार करना था, जिससे अस्पताल साफ़ रहे।'' इस कार्य में सिक्यॉरिटी के प्रभारी डॉ. राशिम कटारिया ने नियमित निरीक्षण कर गार्ड्स को प्रेरित किया। थूकने और तंबाकू सेवन पर लगने वाले दंड के 50 रुपयों में से 10 रुपए गार्ड को दिए जाते थे।

इस प्रयोग के प्रभाव

सफ़ाई व्यवस्था के लिए न केवल जागरूकता की, बल्कि आर्थिक दंड जैसे अंकुश की भी आवश्यकता है। इस व्यवस्था के बाद तंबाकू की पीक से बदरंग होती अस्पताल की दीवारों की सफ़ाई में अंतर आया। बीड़ी और तंबाकू लेते लोगों की गार्ड समझाइश भी करते थे और उन्हें जलते हुए फेफड़े एवं जर्दे से हुए मुँह के कैंसर के रोगी की एक तस्वीर भी भेंट करते थे। इस प्रकार के आर्थिक दंड एवं समझाइश के बाद अधिकांश लोग तंबाकू छोड़ने का वादा करते थे।

17. अस्पताल में रात्रि सेवा की मॉनिटरिंग

एक बार डॉ. आर.सी. यादव ने रात को अस्पताल का दौरा किया तो पता लगा कि काफी अव्यवस्थाएँ थीं। नर्सिंग स्टाफ़ वॉर्ड में लाइट बंद कर सो जाते थे। तकलीफ़ होने पर परिजन, कंपाउंडर और चिकित्सकों को ढूँढते ही रहते थे। सफ़ाईकर्मी भी वार्ड से ग़ायब हो जाते थे। अस्पतालकर्मी बिना यूनिफ़ॉर्म पहने आते थे। समस्या के समाधान हेतु सात प्रशासनिक अधिकारियों को सप्ताह में एक ड्यूटी रात के समय राउंड लेने की दी गई। जो भी अस्पतालकर्मी ग़लत पाया जाता, सुबह मेरे सामने उपस्थित होता एवं ग़लती का प्रायश्चित्त करता।

इस प्रयोग के प्रभाव

प्रशासनिक अधिकारियों के रात्रिकाल में राउंड से व्यवस्था में सुधार आया।

रात्रि दौरा महत्वपूर्ण है लेकिन इसके महत्व को बनाए रखने के लिए आवश्यकता

है, ग़लती करते अस्पतालकर्मियों को ग़लती सुधारने हेतु प्रेरित करने की।

18. यदि अनुशासन चाहिए तो शुरूआत स्वयं से करें

i) यूनीफ़ॉर्म

जिस दिन मैंने अधीक्षक का कार्यभार संभाला, उसी दिन से निश्चय किया कि यूनीफ़ॉर्म को ज़रूरी बनाया जाएगा। इसके लिए मैंने स्वयं एप्रन पहनना शुरू किया। विभिन्न श्रेणी के कर्मचारियों की सामूहिक बैठकें आयोजित कर उन्हें समझाया जाता था, सुझाव माँगे जाते थे। सभी कर्मचारी यूनीफ़ॉर्म में हों, यह प्रस्ताव भी उन्हीं से लेकर क्रियान्वित किया गया। इसका असर यह पड़ा कि पहले जहाँ 10–20 प्रतिशत अस्पतालकर्मी यूनीफ़ॉर्म पहनते थे, अब 50 प्रतिशत चिकित्सक एवं 90 प्रतिशत कर्मचारी यूनीफ़ॉर्म में आने लगे।

ii) सुधरा पोर्च

पोर्च अस्पताल का चेहरा होता है। यहाँ पर कार और स्कूटर खड़े रहते थे। इसको सुधारने के लिए हमने पोर्च में वाहनों के प्रवेश को रोकने के वास्ते एक सांकल का बैरियर लगा दिया। कुछ विरोध के बाद अस्पतालकर्मियों ने इसे स्वीकार कर लिया। इसके नियम की पालना मैंने स्वयं से ही शुरू की। मैं अपनी कार पोर्च में लाने की बजाय बैरियर पर छोड़ देता था और वहाँ से पैदल आता था। कार बेसमेंट पार्किंग में खड़ी करता था। इसका असर हुआ कि 90 प्रतिशत लोग बेसमेंट पार्किंग इस्तेमाल करने लग गए। पहले गाड़ियाँ बाहर खड़ी होती थीं, जबकि पार्किंग खाली पड़ी रहती थी। पोर्च में सुंदर पेड़–पौधों को लगवाने का काम डॉ. सुनित राणावत को सौंपा, जिनकी इस कार्य में रुचि थी।

इस प्रयोग के प्रभाव

अपने अधीनस्थ कर्मियों में कोई अनुशासन लाने में स्वयं को उदाहरण बनाकर प्रस्तुत करना सबसे असरदार तरीक़ा सिद्ध हुआ। **उदाहरण के रूप में प्रस्तुत एक कार्य सौ बार समझाने और डाँटने से ज़्यादा असरदार होता है।**

19. अच्छे काम के लिए शाबाशी

एक रेज़िडेन्ट एक रोगी के परिजन को लेकर मेरे पास आया और कहा ''सर, यह मेरे वॉर्ड के रोगी का परिजन है। इसका सीटी स्कैन निःशुल्क करवाना है। रोगी ग़रीब है, लेकिन बी.पी.एल. नहीं है।'' मैंने परिजन को देखा। दुबला–पतला, दाढ़ी बढ़ी हुई, बिखरे बाल, पैंट पर पैबंद लगा। देखने से ही ग़रीब लग रहा था। मैंने रेज़िडेंट को अपने पास बुलाया, फिर कहा, ''मेरी तरफ़ पीठ करो।'' वह मेरी तरफ़ पीठ कर के खड़ा हो गया। मैंने पीठ थपथपाते हुए कहा, ''शाबाश। रोगी का इलाज कर तुम कर्तव्य पालन कर रहे हो लेकिन ऐसे ग़रीब रोगी की जाँच निःशुल्क करवाने की कोशिश करना पुण्य का काम है।'' यह कहते हुए मैंने निःशुल्क फ़ॉर्म पर हस्ताक्षर कर दिए। अस्पताल का कोई भी कर्मचारी अपने परिजन के लिए या कोई वी.आई.पी. अपने रिश्तेदार के लिए

निःशुल्क जाँच के लिए कहता तो अकसर मैं कुछ सवाल पूछता था या मना कर देता था। लेकिन अनजान ग़रीब रोगी के लिए कोई भी कर्मचारी आता था तो उसे शाबाशी अवश्य देता था।

इस प्रयोग के प्रभाव

यदि रोगी निर्धन है तो उसकी मदद होनी ही चाहिए, चाहे वह किसी निःशुल्क श्रेणी में है या नहीं। यह भावना हमारे भावी विशेषज्ञों एवं आज के रेज़िडेंट्स में लाने का यह एक सफल प्रयास था। निर्धन की मदद करने का अपना एक अलग आनंद है। शाबाशी देकर उस आनंद को कई गुणा बढ़ाने के साथ मदद करने वाले को संबल व प्रेरणा मिलती थी।

20. बड़ाई तुम रखो, बुराई हमें दो

अकसर अस्पताल का कोई कर्मचारी जब भी अच्छा काम करता, मैं उसका हौसला बढ़ाता था। जब भी कोई अच्छे काम करने में रिस्क की बात करता तो मैं हमेशा कहता था, यश मिले तो तुम्हारा और अहित हो तो मेरा। इससे अस्पतालकर्मी भयमुक्त होकर अच्छा काम करने लगे।

एक बार एक पूर्व मंत्री आई.सी.यू. में भर्ती हुए। मैंने रेज़िडेंट चिकित्सकों को पूरी मेहनत से कार्य करने को कहा। सुबह पाँच बजे एक रेज़िडेंट ने फ़ोन किया कि स्थिति बिगड़ने पर उन्हें वेन्टीलेटर पर लेना पड़ा। लेकिन अब उनके परिजन बिना सूचना के वेन्टीलेटर पर लेने के कारण काफ़ी नाराज़ हो रहे हैं। मुख्यमंत्री से शिकायत की बात उन्हें कह रहे हैं। 15 मिनट में मैं आई.सी.यू. पहुँच गया। रोगी को देखकर मैंने परिजनों को तसल्ली दी और फिर उस रेज़िडेंट को शाबाशी देकर कहा कि समय पर उसने वेन्टीलेटर लगाकर रोगी के प्राण बचा लिए। मुझ से परिजनों ने चर्चा की, ''क्या बिना स्वीकृति लिए वेन्टीलेटर लगाना चाहिये था?'' मैंने कहा, ''यदि इस रेज़िडेंट की जगह मैं होता तो मैं भी प्राण बचाने हेतु वही करता, जो इस रेज़िडेंट ने उस परिस्थिति में किया।''

इस प्रयोग के प्रभाव

आज हर व्यक्ति अपने को बचाकर काम करता है और ध्यान रखता है कि किसी काम का दोषी उसे न ठहराया जाए। इस प्रकार के वातावरण में जीवन और मृत्यु के बीच झूल रहे व्यक्ति के प्राण बचाने में चिकित्सक के सामर्थ्य का भरपूर उपयोग नहीं हो पाता है। ऐसी स्थिति में आवश्यकता होती है, जीवन बचाने के लिए युद्धरत चिकित्सकों को संबल देने की।

21. ख़त्म हुआ शिलान्यास का इंतज़ार

अकसर जब भी अस्पताल में कोई नई सुविधा शुरू होती थी तब किसी राजनेता को बुलाकर उसका उद्घाटन करवाया जाता था। इस कारण कई बार उस सुविधा के शुरू होने में समय लग जाता था जबकि लोगों को उसकी आवश्यकता तुरंत होती थी।

मैंने अपने स्तर की नई सुविधाओं की शुरूआत अपने तरीके से की। मेरे कार्यकाल में सिर्फ़ निःशुल्क जाँच योजना, जो कि राज्य की योजना थी, को प्रारंभ करने एवं रक्त दानदाताओं के सम्मान समारोह में मंत्रीजी आई। अन्य सुविधाओं की शुरूआत निम्नांकित तरीक़ों से हुई :

a. एनक्रायरी की लिफ़्ट का उद्घाटन

उस स्थान पर उपस्थित सबसे बुज़ुर्ग व्यक्ति से बटन दबवाकर एवं फ़ीता कटवाकर उद्घाटन करवाया गया।

b. चाय–सूप के कियॉस्क्स का उद्घाटन

एक कियॉस्क का उद्घाटन वहाँ खड़े विकलांग व्यक्ति से एवं दूसरे का हरिजन कर्मचारी से फ़ीता कटवाकर करवाया गया। उद्घाटनकर्ता को पहली चाय पिलाई गई।

c. अक्षयपात्र कैन्टीन

वहाँ उपस्थित एक बुज़ुर्ग रोगी ने कैंटीन का उद्घाटन किया। उद्घाटन के समय उसके नाश्ते के पैसे जब मैं जेब से देने लगा तो उस बुज़ुर्ग रोगी ने अपनी जेब से 100 रुपए निकालकर भुगतान किया।

d. शुद्ध पानी के आर.ओ. का उद्घाटन

आर.ओ. के निर्माण में वहाँ कार्यरत एक बुज़ुर्ग मज़दूर से उद्घाटन करवाया। समारोह में दानदाताओं का सम्मान भी किया गया।

इस प्रयोग के प्रभाव

महत्वपूर्ण या बड़े व्यक्ति से उद्घाटन करने में न केवल समय की हानि होती है बल्कि कई बार असमंजस की स्थिति भी पैदा हो जाती है।

22. उद्घाटन पट्टिका

आम कर्मचारी बड़े ही डर के माहौल में काम करते हैं। उदाहरण के लिए एक प्रसंग है। अस्पताल में नशामुक्ति वॉर्ड दूसरी जगह स्थानांतरित हो गया था। पुराने वॉर्ड की मरम्मत कर वहाँ इमरजेंसी मेडिसिन का वॉर्ड बना दिया गया। लेकिन नर्सिंग स्टाफ़ की कमी की वजह से वह शुरू नहीं हो पाया। विधानसभा चुनावों से कुछ दिन पहले एक बार जब मैंने उस वॉर्ड का दौरा किया तो पाया कि वहाँ उद्घाटन पट्टिका पुराने नशामुक्ति वॉर्ड की लगी हुई थी। मैंने नोडल ऑफ़िसर और इंजीनियर को उसे हटाने के लिए कहा तो वे ठिठक गए। थोड़ी देर बाद बोले, ''सर, यह तो वसुंधराजी की है और जब फिर वे मुख्यमंत्री बनेंगी, तो अपनी आफ़त निश्चित है।'' मैंने कहा, ''जब नशामुक्ति वॉर्ड वहाँ से स्थानांतरित हो चुका है तो लगी हुई पट्टिका ज़्यादा बुरी लगेगी। इसे आप हटा दीजिये।'' मैंने कहा, ''इसका रिस्क मेरा, अच्छे वॉर्ड बनाने की ख्याति आपकी।'' अंत में वह पट्टिका वहाँ से हटा ली गई।

23. मेडिकल कॉलेज में रिसर्च का स्तर

मेडिकल कॉलेज के शैक्षणिक स्तर का महत्वपूर्ण आयाम है वहाँ होने वाली

रिसर्च। बार–बार विचार आता था कि मेरा मेडिकल कॉलेज रिसर्च में देश का अग्रणी कॉलेज बने। 2006 में जब डॉ. अशोक पानगड़िया प्राचार्य बने तो उनके साथ इस बारे में चर्चा की। उन्होंने कहा, ''उपाय बताओ।'' मैंने रिसर्च रिव्यू बोर्ड का एक विचार दिया। उन्होंने इसको क्रियान्वित करने का दायित्व मुझे दिया। यह एक बड़ी चुनौती थी।

2006 तक स्नातकोत्तर डिग्री लेने वाले छात्रों की संख्या 100 से ऊपर थी। डिग्री के समय सभी छात्र रिसर्च कार्य थीसिस के दौरान करते थे। लेकिन 1 प्रतिशत से भी कम कार्य राष्ट्रीय स्तर पर प्रकाशित होता था। छात्र यह कार्य अपने गाइड्स के मार्गदर्शन में करते थे। लेकिन अक्सर गाइड्स रिसर्च की नवीनतम कार्य पद्धति से अनभिज्ञ रहते थे। ऐसी स्थिति में विचार आया कि सवाई मानसिंह मेडिकल कॉलेज रिसर्च बोर्ड का गठन किया जाये। रिसर्च में अग्रणी कार्यरत और सेवानिवृत्त चिकित्सक शिक्षकों को इसमें शामिल किया गया।

थीसिस के सभी प्रोटोकॉल इस बोर्ड के सामने प्रस्तुत किए गए। मुझे इसका सचिव बनाया गया। सबसे बड़ी चुनौती थी कि कैसे वरिष्ठ चिकित्सक, जो छात्रों के गाइड भी थे इसमें भाग लें। कुछ चिकित्सकों का अहंकार इसमें बाधा थी। बड़ी तरकीब से समझाइश कर इस समस्या का समाधान किया गया। यह कार्यक्रम बड़ा सफल रहा और इससे सवाई मानसिंह मेडिकल कॉलेज के छात्रों के अनुसंधान में गुणात्मक सुधार आया। डॉ. पी. सी. डांडिया का मार्गदर्शन महत्वपूर्ण रहा।

इस प्रयोग के प्रभाव

सही व्यूहरचना से यदि कॉलेज या अस्पताल हित में कोई कार्य किया जाए तो अपेक्षित सफलता मिलती है। इस प्रयास से सवाई मानसिंह अस्पताल मेडिकल कॉलेज के अनुसंधान की गुणवत्ता में सुधार आया।

24. छोटा–बड़ा नहीं, सभी काम बराबर

समाज में बढ़ रहे शराब के प्रचलन पर अंकुश लगाने के लिए श्री धर्मवीर कटेवा राजस्थान यूनिवर्सिटी के गेट पर 31 दिसंबर को शाम से रात तक निःशुल्क दूध का वितरण कर 'नव वर्ष की शुरूआत दारू से नहीं दूध से करें' कार्यक्रम आयोजित करते आए हैं। इस कार्यक्रम में लोग काफ़ी उत्साह से शामिल होते हैं।

मैं भी हर बार कुछ घंटे वहाँ रहकर दूध वितरण में सहयोग करता हूँ। दूध वितरण के लिये धर्मवीर कटेवाजी इंडियन अस्थमा केयर सोसायटी की ओर से एक टैंट लगवाते हैं। टैंट के बाहर लोगों को सिकोरे में दूध दिया जाता है।

दो व्यक्ति दूध पीकर यहाँ–वहाँ फेंके गए सिकोरे उठाने के लिए रहते हैं। एक बार वहाँ ज़मीन पर काफ़ी सिकोरे बिखरे पड़े थे और वे दोनों व्यक्ति दिखाई नहीं दे रहे थे। कुछ लोग खड़े एक–दूसरे की तरफ़ देख यही चर्चा कर रहे थे कि काम करने वाले लोग कामचोर हो गए हैं। तभी मैंने एक तरफ़ के सिकोरे उठाने शुरू किए। मेरे ऐसा करते ही बाक़ी लोग भी इस श्रमदान में जुट गए और सफ़ाई हो गई।

इस प्रयोग के प्रभाव

अकसर हम काम विभाजित कर लेते हैं। कुछ काम हम छोटे मानते हैं जैसे झाड़ू निकालना, शौचालयों की सफ़ाई करना आदि। मैंने यह जाना कि यदि हमें सफ़ाई रखनी है तो सबसे पहले छोटे और बड़े कामों के बीच की दीवार गिरानी होगी। मेहतर का काम गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में सीखा और वे इसमें इतने निपुण हो गए कि उनके मित्र उन्हें प्रेमवश 'भंगी शिरोमणि' कहा करते थे।

मेरा यह मानना है कि काम कोई छोटा या बड़ा नहीं होता, कोई इंसान भी छोटा या बड़ा नहीं होता। अपनी हैसियत को उस काम के बीच न लाएँ, जिसे अगले क्षण करना आवश्यक है।

25. काम टालने की लत कैसे छूटी

छुट्टी का दिन था और उस दिन मेरा आउटडोर का समय 9 बजे से 11 बजे तक था। आउटडोर में रोगियों को देख करीब 11 बजे जब मैं चैंबर से बाहर निकला तो देखा कि मेडिसिन ओ.पी.डी. के ई.सी.जी. केबिन से तेज़ आवाज़ आ रही थी। मैं वहाँ गया तो देखा, 8–10 लोगों की भीड़ लग रही थी और ई.सी.जी. टैक्नीशियन तेज़ आवाज़ में कह रहा था, ''मैं अकेला ही हूं। आज आप लोग बांगड़ स्थित ई.सी.जी. लैब में ई.सी.जी. करवाएँ।'' एक रोगी तर्क दे रहा था कि बांगड़ ईसीजी वालों ने भी उसका ई.सी.जी. नहीं किया और कहा, ओ.पी.डी. रोगियों का ई.सी.जी. वहीं होगा। तब मैंने टैक्नीशियन की ओर देखा। रुआंसा होता हुआ वह बोला, ''सर, दूसरा टैक्नीशियन नहीं आया, मैं अकेला ही हूँ। रोगियों के परिजन मुझसे झगड़ रहे हैं और गार्ड भी नहीं है।'' मुझे भी उसकी दशा पर दया आई। जिज्ञासावश मैंने उस दिन किए ई.सी.जी. का रजिस्टर माँगा। रजिस्टर देख मैं भौंचक्का रह गया। उस टैक्नीशियन ने दो घंटों में सिर्फ़ दो ई.सी.जी. किये थे।

सुबह से वह अपनी पूरी ताक़त रोगियों को टालने में लगा रहा था। कभी वह गुस्सा होता, तो कभी रुआंसा। कुछ रोगी अस्पताल को खड़े कोस रहे थे और कुछ वहाँ से दुःखी मन से जा रहे थे। मैंने उस टैक्नीशियन को झिड़का और कहा, ''जितना समय और ताक़त तुम रोगियों को टालने में लगा रहे हो उससे कम में तो ई.सी.जी. कर लोगे। उसके चेहरे पर ग्लानि का भाव झलक आया। माफ़ी माँगते हुए उसने कहा, ''भविष्य में ऐसी ग़लती नहीं करूँगा। ''

उसने बताया कि अन्य टैक्नीशियन यह बताते थे कि ज़्यादा से ज़्यादा रोगियों को टालना चाहिए अन्यथा भीड़ बहुत बढ़ जायेगी। मैंने पूछा, ''यहाँ से दूसरी जगह तबादला चाहिए या मन लगाकर यहीं काम करोगे?'' ''सर, यहीं मन लगाकर ई.सी.जी. करूँगा,'' वह बोला। कुछ दिनों के बाद एक बार मैं मेडिसिन ओ.पी.डी. गया। मैंने दूर से देखा कि वह टैक्नीशियन ई.सी.जी. कर रहा था। 11 बजे तक वह 26 ई.सी.जी. कर चुका था। उसके चेहरे पर ख़ुशी झलक रही थी। मैंने पूछा, ''कितनी बार झड़प होती है

आजकल?'' ''नहीं सर, पिछले 7 दिनों से तो नहीं हुई। बल्कि कई रोगी तो मुझे दिल से धन्यवाद देकर जाते हैं।'' मैंने पूछा, ''मन में ख़ुशी आज ज़्यादा मिली या उस दिन जब मैं पहले आया था? ''सर, उस दिन तो मेरी बहुत–से लोगों से झड़प हुई थी और पूरे दिन मन दु:खी रहा। आज तो काम में मज़ा आ रहा है। कल मैंने 40 ई.सी.जी. किए थे, सर।'' मैंने पीठ थपथपाते हुये उसे शाबाशी दी।

इस प्रयोग के प्रभाव

इस प्रयोग से टैक्नीशियन की कामचोरी की आदत खत्म हो गई। **अकसर कामचोरी करने से कुंठा ज़्यादा और ख़ुशी कम मिलती है। जबकि मन लगाकर काम करने से ख़ुशी मिलती है।** हालांकि ऐसा व्यक्ति, दोष आस–पास संपर्क में आने वाले लोगों को ही देता है। पूरे दिन में दो ई.सी.जी. करने पर उसे मिलीं लोगों की झिड़कियाँ और स्वयं का मानसिक असंतोष। संपर्क में आने वाले सभी रोगी उसे बुरे प्रतीत हो रहे थे। जबकि 26 ई.सी.जी. करने के बावजूद वह ख़ुश था और सभी लोग उसे अच्छे लग रहे थे। हमारे प्रति लोगों का व्यवहार हमारी मानसिकता पर निर्भर करता है।

■ ■ ■

15

राजनीति एवं देशभक्ति

अ. चुनाव क्यों लड़ा

जीवन में मैंने कभी नहीं सोचा था कि चुनाव लड़ूँगा। लेकिन मन देशभक्ति की भावना से सोचता था। लगता है कि देश की वर्तमान व्यवस्था ने हम सभी लोगों को कामचोर और भ्रष्ट बना दिया है। कई बार मन में विचार आता था कि क्या ऐसी ही स्वतंत्रता पाने के लिये गांधीजी और हमारे देश के शहीदों ने बलिदान दिया था? गांधीजी को ऐसी स्थिति की आशंका अवश्य थी। देश को ऐसी भ्रष्ट व्यवस्था से बचाने के लिए गांधीजी ने नेताओं में ईमानदारी, त्याग और नैतिक मूल्यों की आवश्यकता पर बल दिया था। लेकिन ऐसा हो न सका। नेता ईमानदार रह न सके और उन्होंने नौकरशाही के साथ मिलकर ऐसी व्यवस्था बनाई कि देश का कोई आदमी ईमानदार नहीं रह सके। नेता और नौकरशाही कहने को तो लोक सेवक कहलाते हैं, लेकिन वास्तव में वे जनता का शोषण करने वाले शासक बन गए।

जब भी अमेरिका, इंग्लैंड या सिंगापुर जाता था तो मन में एक ही कसक उठती थी कि काश, मेरा देश भी ऐसा होता। 'आम आदमी पार्टी' देश के लिए कटिबद्ध थी। इसके नेता श्री अरविंद केजरीवाल की ईमानदारी और देशभक्ति असंदिग्ध है। भूलवश वे ग़लती कर सकते हैं लेकिन उनका लक्ष्य देशहित है। मुझे ऐसा लगा कि देश बदलने में योगदान देने का यह एक मौक़ा है। इसलिए जब पार्टी के नेताओं ने मुझसे आग्रह किया तो मैंने स्वीकार कर लिया।

मुझे 'आम आदमी पार्टी' में देश की व्यवस्था बदलने वाली आशा की किरण दिखाई दी इसलिए अपने-आपको न्यौछावर करने की ठान ली। सभी परिवारजन मेरे इस निर्णय के विरुद्ध थे। फिर भी मुझे लगा, देशहित में यह कदम उठा लेना चाहिए। मैंने निर्णय ले लिया और स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति भी ले ली। दैनिक भास्कर के एडिटर जगदीश

शर्मा घर आए। उन्होंने समझाया, ''डॉ. साहब, आपकी हार न केवल निश्चित है, बल्कि जो समाज में रुतबा और इज़्ज़त है वह भी ख़ाक में मिल जाएगी।'' मैंने कहा, ''देश में व्यवस्था बदले, आम–आदमी इंग्लैंड, अमेरिका की तरह ख़ुशहाल बने, उसी दिशा में होगी मेरी यह एक छोटी–सी कुरबानी।''

ब. चुनाव के समय की कुछ घटनाएँ

1. चुनाव रैली

एक दिन चांदपोल बाज़ार से जब हमारी चुनाव रैली निकल रही थी तो भा.ज.पा. की रैली हमारी रैली के बीच में आ गई।

उनके कुछ कार्यकर्ताओं ने हमारे कार्यकर्ताओं को धक्का दिया। हमारे कार्यकर्ताओं ने काफ़ी देर संयम रखा। दोनों पक्षों की ओर से नारेबाज़ी हो रही थी और उत्तेजना बढ़ रही थी। पुलिस भी भारी संख्या में आ गई। तभी मेरी नज़र दूर गाड़ी में बैठे भा.ज.पा. के प्रत्याशी श्री रामचरण बोहरा पर पड़ी। मैं गाड़ी से उतरकर अकेला ही उनकी ओर गया। रास्ते में भा.ज.पा. कार्यकर्ताओं का अभिवादन कर, मैं बोहराजी के पास पहुँचा। विधायक श्री मोहन लाल गुप्ता और बोहराजी ने मेरा अभिवादन स्वीकार किया और अपनी रैली को वापस मोड़ लिया। प्रैस ने इस घटना का उल्लेख करते हुए लिखा कि डॉक्टर ने गाड़ी से उतरकर, अभिवादन कर, जनता का दिल जीत लिया। अब देखना यह है कि वे चुनाव जीतते हैं या नहीं।

इस प्रयोग के प्रभाव

अपने अहम को त्यागकर यदि हम समय पर उचित कदम निडरता से उठाएँ तो कई बार अप्रिय घटना से बचा जा सकता है।

2. अवसर बनाम सिद्धांत

सरकारी नौकरी से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिए आवेदन के कुछ दिनों के बाद भा.ज.पा. के बहुत ही प्रतिष्ठित व्यक्ति जो मुख्यमंत्री के काफ़ी नज़दीक थे, उनका फ़ोन आया। उन्होंने कहा कि ''आप भा.ज.पा. के टिकट पर झुंझुनू से चुनाव लड़ने का मन बनाएँ, ऐसा हमारी पार्टी चाहती है।'' एक क्षण सोचा। एक ओर थी, भा.ज.पा. से निश्चित जीत और दूसरी ओर थी निश्चित हार। लेकिन एक ओर था देश की व्यवस्था बदलने का लक्ष्य और दूसरी ओर थी अवसरवादिता। मैंने कुछ सोचा और कहा, ''नहीं, मैं भा.ज.पा. से चुनाव नहीं लड़ूँगा।'' उन्होंने कहा, ''सुबह तक सोच लेना और 'हाँ' हो तो बता देना।'' मैंने प्रस्ताव के लिए उन्हें धन्यवाद दिया और अपने निर्णय को अटल बताया।

3. चुनाव प्रचार और वोटों की ख़रीद–फ़रोख़्त

रामगंज बाज़ार के एक कार्यकर्ता मेरे पास एक व्यक्ति को लाए। उन्होंने परिचय करवाया कि उस इलाके में उनकी बड़ी पहुँच है और करीब 10000 वोट उनके इशारे से ही मिल सकते हैं। मैंने कहा, ''आप वोट दीजिए।'' वे बोले, ''इसके लिए

आपको मुझे पैसे देने पड़ेंगे।'' मैंने कहा, ''मैं इस तरीक़े से वोट लेना नहीं चाहूँगा।'' वे बोले, ''इसको अपनाए बिना जीत हासिल नहीं होगी।'' मैंने कहा, ''इस तरीके से पाई गई जीत के मुक़ाबिले 'सात्विक तरीके अपनाते हुए मिली हार' से मुझे ज़्यादा खुशी मिलेगी।''

4. किराए के कार्यकर्ता

चुनाव में कई नए अनुभव मिले। हर जगह लोग कहते थे, ''आपके पास कार्यकर्ता कम हैं, आप कहें तो हम उपलब्ध करवा देंगे।'' एक बार मैंने कहा, ''ठीक है, करवा दो।'' जवाब मिला, ''500 रुपए प्रति कार्यकर्ता देना होगा। हम हर बार सभी को उपलब्ध करवाते आए हैं।'' मैंने कहा, ''यदि वे लोग मन से हमारे साथ नहीं जुड़े हैं, तो हमारा प्रचार कैसे करेंगे?'' उन्होंने सफ़ाई दी, ''वे काफ़ी अनुभवी हैं, पहले कई पार्टियों का काम कर चुके हैं, आपका प्रचार भी शानदार तरीक़े से करेंगे।'' मैंने अपना रुख़ स्पष्ट किया कि हमें स्वयंसेवक चाहिएँ, जिनमें देश के लिए कुछ कर गुज़रने का जज़्बा हो, न कि किराए पर मिले कार्यकर्ता। **लक्ष्य पाना महत्वपूर्ण है लेकिन लक्ष्य पाने के लिए अपनाए जाने वाले मार्ग की शुद्धता भी ज़रूरी है।** यही तो कहा था गांधीजी ने भी।

5. प्रचार के दौरान तंबाकू और शराबमुक्त रहने की प्रतिज्ञा

मोहल्लों में प्रचार के समय बहुत–से स्थानों पर बच्चे आ जाते थे। अकसर मैं जेब में कुछ फ़ोटो रखता था। एक फ़ोटो में एक स्वस्थ फेफड़ा था और दूसरा धुएँ से काला हुआ फेफड़ा। गुलाबी स्वस्थ फेफड़ा दिखाते हुए मैं उनसे कहता था, ''अभी तुम्हारे फेफड़े ऐसे हैं लेकिन कुछ वर्ष बीड़ी–सिगरेट पीने के बाद जलकर ऐसे हो जाएँगे। तुम कैसे फेफड़े रखना चाहते हो?'' गुलाबी फेफड़े की ओर इशारा करते थे सभी बच्चे। ''यदि ऐसा फेफड़ा चाहते हो तो प्रतिज्ञा लो, कभी बीड़ी–सिगरेट का सेवन नहीं करोगे।'' सभी प्रतिज्ञा ले लेते थे।

फिर मैं मुँह के कैंसर के एक मरीज़ का चित्र दिखाते हुए पूछता, ''कैसे हुई इसके मुँह की यह हालत?'' अकसर बच्चे चुप रहते तो मैं कहता था, ''ज़र्दा खाने से। ज़र्दा बाज़ार में किन नामों से बिकता है?'' कुबेर, खैनी, नटराज आदि नाम बच्चे तुरंत बता देते थे। क्या तुम्हें भी मुँह का यह हाल करना है? ''कभी नहीं,'' बच्चे तुरंत बोलते थे और लेते थे जीवन में ज़र्दा नहीं लेने का संकल्प।

फिर मैं पूछता था, ''काम कितनी तरह के होते हैं?'' ''अच्छा और बुरा।'' ''बुरे काम कौन से होते हैं?'' ''चोरी, मारपीट, बलात्कार और हत्या,'' बच्चे बोलते। ''क्या तुम भी यह सब काम करोगे?'' ''कभी नहीं,'' तुरंत बोलते बच्चे। ''कौन शैतान तुम्हें सम्मोहित कर यह सभी काम इच्छा के विरुद्ध करवा सकता है? शराब वह शैतानी चीज़ है जो आपके निश्चय के विरुद्ध आपसे यह सारे काम करवा सकती है। शराब पीने के बाद आदमी सही और ग़लत का भेद भूल जाता है। ग़लत काम भी वह उतनी ही

सहजता से कर लेता है, जैसे सही काम करता है। क्या तुम शराब पीना शुरू करोगे?'' ''नहीं, कभी नहीं!'' बच्चे एक स्वर में बोलते। करीब 5 मिनट के वार्तालाप के बाद लगभग सभी बच्चे प्रतिज्ञा कर लेते थे कि वे सिगरेट, ज़र्दा और शराब का सेवन कभी नहीं करेंगे।

इन चीजों का सेवन नहीं करना आसान होता है लेकिन इन्हें छोड़ना कठिन होता है। कई बार मेरे चुनाव प्रचार में नशे पर इस प्रकार की चर्चा की वजह से देर भी हो जाती थी। लेकिन मेरा मानना था कि **बच्चों में यदि अच्छाई आती है तो वे देश के लिए अगले 50–60 साल सक्रिय रूप से उपयोगी होते हैं।** इसके अलावा उन पर बातों का प्रभाव भी ज़्यादा होता है। क्योंकि बच्चे गीली मिट्टी समान होते हैं, जिन्हें मनचाहे रूप में ढाला जा सकता है। मिट्टी सूखने अर्थात् वयस्क हो जाने पर उनके स्वरूप को बदलना अत्यंत कठिन हो जाता है।

6. हार के बाद

जहाँ भी मैं चुनाव प्रचार के लिए गया, सभी ने मुझे सराहा। मुझे जीत की तो नहीं लेकिन 2 लाख वोटों की उम्मीद थी। मिले सिर्फ़ 55,000 वोट। चुनाव में एक नया अनुभव हुआ। मित्रों में से सिर्फ़ डॉ. एल.सी. शर्मा ने खुलकर प्रचार किया। रिश्तेदारों, परिवारजनों और मेरे रोगियों के परिजनों ने जी–जान से मेहनत की। इसी कारण इतने वोट भी मिले। 'आप' पार्टी के राजस्थान के उम्मीदवारों में यह वोट अधिकतम रहे। कई स्वजनों के ताने मिले। धर्मपत्नी सरिता बहुत दुःखी हुई और कहा, ''आपको पहले ही कह दिया था। आपके मित्र अजयपालजी ने कितना ज़ोर दिया था, चुनाव नहीं लड़ने पर।'' मुझे उनकी बात बुरी नहीं लगी। मैंने कहा, ''चुनाव लड़ना देशहित का निर्णय था। जनता का निर्णय सहर्ष स्वीकार किया। संभवतः ईश्वर ने मेरे लिए कुछ अन्य नियति सोच रखी होगी। जहाँ तक मेरा प्रश्न है, देशहित में आगे भी जो कुछ संभव होगा, ज़रूर करूँगा।

■ ■ ■

16

इंसान या शैतान: सिक्के के दो पहलू

अभी कुछ समय पहले एक आलेख में ज़िक्र था कि अंग्रेज़ साम्राज्य का अंत करने वाले गांधी पर एक अंग्रेज़ सर रिचर्ड एटेनबरो ने फ़िल्म बनाई। **गांधी मार्ग का सार यही है कि शत्रु कोई नहीं है लेकिन हमें एक योद्धा की तरह सतत लड़ना है। अपने अंदर छिपे हुए शैतान यानी बुराई से लड़ना है। शैतान को परास्त कर इंसान को जगाना है।**

1. बुरी आदत में फँसा मेधावी छात्र

ऐनेस्थीश्या के सहायक आचार्य डॉ. पी. एस. लाम्बा एक दिन मेरे पास आए और बताया कि किसी ने उनके बैंक खाते के ए.टी.एम. से 22,000 रुपए निकाल लिए हैं। ए.टी.एम. के ऊपर लगे कैमरों की रिकॉर्डिंग जाँचने पर पता चला कि डॉ. बी.एस. गुप्ता की यूनिट में कार्यरत एक रेज़िडेंट डॉक्टर का यह कृत्य था। मैं भी उसी यूनिट में ऐसोसिएट प्रोफ़ेसर के पद पर कार्यरत था। उपस्थित दो–तीन जनों ने इस बात पर ग़ौर किया तो एक विचार आया कि उस रेज़िडेंट को पुलिस को सौंप देना चाहिए, ताकि वह उससे सब कुछ उगलवा सके। लेकिन मैंने इस समस्या को सुलझाने की ज़िम्मेदारी स्वयं पर ली।

डॉ. लाम्बा ने इसे स्वीकार कर लिया। मैंने उस रेज़िडेंट को बुलाकर पूछा तो वह एकदम से टूट गया। बोला, ''सर, पता नहीं क्या हुआ कि मेरा दिमाग़ ख़राब हो गया और मैंने सर के खाते से 22000 रुपए निकाल लिए।'' मैंने पूछा, ''क्या तुम्हें पुलिस में दे दें?'' उसने पैर पकड़कर पश्चात्ताप करते हुए वादा किया कि कभी भी वह जीवन में दोबारा ऐसा काम नहीं करेगा। अगले दिन उसने डॉ. लाम्बा को 22000 रुपए लौटा दिए। वह काफ़ी बदल गया और उसने मेहनत से काम किया। परिणामस्वरूप एम्स में कार्डियोलॉजी में उसका चयन हो गया। आज वह नई दिल्ली में एक प्रतिष्ठित

कार्डियोलॉजिस्ट है।

इस प्रयोग के प्रभाव

कई बार क्षणिक आवेग में आकर कुछ छात्र जीवन में भटक जाते हैं। उनको सावधानी से समझाकर बुराई से बचाया जा सकता है। अन्यथा इसी पथ पर आगे चलकर उनका जीवन नष्ट हो सकता है।

2. नेता से सेवा का पर्याय बना बलदेव

अन्य स्टाफ़कर्मियों की रिपोर्ट के आधार पर मेरे दिमाग़ में नर्सिंग कर्मचारी नेता श्री बलदेव की छवि अच्छी नहीं थी। अधीक्षक बनने के बाद एक बार मैं जब कुछ लोगों से ट्रॉली और व्हीलचेयर दान की बात कर रहा था, तब वहाँ खड़े बलदेव ने कहा कि वह भी कुछ व्हीलचेयर दान करवाएगा। दो–तीन दिनों बाद दस व्हीलचेयर उसने दान में दिलवा भी दीं। बलदेव के इस काम से मुझे उसमें छिपी हुई संवेदनशीलता दिखाई दी।

जब 'सेवा' की शुरूआत लावारिस रोगियों के लिए हुई, तब मैं संवेदनशील लोगों की तलाश कर रहा था। तभी बलदेव याद आए। मैंने सोचा, क्यों न एक प्रयोग किया जाये! डॉ. नरेन्द्र की मदद हेतु बलदेव को 'सेवा' का नोडल अधिकारी बनाया गया। शुरूआत में वह रुचि नहीं ले रहा था, लेकिन एक–दो बार समझाने के बाद सक्रिय हो गया। शुरू के कुछ लावारिस रोगी जब ठीक होकर अस्पताल से गए तो उसका उत्साह देखते ही बनता था। लावारिस रोगियों पर हुए ख़र्च के पैसे मैं डॉ. नरेन्द्र और श्री बलदेव को दे देता था। लेकिन मुझसे पैसा लेने में वे हमेशा आनाकानी करते थे। फिर जब काफ़ी समय उन्होंने पैसे नहीं माँगे तो मैंने कारण पूछा। उन्होंने बताया, ''सर, हमने 50 लोगों का एक समूह बना लिया है, जो हर महीने 200 रुपये देते हैं। इस प्रकार प्रतिमाह 10000 रुपए इकट्ठे हो जाते हैं और इन रोगियों का काम चल जाता है।'' मैं बलदेव का एक नया रूप देख रहा था।

वह मन लगाकर काम कर रहा था एवं इस काम में आने वाली हर रुकावट को अपने स्तर पर ही दूर कर लेता था। मेरी ख़ुशी का कोई ठिकाना व पारावार न रहा जब मेरे सेवानिवृत्त होने के बाद एक दिन श्री बलदेव घर आये और मुझे बताया कि इस सेवा के लिए उन्हें नर्सिंग में देश का सर्वोच्च पुरस्कार 'नाइटिंगेल अवॉर्ड' राष्ट्रपति द्वारा मिला है।

इस प्रयोग के प्रभाव

सोया हुआ मिशनरी तत्व सही मार्गदर्शन से जाग गया और बलदेव लावारिस रोगियों के लिए धरती का भगवान बन गया। हर इंसान में ज़रूरत इस बात की होती है कि सही समय पर उसकी इंसानियत को क्रियाशील बना दिया जाए, जिससे शैतान निष्क्रिय हो जाए।

3. तथाकथित 'निकम्मा' बना कर्मठ कर्मचारी

एलर्जी विभाग के श्री ओ.पी. यादव एक दिन श्री राजेन्द्र यादव को लेकर आए।

यह व्यक्ति मेडिकेयर रिलीफ़ सोसायटी में काम करता था। अब इसे ऐनेस्थीश्या विभाग में काम दिया गया था। ऐनेस्थीश्या विभाग के कई लोगों ने बताया था कि वह काम कम करता था और ग़ायब ज़्यादा रहता था। इस बारे में राजेन्द्र अपना स्पष्टीकरण देने लगा तो मैंने कहा, ''सब छोड़ो। अगले 3 महीनों में काम ऐसा करके दिखाओ कि ऐनेस्थीश्या के विभागाध्यक्ष यह कह उठें कि राजेन्द्र बहुत अच्छा बाबू है।''

कुछ समय बाद ऐनेस्थीश्या के विभागाध्यक्ष डॉ. एस.पी. शर्मा मुझे मिले। बातों ही बातों में वे बोले, ''हमारे यहाँ के बाबू राजेन्द्र में बहुत बदलाव आया है। अब वह एक अच्छा वर्कर है।''

इस प्रयोग के प्रभाव

एक बार निकम्मे का लेबल लगवा चुके व्यक्ति को हम अच्छा बनने का मौक़ा देते ही नहीं हैं। ज़रूरत इस बात की होती है कि कैसे उसके अंदर के इंसान को जगाया जाए और शैतान को सुलाया जाए। राजेन्द्र में यह प्रयोग सफल रहा।

■ ■ ■

17

परिवार और मित्रों की घटनाएँ

1. क्रोध नहीं करने की सीख

बचपन में मुझे बहुत ग़ुस्सा आता था। 1960–61 में एक बार मैं अपने ताऊजी के साथ खेल रहा था। मेरी उम्र 6–7 साल की थी। खेल–खेल में मैंने उनकी जेब में पड़ा सौ रुपए का नोट अपने हाथ में ले लिया। उन्होंने कहा, ''बेटा, सौ रुपए बहुत ज़्यादा होते हैं, संभालकर रखना।'' इस बात पर मुझे इतना क्रोध आया कि वह सौ रुपए का नोट फाड़कर उनको दे दिया।

1969 में मैंने ग्यारहवीं कक्षा में महाराजा कॉलेज की पी.यू.सी. कक्षा में दाख़िला ले लिया। वहाँ मेरी दोस्ती जवाहर टांक के साथ हुई। वह मेरे जीवन का सबसे ख़ास मित्र बना। मेडिकल में भी हमारा साथ दाख़िला हुआ। हम दोनों मेडिकल कॉलेज के हॉस्टल के कमरा नं. 100 में रहते थे। जवाहर की ख़ास बात थी कि उसे क्रोध बिलकुल नहीं आता था। उसके साथ रहते–रहते मेरा ग़ुस्सा भी कम हो गया। 1980 में एम.डी. करने तक हम साथ रहे। एम.डी. के बाद जवाहर को लीबिया में जॉब मिल गया। तब उसके पिताजी ने राजस्थान पत्रिका में सूचना शीर्षक से एक विज्ञापन छपवाया। उसमें लिखवाया कि सभी को सूचित किया जाता है कि डॉ. जवाहर टांक गोल्ड मैडलिस्ट, हवाई जहाज़ से लीबिया के लिए रवाना हो रहे हैं। हमारे अन्य मित्रों ने इस समाचार की चर्चा कर ख़ूब खिल्ली उड़ाई। तुम्हारा दोस्त हवाई जहाज़ से जा रहा है। अरे, हवाई जहाज़ नहीं तो क्या बैलगाड़ी से जाता! मैं और श्यामसुन्दर जब जवाहर को विदाई देने दिल्ली पहुँचे और इस ख़बर के बारे में बताया तो वह थोड़ा दुःखी अवश्य हुआ लेकिन उसे तनिक भी क्रोध नहीं आया। उसकी ग़ुस्सा नहीं करने की क्षमता पर मुझे आश्चर्य हुआ। इस घटना से मुझे हमेशा ग़ुस्सा नहीं करने की प्रेरणा मिलती रही है।

इसके अतिरिक्त गांधी कथा में नारायण भाई द्वारा सुनाई गई निम्न बात का भी

मेरे क्रोध को नियंत्रित करने में काफी प्रभाव पड़ा।

बचपन में गांधी जी ने अपने भाई के साथ मिलकर पिताजी के कुछ पैसे चुरा लिए। इन पैसों से दोनो ने बीड़ी खरीद कर धूम्रपान किया। लेकिन बालक गांधी को ग्लानि होने लगी, तो वे पिताजी के पास माफ़ी मांगने गए, लेकिन हिम्मत नहीं हुई। इस बात का सारा विवरण लिखकर बालक गांधी सुबह–सुबह पिताजी के पास गया। पिताजी चारपाई से उठे ही थे, उन्होंने बालक गांधी का पत्र लिया और पढ़ने लगे। पत्र में लिखी घटना पढ़कर एक दम चारपाई पर बैठ गये और आंखों से आंसू बहने लगे। थोड़ी देर बाद संयत होकर खड़े हुए और बालक गांधी को बिना कुछ कहे चले गये।

गांधी जी ने लिखा, इस घटना का उनके ऊपर बहुत प्रभाव पड़ा। एक पिता के लिए उसके बालक पुत्र द्वारा चोरी करना एवं बीड़ी पीने की घटना सदमा पहुंचाने और क्रोधित करने के लिए पर्याप्त थी। लेकिन इतनी बड़ी बात होने के बाद भी पिताजी न तो क्रोधित हुए और न ही उन्होंने बालक गांधी को सज़ा दी। गांधी जी के मन पर पिताजी की वेदना का गहरा प्रभाव पड़ा। क्रोध और सज़ा से कई गुना अधिक। यह गांधी जी के लिये पहला पाठ था कि अंहिसा हिंसा से कई गुना ज़्यादा ताक़तवर होती है।

2. मित्र की नाराज़गी कैसे करूँ दूर

बचपन के मेरे एक घनिष्ट मित्र के संबंध मेरे दूसरे मित्र डॉ. एल.सी. शर्मा से अच्छे नहीं थे। बीच–बीच में मुझे मध्यस्थ की भूमिका निभानी पड़ती थी। समस्या तब उत्पन्न हुई, जब दोनों एक–दूसरे के विरुद्ध मेडिकल काउंसिल ऑफ़ इंडिया के चुनाव में खड़े हो गए। मैंने सोचा था कि मैं तटस्थ रहूँगा लेकिन ऐसा हो नहीं पाया। इससे दूसरे मित्र नाराज़ हो गये और मुझसे बोलना बंद कर दिया। मुझे इससे बड़ी ठेस पहुँची। जब मैं अधीक्षक बना तो विशेष ध्यान रखता था। एक दिन सीधा उनके कक्ष में गया, उनके साथ कॉफ़ी पी और गिले शिकवे दूर हो गए। लेकिन मन में कसक रही कि 'काश कोई लौटा दे मेरे बीते हुए दिन'।

3. जो सोचते हैं वह बनते हैं

हम मेडिकल कॉलेज में चार दोस्त थे जो साथ–साथ रहते थे। मेडिकल की परीक्षाओं में नंबर भी ठीक–ठाक आ जाते थे। 1973 की बात है, एक बार हम गणेश चतुर्थी को मोतीडूंगरी मंदिर में गए और भगवान से कुछ माँगा। बाहर आकर कुछ देर के लिए रास्ते में बैठ गए। फिर आपस में बात होने लगी कि यदि मौक़ा मिले और गणेशजी पूछें कि जीवन में क्या बनना चाहते हो तो क्या माँगोगे? ''बहुत ही धनवान बनूँ,'' बीरबल बोला। ''अमेरिका चला जाऊँ,'' जवाहर ने कहा। ''अच्छा सर्जन बनूँ और सुंदर बीवी मिले भगवान,'' प्रकाश बोला। ''अच्छी रिसर्च कर सकूँ,'' मैं बोला।

अब 41 साल बाद देखते हैं तो पाते हैं कि डॉ. बीरबल दाना दुबई में व्यवसाय कर रहे हैं। दुबई के सबसे धनाढ्य भारतीयों में बीरबल का स्थान 41वाँ है।

डॉ. प्रकाश चंडीगढ़ में बहुत अच्छे यूरोलॉजिस्ट हैं और काफ़ी प्रसिद्ध सर्जन हैं। सुंदर पत्नी भी उन्हें मिल गई।

डॉ. जवाहर अमेरिका में पेट के रोगों के ख्यातिप्राप्त डॉक्टर हैं। मेरे अनुसंधान भी इतने सफल हुए कि 35 साल से कम उम्र में ही मुझे बी.सी. रॉय, एन.आर.डी.सी. जैसे उच्च राष्ट्रीय पुरस्कार मिल गए।

पहले इंसान सोचता है, फिर संकल्प लेता है और सोचे हुए को पाने के लिए प्रयत्न करता है। जब यह सोच लक्ष्य में बदल जाती है तो इंसान हर हालत में इसे हासिल कर लेता है।

4. कैसे भरे मन के घाव

मेडिकल कॉलेज के दिनों की बात है। 1974 में बॉबी फ़िल्म लगी। हम मित्रों ने 6 से 9 के शो में फ़िल्म देखी। मेडिकल छात्रों में उन दिनों सिनेमा कम और रुतबा दिखाने की ज़्यादा होड़ रहती थी। सिनेमा के दौरान हमारी कक्षा के छात्र सतेन्द्र सिंह से मेरी थोड़ी कहा–सुनी हो गई। रात 10 बजे जब वापस हॉस्टल आ रहे थे तो मेडिकल कॉलेज के सामने सतेन्द्र फिर मिल गया। हमारे बीच मार–पिटाई शुरू हो गई। सतेन्द्र के हाथ में पत्थर था जिससे मेरे सर में चोट आई। करीब 10–12 टांके लगे। इसके बाद हमारी सुलह तो हो गई लेकिन बातचीत कोई ख़ास नहीं होती थी।

1983 में मैं सवाई मानसिंह अस्पताल में सहायक आचार्य बन गया। एक दिन रात को 10 बजे सतेन्द्र का फ़ोन आया। उनकी पत्नी प्राइवेट अस्पताल में भर्ती थीं और उन्हें मेरे परामर्श की ज़रूरत थी। मैं तुरंत अपने स्कूटर से वहाँ पहुँचा। देखा, उनकी पत्नी को रक्तस्राव हो रहा था और उनका ख़ून बहुत बह गया था। मैंने वहाँ उपस्थित परिजनों को बताया कि रक्त की आवश्यकता है। परिजन एक दूसरे का मुँह देखने लग गए।

सतेन्द्र तब तक वहाँ नहीं पहुँचा था। मैंने परिजनों से कहा, ''चिंता न करें, रक्त का इंतज़ाम हो जायेगा।'' मैं ब्लड बैंक गया और रक्तदान कर दिया। इसके बाद सतेन्द्र मिला तो हमारी मित्रता परवान पर थी। समय पर रक्त मिलने से उनकी पत्नी बच गईं थीं।

इस प्रयोग के प्रभाव

ज़रूरत के समय मदद करने से दुश्मन भी दोस्त बन जाता है। समय पड़ने पर दुश्मनी और अहम भुलाकर इंसानियत का परिचय देना चाहिए। चिकित्सा एक ऐसा पेशा है जो नि:स्वार्थ सोचने और काम करने का मज़बूत आधार है।

5. आदर्शवाद से समझौता

शुरू से ही मैं आदर्शवादी था। मेरे मानसपटल पर शहीद करणीरामजी की थोड़ी–बहुत छाप थी। शोषित वर्ग के हितों की रक्षा करते हुए करणीरामजी गांधीवादी तरीक़े से सीने पर गोली खाकर उदयपुर वाटी में शहीद हुए थे। मेडिसिन में एम.डी. करने के बाद करीब डेढ़ साल मैं शास्त्री नगर डिस्पेंसरी में रहा। उसके बाद मई 1982 में जोधपुर में सहायक आचार्य के पद पर नियुक्ति हुई। उन दिनों ट्रेन में आरक्षण के लिए रिश्वत में

पैसे देने पड़ते थे। इससे मन बड़ा बेचैन रहता था। तब मुझे एक लड़का, जिसका नाम मैं भूल रहा हूँ, मेरे सीनियर डॉ. राधेश्याम गुप्ता के यहाँ मिला। उसका यू.पी.एस.सी. से इंकम टैक्स में सिलेक्शन हुआ था। चर्चा के दौरान उसने कहा कि जीवन में करने को तो बहुत है लेकिन यदि कुछ हासिल करना है तो एक लक्ष्य का निर्धारण कर उसमें जुट जाना चाहिए। बाकी बातों को हमें छोड़ देना चाहिए। उस रात मुझे बेचैनी रही।

मैंने निश्चय किया कि मैं जीवन में कभी रिश्वत नहीं लूँगा लेकिन कभी बहुत आवश्यक होगा तो रिश्वत देने में परहेज़ नहीं करूँगा, जिससे मेरा लक्ष्य रिसर्च छूट नहीं जाए। श्वास रोगों में रिसर्च मेरा लक्ष्य था और मैं इसमें भटकाव नहीं चाहता था।

उस दिन मैंने जीवन की नीति निर्धारित की। मुझे ख़ुशी है कि इस निश्चय के बाद 42 सालों में बहुत-से प्रलोभन के मौक़े आए, लेकिन मैंने किसी से रिश्वत नहीं ली हालांकि इस काल में 2-3 बार रिश्वत में पैसे ज़रूर देने पड़े।

6. पैतृक संपत्ति में हिस्सा नहीं

आम जीवन में बहुत-सी पारिवारिक कलह की बातें चर्चा में आती रहती हैं। इनका प्रमुख कारण होता है, पारिवारिक संपत्ति का विवाद। बात शायद 1992-93 की है। पापाजी ने इच्छा ज़ाहिर की कि वे संपत्ति का बँटवारा करना चाहते हैं। उन्होंने मुझे बताया कि हरमाड़ा के पास का फ़ार्म वे मेरे नाम करना चाहते हैं। मैंने कहा, ''पापाजी, आपने पढ़ा-लिखाकर एक अच्छा इंसान बना दिया। अब मुझे किसी भी संपत्ति की ज़रूरत नहीं है।'' मेरे पिताजी श्री रामेश्वर सिंहजी चौधरी एक आदर्श पिता हैं। हमारी छोटी-सी तकलीफ़ भी उनसे बर्दाश्त नहीं हो पाती है। मेरी मम्मी ही मेरी पहली शिक्षक हैं और नैतिकता की शिक्षा मुझे बचपन में उन्हीं से मिली थी। मम्मीजी बड़े स्नेह से मुझे पास बैठाकर रामायणजी को पढ़कर सुनाती थीं। पिताजी आई.ए.एस. अधिकारी थे।

रात को मैंने पापाजी से हुए वार्तालाप से अपनी पत्नी सरिता को अवगत कराया। मुझे अपार हर्ष हुआ, जब उसने भी यही कहा कि हमें पैतृक संपत्ति की आवश्यकता नहीं है। मेरी हमेशा इच्छा रहती है कि पापाजी ने जो संपत्ति जीवनकाल में अर्जित की उसे वे अपनी इच्छा से ख़र्च करें। मुझे गर्व है कि हमारे परिवार में हम 6 भाई-बहनों में संपत्ति के विषय में 'देने' की होड़ होती है, न कि 'लेने' की।

7. दो बेटियाँ

बड़ी बेटी शीतू के बाद जब मीशू का जन्म हुआ तो मम्मीजी बड़ी दुःखी हुईं। उनका मानना था कि वंश चलाने के लिए बेटा होना ज़रूरी है। मीशू के जन्म के सप्ताह भर बाद छोटी बहन गुड्डू (अनिता) की शादी थी। मम्मीजी दुःखी-दुःखी ही रहीं। इस विषय में मैंने और पत्नी सरिता ने पहले ही सोच रखा था कि बच्चे दो ही करेंगे, चाहे बेटे हों या बेटियाँ। हमारा विश्वास था कि बेटे और बेटी में, बेटी ज़्यादा अच्छी होती है। बेटी की शादी में अच्छे जवाँई को ढूँढने का हमारे पास विकल्प होता है। जबकि बेटा कैसा भी हो, हमें उससे निभाना ही पड़ता है। जवाँई ढूँढ़ने में हमारी क़ाबिलियत काम में आती

है, जिस संदर्भ में हमें अपने–आप पर विश्वास था। मम्मीजी कई सालों तक कहती रहीं लेकिन मैंने हमेशा यही कहा, ''मम्मीजी आपकी इस आज्ञा को छोड़ कोई भी आज्ञा दें, आपका हर आदेश शिरोधार्य।'' अब जब दोनों बेटियों की शादी हो गई तो लगता है कि हमारा निर्णय सही था।

इस प्रयोग के प्रभाव

जब भी कोई रोगी, पुत्र की चाहत बताता था तो मैं उसे नसीहत ज़रूर देता था। मैं पूछता था, क्यों चाहते हो पुत्र? बुढ़ापे में हमारा सहारा बनेगा, अकसर लोग बताते थे। तब मैं कहता ''तो फिर उसे ज़्यादा मत पढ़ाना। यदि पढ़–लिख गया तो दूसरे शहर या देश में चला जाएगा। बुढ़ापे में साथ नहीं दे पाएगा। गाँवों में माता–पिता की सेवा वे ही लोग कर पाते हैं जो ज़्यादा नहीं पढ़ पाए हैं। कुल का नाम तो चाहे बेटी हो या बेटा, सभी बराबर रूप से रोशन करते हैं।''

8. यंत्रों का आविष्कार एवं साथियों की प्रतिक्रियाएँ

शुरू से ही मेरी रुचि अनुसंधान में थी। जब मेरी पहली खोज अस्थमा के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल में प्रकाशित हुई तो मैं अनुसंधान की ओर ज़्यादा प्रेरित हुआ। मेरे मन में एक विचार कौंधा, अस्थमा को नापने के लिये यंत्र बनाने का। इंजीनियरिंग कॉलेज के मित्र श्री अजय पाल के सहयोग से विचार को क्रियान्वित कर पाया। 1986 में मुझे यंत्र का पेटेंट मिल गया। जब इस यंत्र का नाम रखने का समय आया तब दोस्तों ने कई नाम सुझाए जैसे वीरेन्द्र फ़्लो मीटर, चौधरी फ़्लो मीटर, मील फ़्लो मीटर आदि। मुझे लगा कि इस यंत्र को बनाने में मेरी तो सिर्फ़ कल्पना थी लेकिन अन्य सैकड़ों लोगों का योगदान था। इन सबका प्रतिनिधित्व करने वाला नाम मुझे 'पिंक सिटी' लगा। ये सभी लोग गुलाबी नगरी जयपुर यानी 'पिंक सिटी' के रहने वाले थे। तब मैंने अपने इन आविष्कारों का नाम 'पिंक सिटी फ़्लो मीटर' एवं 'पिंक सिटी लंग एक्सरसाईज़र' रखा।

उन दिनों मैं उस यंत्र का ट्यूबनुमा मॉडल लेकर इंजीनियरिंग कॉलेज जाता रहता था। उस दौरान मेरे साथी मुझ पर हँसते थे, ''देखो, वीरेन्द्र फूँकनी लिये जा रहा है'' आदि। जब यंत्र बन गया तो मेरे साथी कहने लगे, ''इस यंत्र का माप सही नहीं है।'' जब देश की शीर्ष संस्थाओं ने इसे अच्छा माना तो वे चुप हो गए। 1989 में जब इस यन्त्र के लिए मुझे नेशनल रिसर्च डिवेलपमेंट कार्पोरेशन का 50 हज़ार रुपयों का अवॉर्ड मिला तो सभी ने उसे स्वीकार किया। आविष्कार के क्षेत्र में उस समय देश का यह 'सर्वोच्च पुरस्कार' था।

इस प्रयोग के प्रभाव

गांधीजी कहते थे, ''जब भी आप कोई नया काम करते हैं तो चार चरणों से गुज़रते हो। पहले लोग हँसते हैं, फिर झगड़ते हैं, फिर चुप होते हैं, अंत में स्वीकार कर लेते हैं।'' किसी की परवाह किए बिना संकल्पपूर्ति के लिए किया गया परिश्रम कभी व्यर्थ नहीं जाता है। अंततः उसे दुनिया स्वीकार करती है।

9. किसी की भूल से मिला रुपया : मेरा नहीं

पता नहीं क्यों, बहुत बार ऐसा होता था कि ख़रीदारी के बाद ग़लती से दुकानदार या तो चीज़ के कम पैसे लगाता था या भुगतान करते समय ज़्यादा पैसे दे देता था। ऐसी घटनाएँ मेरे साथ कम से कम 15 बार अवश्य हुई होंगी। हर बार मैं उसके द्वारा दिए गए ज़्यादा पैसे लौटा देता था। सबसे ताज़ा घटना थी 'आप' की दिल्ली में मीटिंग की। मैं एक होटेल में रुका था। होटेल ख़ाली करते समय, उसने जो बिल दिया उसमें रात के भोजन के 495 रुपयों की राशि नहीं जोड़ी थी। रिसेप्शनकर्मी को मैंने बताया,''रात को मैंने होटल में ही भोजन किया था, उसकी राशि भी तो बिल में जोड़िए।'' रिसेप्शनकर्मी ने चैक किया तो उसे अपनी भूल का अहसास हुआ। मुझसे भुगतान लेते समय उसने तहेदिल से धन्यवाद दिया।

इस प्रयोग के प्रभाव

धन जीवन में आवश्यक है। इसे ज़रूरत के अनुसार ख़र्च करना चाहिए और मितव्ययता के साथ बचत भी करनी चाहिए। लेकिन ग़लती से मिले पैसे को अपना मानना न्यायोचित नहीं है।

■■■

18

निराशा में आशा

जीवन में किए गए कार्यों का जब अपेक्षित परिणाम मिलता है तो आगे कार्य करने में हमारा जोश बना रहता है। लेकिन अनेक बार ऐसा होता है जब कार्यों का अपेक्षित परिणाम नहीं मिलता। ऐसी स्थिति में काम के प्रति जोश बनाए रखने में कठिनाई आती है। हालांकि गांधीजी के जीवन में बहुत–से उतार–चढ़ाव आए लेकिन उन्होंने अपने सिद्धांतों से कभी समझौता नहीं किया।

1922 में असहयोग आंदोलन हुआ, आंदोलन के चरम पर जब चौरी चौरा की हिंसक घटना की सूचना मिली तो उन्होंने पूरा आंदोलन ही स्थगित कर दिया। उस समय स्वतंत्रता आंदोलन में लगे देशभक्तों को उनका यह निर्णय सही नहीं लगा। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने इसे हिमालय से भी बड़ी ग़लती बताया।

लेकिन आज प्रतीत होता है कि हिंसक तरीक़े से यदि स्वतंत्रता मिलती तो प्रजातंत्र दीर्घकाल तक क़ायम न रह पाता, जैसा कि पाकिस्तान में हुआ। हालांकि स्वतंत्रता आंदोलन स्थगन से उस समय देश में निराशा छा गई लेकिन इस निराशा की परिस्थिति में भी गांधीजी अपनी पूरी लगन और जोश से काम करते रहे और अंततः देश को आज़ादी अहिंसक तरीक़े से दिलवाई। निराशा के साथ शुरू हुई मेरे जीवन की कुछ सफल घटनाएँ।

1. हताश स्थिति में सफलता

मार्च 2005 में मैं प्रोफ़ेसर बन गया लेकिन मुझे यूनिट जुलाई में मिलनी थी। अचानक सरकार ने सेवानिवृत्ति आयु 58 वर्ष से बढ़ा कर 60 वर्ष कर दी। इससे मुझे यूनिट मिलने की संभावना भी दो वर्ष आगे बढ़ गई। कुछ दिन मेरे मन में निराशा रही। लेकिन अब इच्छा हुई कि इन दो वर्षों का लाभ उठाया जाए।

इसी जुनून में मैंने अस्थमा भवन की स्थापना की जो अस्थमा के रोगियों के

सुगम और सस्ते इलाज का केंद्र बना। आज मैं सोचता हूँ, यदि दो वर्ष नही मिलते तो ऐसी अमूल्य संस्था बनाना कठिन था। उन दो वर्षों में अस्थमा भवन की स्थापना के लिए समय मिल गया।

इस प्रयोग के प्रभाव

समस्या से निराश न होकर, उसका फ़ायदा उठाने का तरीक़ा है, कोई छूटा हुआ काम पूरे जोश से करना।

2. विपरीत स्थिति को अपने अनुकूल ढालना

जब मैं 5 साल का था तभी मुझे अस्थमा की तकलीफ़ होने लगी थी। थोड़ा–सा मौसम बदलते या ठंडी हवा में जाने से मुझे रात में साँस की तकलीफ़ होती थी। पिताजी ने मुझे बहुत–से चिकित्सकों को दिखाया। कोई कहता, ब्रोंकाइटिस है। कोई कहता, गले के टॉन्सिल का मर्ज़ है, तो कोई बताता, निमोनिया है। एक–दो चिकित्सकों ने अस्थमा बताया। 1963 में पिताजी का सीकर में कॉमर्शियल टैक्सेशन ऑफ़िसर के पद पर स्थानांतरण हो गया। सीकर में एक प्रसिद्ध वैद्य थे। बताया गया कि उन्होंने देश के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का अस्थमा ख़त्म कर दिया था। गर्मियों की छुट्टियों में पिताजी ने मुझे उन्हें दिखाया। उन दिनों मुझे अधिकांश रातें दमे के कारण जागकर ही निकालनी पड़ती थीं। अस्थमा की तकलीफ़ रात को ज़्यादा होती है। जब रात को तकलीफ़ होती थी तो सुबह पापाजी की डाँट खानी पड़ती थी–धूल में गया होगा, बिना स्वैटर बाहर गया होगा, बरसात में छींटे लगे होंगे आदि ऐसी बातें थीं कि इनसे मेरी तबीयत और बिगड़ जाती थी। कई बार बड़ी निराशा होती थी–क्या जीवन है मेरा? वैद्यजी ने कहा, ''अस्थमा बड़ा तेज़ है।'' उन्होंने दवा शुरू की और उसके साथ पथ्य। वैद्यजी के कहे अनुसार भोजन में मुझे सिर्फ़ मुनक्का और रूखी चपाती ही मिलती। क़रीब एक महीने बाद निर्णय लिया गया कि एक साल मुझे इलाज के लिए घर पर ही रहना चाहिए। मैं उस समय आठवीं कक्षा में था। नवीं में मैं गणित लेकर वैज्ञानिक बनना चाहता था। एक वर्ष के लिए स्कूल छोड़ना मुझे बड़ा निराशाजनक लग रहा था। कई महीनों मुनक्का और रूखी रोटी के साथ दवा लेने से मुझे थोड़ा लाभ मिला। लेकिन नवंबर में जब पहली बार नई रज़ाई इस्तेमाल की, तो अगले दिन मुझे फिर अस्थमा का तेज़ दौरा पड़ा। इससे मम्मी–पापाजी का विश्वास वैद्यजी से डगमगा गया। वैद्यजी ने दवा बदली और विश्वास दिलाया, ठीक होने का।

कभी ठीक तो कभी बीमार। इसी चक्रव्यूह में मेरा अगला वर्ष अटका रहा। आठवीं कक्षा के बाद नवीं में मेरे पिताजी के मित्र दामोदरजी शर्मा ने कहा, ''बाबू (मेरे घर का नाम) को बायॉलाजी दिलवा देते हैं। कम से कम ख़ुद का इलाज तो कर लेगा।'' मेरी इच्छा के विरुद्ध मुझे बायॉलाजी लेनी पड़ी। तब मैंने निश्चय किया कि जिस बीमारी 'अस्थमा' से मैं पीड़ित हूँ, इसी बीमारी में अनुसंधान को अपना लक्ष्य बनाऊँगा।

आज मैं पीछे मुड़कर देखता हूँ तो लगता है, अनुसंधान में मुझे जो सफलता

मिली, उसमें मेरे स्वयं के अस्थमा का बड़ा योगदान रहा। मेरी समझ अस्थमा के बारे में बहुत विकसित हुई। यदि मुझे अस्थमा नहीं होता तो शायद अस्थमा अनुसंधान में मुझे इतनी सफलता नहीं मिल पाती।

3. तंबाकू के विरुद्ध हमारा 'नमक आंदोलन'

अस्थमा के रोगियों की मदद एवं तंबाकू के विरुद्ध जनजागृति हेतु हमने 1985 में इंडियन अस्थमा केयर सोसायटी की स्थापना की। डॉ. यू.एस. माथुर इसके अध्यक्ष थे और मैं इसका सचिव था। 1994 में श्री धर्मवीर कटेवा इंडियन अस्थमा केयर सोसायटी के सचिव बने और मेरा काम रहा सलाहकार का। धर्मवीरजी ने तंबाकू के विरुद्ध एक सघन आंदोलन चलाया। लोगों को जागृत करने हेतु स्टिकर्स, पैम्फ़लेट्स, पुस्तकें एवं होर्डिंग्स तैयार किए गए। 1994 में राजस्थान हाइकोर्ट में तंबाकू के उपयोग के विरुद्ध रिट प्रस्तुत की गई लेकिन तंबाकू लॉबी के नामी–गिरामी वकीलों के सामने हमें मात खानी पड़ी।

तंबाकू कंपनी आई.टी.सी. के वकील का कथन था कि चबाने वाली तंबाकू स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं है। जज साहब ने डायरेक्टर जनरल हैल्थ, भारत सरकार को एक कमेटी बनाकर चबाने वाली तंबाकू के हानिकारक प्रभावों का अध्ययन कर उचित कार्यवाही करने के लिए कहा।

इस कमेटी ने रिपोर्ट में चबाने की तंबाकू को हानिकारक माना और देश में प्रतिबंध लगाने की सिफ़ारिश की। इसके बाद कई मंत्रालयों से होती हुई कमेटी की रिपोर्ट ग्रुप ऑफ़ मिनिस्टर्स के पास गई। उन लोगों ने इसे ख़ारिज करते हुए कह दिया कि तंबाकू पर प्रतिबंध लगाना संभव नहीं है। 6–7 साल की कड़ी मेहनत तंबाकू लॉबी के सामने विफल हो गई।

तब गांधीजी का तरीक़ा 'नमक आंदोलन' याद आया। नमक बनाने से आज़ादी की लड़ाई का क्या संबंध था? कई बार सीधी लड़ाई के बजाय अप्रत्यक्ष तरीक़े से लक्ष्य हासिल किया जा सकता है। हमने एडवोकेट श्री गिरधारी बाफना के सहयोग से तंबाकू के प्लास्टिक पाउचों पर प्रतिबध लगाने के लिए राजस्थान हाइकोर्ट में एक और रिट पिटीशन लगाई। इस ओर तंबाकू कंपनियों का ध्यान नहीं गया। केस में तंबाकू वाले प्लास्टिक पाउचों पर प्रतिबंध लग गया।

तब तंबाकू कंपनियां जागीं और उन्होंने सुप्रीम कोर्ट से स्टे ले लिया। सुप्रीम कोर्ट ने केस की सुनवाई में गुटके के हानिकारक प्रभावों पर रिपोर्ट माँगी। तब हमारे वकीलों ने पुराने केस के बाद डायरेक्टर जनरल हैल्थ, भारत सरकार की तैयार की गई रिपोर्ट प्रस्तुत की। सुप्रीम कोर्ट ने गुटके पर प्रतिबंध लगाने के आदेश दिए। इसी के अनुसार गुटके के प्लास्टिक पाउचों पर भारत में प्रतिबंध लगा।

इस प्रयोग के प्रभाव

'नमक आंदोलन' जैसे आज़ादी का सूत्र बना, प्लास्टिक पाउचों पर प्रतिबंध

का केस गुटके पर प्रतिबंध का सूत्र बना। इस अभियान को जब 1986 में शुरू किया गया तो लोग हम पर हँसते थे। कोर्ट में जब केस किया, तब तंबाकू कम्पनियों का दबाव और कई प्रलोभन भी आए। लेकिन दृढ़ संकल्प से हमें लक्ष्य हासिल हुआ। हालांकि इस प्रकार के दबावों से कभी–कभी भय भी लगता था लेकिन मन में दृढ़ विश्वास था कि आगे जीत है।

■ ■ ■

19

अस्थमा भवन में गांधी मार्ग

चुनाव में हार और सेवानिवृत्ति के पश्चात् जब मैंने अस्थमा भवन में कार्य शुरू किया तो सभी कर्मचारियों को इकट्ठा किया और गांधी मार्ग के बारे में चर्चा की। इस चर्चा के बाद सभी में सहमति बनी कि ग़लती प्रबंधन के गांधी मार्ग को अपनाया जाए। इसके लिए सभी से कहा गया कि वे अपने प्रायश्चित्त के तरीक़े लिखें। इसमें दो प्रकार के कार्य लिए गए। कुछ वे कार्य जो बहुत अच्छे लगते हैं, वह कर्मचारी कुछ दिनों के लिये त्याग देता है, जैसे वॉट्सएप, फ़ेसबुक, फ़िल्में, पसंदीदा मिठाई आदि। कुछ काम करने के होते थे, जैसे अपने कमरे की सफ़ाई, व्यायाम करना, पंखे साफ़ करना, मशीन साफ़ करना आदि। इस योजना को अलग-अलग भागों में सुचारू रूप से चलाने की ज़िम्मेदारी वहाँ के लोगों को दी। रिसर्च में उदयवीर सिंह, लैब में श्री रवि शर्मा, वॉर्ड में श्री अकरम और अन्य के लिए श्री सन्दीप को नियुक्त किया।

चर्चा के उपरांत तीन वॉलंटियर्स को रिसर्च प्रोजेक्ट देने का निर्णय हुआ। श्री लोकनाथ, श्री सन्दीप और श्री रवि ने यह प्रोजेक्ट लिए। इनमें 50 रुपए स्वयं पर ख़र्च करने थे और 50 रुपए किसी की मदद में। कार्य अवधि भी दो दिनों की तय की गई।

दो दिनों के बाद तीनों ने अपने अनुभव बताये। श्री लोकनाथ ने बताया कि उन्हें डोसा अच्छा लगता है और वे एक रेस्टोरेंट में डोसा खाने गए। वहीं सड़क पर उन्हें एक फटेहाल व्यक्ति मिला। उससे पूछा कि क्या उसने खाना खाया? उसने इंकार किया। श्री लोकनाथ ने डोसा मँगाया। उसने भी डोसा खाने की इच्छा प्रकट की। दोनों ने डोसा खाया। श्री लोकनाथ ने बताया कि स्वादिष्ट डोसा खाते समय मुझे अच्छा लग रहा था लेकिन उस व्यक्ति को डोसा खिलाते समय जो आनंद आया, वह अद्वितीय था।

श्री सन्दीप ने बताया कि उन्हें रसगुल्ला बहुत अच्छा लगता है। उन्होंने 50 रुपयों के रसगुल्ले ख़रीदे और खाए। रास्ते में उन्हें एक विकलांग भिखारी मिला। उससे

खाने का पूछने पर वह कुछ नहीं बोला। तो सन्दीप उसे पास के रेस्टोरेंट में ले गए और भोजन करवाया। खाना खाते समय उस व्यक्ति की आँखों में आँसू आ गए। यह देख सन्दीप भी भावुक हो गया और वहाँ से वापस आ गया।

श्री रवि ने स्वयं पर ख़र्च करने के लिए मिले 50 रुपयों की चॉकलेट खरीदकर अपने बच्चे को दी। स्कूल जाते समय वह चॉकलेट का आग्रह कर रहा था। चॉकलेट लेने के बाद बच्चे ने थैंक्यू डैडी कहा तो रवि के चेहरे पर ख़ुशी भरी मुस्कुराहट आ गई। दूसरे दिन सुबह अपने घर के सामने कचरा बीनती लड़की को देख उन्होंने उसे चप्पल दिलाने की बात सोची। चप्पल पाकर लड़की इतनी ख़ुश हुई कि रवि को आनंद आ गया।

इस प्रयोग के प्रभाव

इन घटनाओं से सीख मिलती है कि इंसान की मूलभूत प्रवृत्ति ऐसी है कि उसे दूसरे की मदद करने से ज़्यादा ख़ुशी मिलती है। जिन लोगों को मदद करने का मौक़ा मिला है, जैसे सरकारी कार्यालयों में कार्यरत कर्मचारी, यदि वे सही काम में मदद करते हैं तो बहुत ख़ुशी बटोर सकते हैं। ख़ुशी मदद से मिलती है, लूट–खसोट से नहीं।

बहुत–से लोगों को मदद का अर्थ ही समझ में नहीं आता है। जब पूछते हैं कि क्या जीवन में किसी अनजान व्यक्ति की मदद की? तो अकसर जवाब आता है कि किसी का बुरा नहीं किया। मदद करना और बुरा नहीं करना, दो अलग–अलग बातें हैं। **किसी का बुरा नहीं करने से संतोष मिलता है, लेकिन किसी अनजान की मदद करने से मानसिक संतोष के साथ–साथ ख़ुशी भी मिलती है।**

■ ■ ■

20

गांधी मार्ग के अपवाद

मेरे संपर्क में आए अधिकांश लोगों पर गांधी मार्ग का असर पड़ा लेकिन कुछ इसके अपवाद भी रहे हैं। इस प्रकार की कुछ घटनाओं का ज़िक्र यहाँ उचित होगा।

1. लापरवाह नर्स

आई.सी.यू. के इंचार्ज कंपाउंडर रिटायर होने लगे तो तलाश शुरू हुई ऐसे वरिष्ठ कंपाउंडर की, जो मेडिकल आई.सी.यू. जैसी जगह को ज़िम्मेदारी से संभाल सके। दो वरिष्ठ नर्सेज़ महेन्द्र चतुर्वेदी और मैरी को आई.सी.यू. में पदस्थापित किया। लेकिन दोनों ने ड्यूटी जॉइन नहीं की। अतिरिक्त अधीक्षक डॉ. रणधीर ने बुलाकर उन्हें समझाया। लेकिन फिर भी उन्होंने ड्यूटी जॉइन नहीं की। तब लिखित में रिमाइंडर निकाला गया लेकिन उन्हें कोई फ़र्क़ नहीं पड़ा। एक दिन जब मैं धंवंतरि ओ.पी.डी. में जा रहा था तो नर्सिंग सुपरिंटेंडेंट ऑफ़िस में नर्स मैरी मिली। मैंने पूछा, ''सिस्टर, आप ड्यूटी कब जॉइन करेंगी?'' ''बहुत काम कर लिया 27 साल, अब ज़्यादा काम वाली जगह मैं काम नहीं करूँगी,'' सिस्टर ने कहा। मैंने कहा, ''कोई बात नहीं। आई.सी.यू. नहीं तो कोई और वॉर्ड बताओ जहाँ आपको इंचार्ज लगा सकूँ।'' ''नहीं, मुझे तो पहले वाली आराम की जगह, नर्सिंग सुपरिंटेंडेंट के ऑफ़िस में ही रहने दें।'' मैंने उन्हें कई प्रकार के उदाहरण देकर काम करने के महत्व को समझाने की कोशिश की लेकिन उन पर असर नहीं पड़ा। अतिरिक्त अधीक्षक डॉ. रणधीर राव एवं नर्सिंग सुपरिटेंडेंट श्री रामस्वरूप मीना ने भी मेरे प्रयास से पहले उनको समझाने की विफल कोशिश की। मैंने कहा, ''सिस्टर, प्रधानमंत्री जयपुर आ रहे हैं। आई.सी.यू. चुस्त–दुरुस्त होना चाहिए, आप तुरंत काम देखें।'' इस निर्देश के बाद भी दोनों ने आई.सी.यू. में ड्यूटी जॉइन नहीं की।

प्रधानमंत्री की यात्रा के बाद मैंने उन पर कार्यवाही करने का मानस बनाया। मुझे बताया गया, नर्सिंग एसोसिएशन के विरोध का सामना मुझे करना पड़ेगा। मुझे यह भी बताया

गया कि इससे पहले किसी भी अधीक्षक ने नर्सेज़ के विरुद्ध सीधी कार्यवाही करने की बजाय मंत्री या सचिव से कार्यवाही करवाई थी।

इसका एक कारण था कि यदि मंत्री, अधीक्षक के आदेश बदल दें तो बड़ी विषम परिस्थिति पैदा हो सकती है। दूसरा, कोई भी अधीक्षक अस्पताल के कर्मचारियों के विरुद्ध कार्यवाही कर बुरा नहीं बनना चाहता था। नतीजा निकला, इस प्रकार की निरंकुशता। मुझे लगा कि जब मेरा काम है और मैं इस काम को स्वयं नहीं कर मंत्री से करवाता हूँ तो यह कायरता है और नैतिकता से भी परे है। मैंने दोनों के रिलीविंग के आदेश निकाल दिए। हालांकि आत्मविश्वास थोड़ा डगमगा रहा था। उसी शाम मुख्यमंत्री निवास पर स्वाइन फ़्लू बीमारी से निपटने के बारे में एक मीटिंग थी। शाम को मुख्यमंत्री के साथ मीटिंग से पहले एक राज्यमंत्री ने उन दोनों नर्सेज़ की सिफ़ारिश मुझसे की। मैंने कहा, ''मैंने तो अनुशासनहीनता के कारण उन्हें रिलीव कर दिया है।'' उन्होंने अपना सिर पकड़ लिया। संभवतः उन पर काफ़ी दबाव था। मीटिंग के दौरान मैंने सी.एम. साहब और स्वास्थ्य मंत्री को उन नर्सिंग कर्मचारियों की अनुशासनहीनता वाली घटना से अवगत करवा दिया। स्वास्थ्य सचिव दीपक उप्रेती ने कहा, ''आपने बहुत अच्छा किया।'' निःशुल्क दवा योजना के जनक श्री समित शर्मा ने भी मेरा समर्थन किया। इस घटना के बाद नर्सिंग कर्मचारी काफ़ी अनुशासित हो गए एवं लगभग सभी यूनिफ़ॉर्म में भी आने लगे।

इस प्रयोग के प्रभाव

इस घटना से मैंने जाना कि **एक सीमा तक, गाँधी मार्ग पर चलकर कर्मचारियों को सुधारने की कोशिश करनी चाहिए। यदि कोई कर्मचारी जानबूझ कर अनुशासनहीनता करता है तो उसके विरुद्ध सीधी कार्यवाही करनी चाहिए।** यह घटना मुझे हमेशा गांधीमार्ग के अपवाद के रूप में कचोटती रही है।

2. दवा की दुकान के लपके

डॉ. अनिल दुबे एक दिन एक लड़के को लाए और बताया कि वह अस्पताल में एक मेडिकल स्टोर के काड्र्स बाँट रहा था। वह रोगियों को 15 प्रतिशत सस्ती दवाई देने का लालच दे रहा था। खोजबीन करने पर पता चला कि 15 प्रतिशत डिस्काउंट के बाद भी वह दवा दूसरे ब्रांड्स से कहीं ज़्यादा महँगी होती थी। उसको हर माह इस काम के 6000 रुपए मिलते थे। शिकायत करने वाला रोगी निर्धन था। मैंने उस लड़के से पूछा, ''तुम ज़्यादा ग़रीब हो या वह रोगी ज़्यादा ग़रीब है?'' ''यह ज़्यादा ग़रीब है,'' वह बोला। ''अपने से भी ज़्यादा ग़रीब व्यक्ति की जेब काटकर जो तुम कमाते हो, उससे पाप मिलता है या पुण्य?'' ''सर, मैं फिर नहीं करूँगा। ग़लती हो गई।'' ''ग़लती का प्रायश्चित्त करने के लिए क्या तुम रक्तदान कर सकते हो?'' उसने हामी भरते हुए डॉ. अजीत द्वारा सुझाए रोगी को रक्तदान दिया। इसके पश्चात् दुकान के मालिक आए और उन्होंने भी पश्चात्ताप करते हुए रक्तदान किया।

इस घटना के बाद भी उन दोनों में सुधार नहीं आया और तीन दिनों के बाद उस लड़के को नर्सिंग कर्मचारी नेता श्री प्यारेलाल और श्री बलदेव ने दोबारा कार्ड्स बाँटते हुए

पकड़ा। इस बार उसे पुलिस में गिरफ़्तार करवा दिया तथा उस मेडिकल स्टोर के लाइसेंस रद्द करने के लिए ड्रग कंट्रोलर को चिट्ठी लिखी।

अगले दिन अस्पताल के बाहर स्थित सभी दुकानदारों को मैंने चाय पर बुलाया और रोगियों के इस प्रकार के शोषण की प्रथा को बंद करने की अपील की। अन्यथा पुलिस कार्यवाही और दवा लाइसेंस रद्द करने जैसी कार्यवाही की चेतावनी भी दी।

इस प्रयोग के प्रभाव

सुधरने का कम-से-कम एक मौक़ा हर एक को मिलना चाहिए। लेकिन यदि कोई व्यक्ति इसके बावजूद गड़बड़ करे तो उसके साथ हमदर्दी रखना ग़लत है। इसी पर अमल करते हुये हमने इस लपके को गिरफ़्तार करवाया। प्रायश्चित्त के बाद भी उसी प्रकार की ग़लती करने का मेरे सामने यह एकमात्र उदाहरण है।

3. साथी का सिगरेट प्रेम

मेरे निकट साथी डॉ. विवेक अथैया सिगरेट का सेवन करते हैं। कई बार विभिन्न स्थितियों में मैंने उनकी सिगरेट छुड़वाने की कोशिश की लेकिन हर प्रयास के बाद नाकामी ही हाथ लगी। हालांकि उनके विवेक पर अब भी मुझे विश्वास है कि एक दिन वे सिगरेट अवश्य छोड़ेंगे।

4. वादे के अनुसार प्रायश्चित्त नहीं करना

कार पार्किंग में एक वकील साहब ने एक गार्ड के साथ हुई कहा-सुनी के बाद अपनी ग़लती मानी और प्रायश्चित्त में 'सेवा' की एक ड्यूटी देने का वादा किया। लेकिन कई बार याद दिलाने के बाद भी वे अपने प्रायश्चित्त के वादे के अनुरूप लावारिस रोगियों की सेवा में एक दिन का समय देने में विफल रहे।

5. चोरी की घटना

अस्थमा भवन में कार्यरत एक कर्मचारी ने अस्पताल की एक मशीन चोरी की। वहीं के एक एकाउंटेंट ने पैसों का ग़बन भी किया। इन दोनों ही घटनाओं की थाने में रिपोर्ट्स दर्ज करवाईं गईं। पुलिस कार्यवाही में मशीन के पैसों की भरपाई तो हो गई लेकिन एकाउंटेंट के मामले में पुलिस उदासीन रही। इन दोनों व्यक्तियों को अच्छा इंसान बनने की शिक्षा मैंने दी थी। उन्होंने आचरण में भी ईमानदारी दर्शाई थी लेकिन लालच में अंधे हो, वे चोर बन गए।

ऐसी अनेक घटनाए हुईं, जो गांधी मार्ग की अपवाद थीं। हालांकि ऐसी घटनाओं की संख्या अधिक नहीं थी।

इस प्रयोग के प्रभाव

अपवाद स्वरूप ऐसे कुछ लोग होते हैं, जिनके ऊपर गांधी मार्ग का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इन उदाहरणों से हताश न होकर लगातार प्रयासरत रहना ज़रूरी है।

■ ■ ■

21

यह समापन नहीं है

मैं रोज़ाना 200–300 लोगों से मिलता हूँ। बीमारी के अतिरिक्त सामान्य बातें भी होती हैं। एक आम धारणा है कि गांधीजी अच्छे इंसान थे और उनके द्वारा दिनचर्या में अपनाया गया रास्ता बहुत ही अच्छा है। लेकिन आज के युग में इसको अपनाया जाना मुमकिन नहीं है। मेरे मिलने वाले लगभग सभी दिल से चाहते हैं कि वे गांधी मार्ग पर चलें। हालांकि व्यावहारिक जीवन में अपनाने के प्रश्न पर अधिकांश लोग अपनी बेबसी प्रकट करते रहे हैं।

अपने व्यवहार से दूसरों पर पड़ने वाले असर का यदि मैं आकलन करूँ तो यही कहूँगा कि जो व्यवस्था सवाई मानसिंह चिकित्सालय में शुरू की थी, वह मेरे छोड़ने के बाद भी काफ़ी हद तक चल रही है। नशा छोड़ने का वादा जितने लोगों ने किया, क़रीब 60 प्रतिशत ने उसे निभाया। नई सुविधाएँ जैसे आर.ओ. का शुद्ध पानी, चार रुपयों में अच्छी चाय, काफ़ी, सूप, अक्षय पात्र का भोजन और अस्पताल के कमरों के नंबर अब भी बहुत अच्छी तरह से चल रही हैं। जिन लोगों ने मेरे समय में अपने तौर–तरीक़ों में बदलाव किया उनमें से क़रीब आधे लोग वापस अपने ढर्रे पर आ गए। बाक़ी लोगों ने इसको अभी तक अपना रखा है। भयमुक्त होकर कार्य करना, रोगी हित को केंद्र में रखना, अस्पताल के कार्य की चिंता घर के कार्य के समान करना जैसी बातों की व्यवहार में कुछ कमी आई है।

मेरा मानना है कि देश की आज की परिस्थिति में एक आम आदमी के लिए अपने कार्यस्थल में गांधी मार्ग अपनाना कठिन है। इसको अपनाने के लिए सबसे आवश्यक हैं ईमानदारी, सच्चाई और निडरता। जिन लोगों में ये गुण हैं, वे अपने कार्यालय में भी गांधी मार्ग अपना सकते हैं। अपनाने के बाद वे पाएँगे कि गांधी मार्ग अन्य रास्तों से कहीं अधिक सुगम और सफल है।

कार्यालय से अधिक महत्वपूर्ण है परिवार, जहाँ गांधी मार्ग बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो सकता है। परिवार का मुखिया अकसर अपने परिवार के साथ सच्चा, ईमानदार और निडर होता है इसलिए परिवार में गांधी मार्ग अपनाया जाना उपयोगी सिद्ध हो सकता है। आज से 10–20 साल पहले तक परिवार में अनुशासन लाने का तरीक़ा था, दंड। उद्दंड से उद्दंड बच्चा भी दंड के भय से अनुशासित रहता था।

संयुक्त परिवार का कोई भी बड़ा, छोटे सदस्य की ग़लती पर दंड देने का अधिकार रखता था। लेकिन **आज के अधिकांश परिवारों में माता–पिता भी दंड दे नहीं पाते और बच्चों की ग़लतियों को अनदेखा करते हैं। इससे बच्चों में निरंकुशता आ जाती है और कई बार माता–पिता कुंठित होकर रह जाते हैं। आज की ऐसी स्थिति में परिवार में अनुशासन लाने हेतु गांधी मार्ग को अपनाया जा सकता है। ग्लानि के साथ अपनी ग़लती मानना, दोबारा ग़लती नहीं करने का संकल्प और प्रायश्चित्त, इन तीन चरणों में मुखिया माता–पिता परिवार में ग़लती प्रबंधन सफलता से लागू कर सकते हैं।**

ग़लती निर्धारित करते समय मुखिया को स्वयं पर भी यही सिद्धांत लागू करना चाहिए। अपनी ग़लती को बड़ा और अन्य परिवार के सदस्यों की ग़लती को छोटा मानने का विचार यदि परिवार के मुखिया अपनाते हैं तो यह प्रणाली ज़्यादा प्रभावशाली होगी। इससे ग़लती करने वाले परिवारजन में ग़लती करने की आत्मग्लानि भी ज़्यादा होगी और वह ज़्यादा अच्छे तरीक़े से प्रायश्चित्त कर पायेगा। प्रायश्चित्त में कोई ऐसा काम किया जाए जिससे शिक्षा मिले, काम हो और आत्मबल बढ़े। गांधी मार्ग में ग़लती प्रबंधन का यह नायाब तरीक़ा है। कटुता को प्रेम में और आलोचक को मित्र बनाने में यह उपाय बेहद कारगर सिद्ध होता है।

इस पुस्तक का प्रकाशन बाबा हिरदाराम पुस्तक सेवा समिति, जयपुर के सहयोग से हुआ है, जिसके लिए मैं समिति का आभार व्यक्त करता हूँ।

■ ■ ■

22

आपका भी आभार

पुस्तक के प्रकाशन एवं प्रस्तुतिकरण में निम्नांकित स्वजनों एवं मित्रों का सहयोग भी उल्लेखनीय रहा। मैं इनका भी तहेदिल से आभार व्यक्त करता हूँ।

श्री अनुपम मिश्र
श्री लियाकत अली भट्टी
श्री धर्मवीर कटेवा
श्री जयदीप दुल्लड़
डॉ. सुरेश बोहरा
श्री सम्पत बच्छावत
श्री प्रदीप शर्मा
डा. जसवन्त गोयल
डॉ. रणधीर सिंह राव
डॉ. रविन्द्र सिंह राव
श्री अभिषेक सिंह
श्री चन्द्र प्रकाश
श्री हरीश करमचन्दाणी
श्री गजेन्द्र रिझवानी
श्री राजेन्द्र बोड़ा
श्रीमती कनीज़ भट्टी
डॉ विजय बेनीवाल
श्रीमती सीमा दुल्लड़
डॉ. सुषमा बोहरा
श्री बिरदीचन्द पोखरना
डा. राकेश पारीक
श्री राजेन्द्र चौधरी
डॉ. अजीत सिंह
डॉ. शीतू सिंह
डॉ. निष्ठा सिंह
डॉ. यश गोयल
श्री रत्न कुमार सांभरिया

■■■

लेखक का दृढ़ विश्वास है
कि चिन्तामुक्त जीवन एवं परिवार में
अनुशासन लाने के लिए गांधी मार्ग
एक अच्छा उपाय है।
डॉ. वीरेन्द्र सिंह ने
इसी के कुछ प्रयोग अपनी दिनचर्या में किए,
जिन्हें उन्होंने इस पुस्तक के माध्यम से
जन सामान्य तक पहुँचाने का उपक्रम किया है।
पुस्तक में दिए गये दृष्टांत सत्य हैं।

यह पुस्तक गांधी जी के दिखाये गये मार्ग के प्रयोगों की शुरूआत है, समापन नहीं। पुस्तक पढने के बाद यदि आप दैनिक जीवन में कोई बात अपनाते हैं अथवा प्रयोग करते हैं तो इससे मिले परिणाम हमें हमारी वेबसाइट www.drvirendrasingh.com अथवा ईमेल drvirendrasingh@yahoo.com पर अवश्य भेजें। आपके अनुभव बहुत से लोगों की प्रेरणा का स्त्रोत बनेंगे।

मैंने जब अपने परिवार जनों में प्रायश्चित्त पर आधारित ग़लती सुधार के तरीक़े को अपनाया तो पाया कि बिना कटुता उत्पन्न हुए, ग़लती सुधार का यह एक विलक्षण उपाय है।

डॉ. जवाहर टांक, डॉ. विजय लक्ष्मी टांक
विशेषज्ञ चिकित्सक, अमेरिका

डा. वीरेन्द्र सिंह ने अपने और अपने सहकर्मियों के शोधन के लिए गांधी मार्ग का सफल प्रयोग किया। पुस्तक इतनी रोचक है कि मैं इसे एक बैठक में ही आद्योपांत पढ़ गया।

डॉ. ज्ञान प्रकाश पिलानिया
पूर्व डी.जी.पी. राजस्थान एवं पूर्व राज्यसभा सदस्य

नारायण भाई देसाई की गांधी कथा की इबारत डॉ. वीरेन्द्र सिंह के हृदय में उतर गई और वे प्रयोग पर प्रयोग करने को प्रेरित हुए। गांधी कथा को जीवन में उतारने का यह प्रयोग इस किताब में मुखर हुआ है।

रमेश थानवी
चिन्तक एवं विचारक शिक्षाविद्

चिकित्सकों एवं सभी स्वास्थ्यकर्मियों में संवेदनशीलता विकसित करने के लिए यह पुस्तक काफ़ी उपयोगी हो सकती है। इसकी आज के समय में चिकित्सा पेशे में बहुत आवश्यकता है।

डॉ. एस.एस. अग्रवाल
प्रेसिडेन्ट (इलेक्ट), इंडियन मेडिकल एसोसिएशन

चिकित्सा अधिकारियों एवं आमजन को इस पुस्तक में उल्लिखित प्रयोगों से स्वतः ही समझ में आ सकेगा कि वे जहां जहां हैं, उस पद अथवा सम्पत्ति के मालिक नहीं ट्रस्टी हैं। पुस्तक से गांधी मार्ग की प्रासंगिकता और अधिक पुष्ट हुई है।

श्याम सुन्दर बिस्सा
सेवानिवृत्त आई.ए.एस.

यह पुस्तक उन शिक्षकों व अभिभावकों के लिये अतिमहत्वपूर्ण एवं लाभदायक है जो अपने युवा छात्रों और सन्तानों को सच्चाई तथा नैतिकता का रास्ता दिखाना चाहते हैं।

निशान्त सिंह

Best Wishes

From Wardha to South America, Shri Narayan Desai has narrated dozens of **Gandhi Katha** talks and thousands of people of all walks of life have listened to his Katha with rapt attention. Mahatma Gandhi's story is so full of happenings that are of interest to all kinds of people. And Shri Narayan Desai puts his soul into it and makes it all the more lively.

With anecdotes and music, to many listeners Gandhi Katha is good entertainment. To some others, it is a message for good living. There are also people, who say the Gandhi Katha helped them correct and improve some of the practices in life.

But, rare are persons like **Dr. Virendra Singh,** who not only introduced Gandhian principles in their own lives, but applied them into life experience that helped hundreds of needy people, especially in the field of health.

Gandhiji had great faith in nature cure. He believed that God and nature are the best doctors. In his concept, an ideal society will have no doctors at all. And the ideal doctor is one who will train his patients such that they will be so healthy that they need no doctors at all !

I hope **Dr. Virendra Singh's book, "GANDHI MARG-Ek Chikitsak ke Prayog"** will inspire doctors, along with others, to ***take the minimum from the society and give away to society the maximum that they can.*** **I also hope the book will help us live healthy.**

I congratulate **Dr. Virendra Singh** for writing such a beautiful book and wish the book all success in conveying Gandhiji's message to the common man.

Dr S N Subba Rao
New Delhi
December 8, 2014

BHRPS
पुस्तक सब के लिए
सामाजिक प्रतिबद्धता कार्यक्रम के तहत प्रकाशित
बाबा हिरदाराम पुस्तक सेवा समिति

ISBN : 978-81-929590-4-7
MRP 50/-